महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)
Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya
(A Center University Established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

एम.ए. समाजशास्त्र
पाठ्यक्रम कोड : एम.ए.एस.-015

प्रथम सेमेस्टर
पाठ्यचर्या कोड : 04
पाठ्यचर्या का शीर्षक : सामाजिक मानविक्य

दूर शिक्षा निदेशालय
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
पोस्ट- हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा - 442001 (महाराष्ट्र)
### मार्गदर्शन समिति

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रो.गिरीश्वर मिश्र</th>
<th>प्रो.आनंद वर्धन शर्मा</th>
<th>प्रो.कृष्ण कुमार सिंह</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>कुटुरपति</td>
<td>प्रतिकुलपति</td>
<td>प्रभारी निदेशक (दूर शिक्षा निदेशालय)</td>
</tr>
<tr>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### पाठ्यचय्य निर्माण समिति

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रो.आनंद वर्धन शर्मा</th>
<th>प्रो.एस.एन.चीधरी</th>
<th>प्रो.शीलजा दुबे</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रतिकुलपति</td>
<td>प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग</td>
<td>प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग उच्च शिक्षा उपकृष्ट संस्थान, भोपाल</td>
</tr>
<tr>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td>बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

### श्री अभिषेक त्रिपाठी

असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पादयक्रम संयोजक शिक्षा निदेशालय, म.ग.अं.हि.वि., वर्ष

### संपादन मंडल

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रो.एस.एन.चीधरी</th>
<th>प्रो.मनोज कुमार</th>
<th>डॉ.शंभू जोशी</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग</td>
<td>निदेशक, म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td>असिस्टेंट प्रोफेसर</td>
</tr>
<tr>
<td>बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल</td>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td>दूर शिक्षा निदेशालय, म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
</tr>
<tr>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td>म.ग.अं.हि.वि., वर्ष</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

### डॉ.मिथिलेश कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर म.ग.अं.हि.वि., वर्ष, म.ग.अं.हि.वि., वर्ष

### श्री अभिषेक त्रिपाठी

असिस्टेंट प्रोफेसर एवं पादयक्रम संयोजक दूर शिक्षा निदेशालय, म.ग.अं.हि.वि., वर्ष

### इकाई लेखन

<table>
<thead>
<tr>
<th>खंड-1</th>
<th>खंड-2</th>
<th>खंड-3</th>
<th>खंड-4</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>इकाई 1- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 1- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 1- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 1- डॉ. निलु रावत</td>
</tr>
<tr>
<td>इकाई 2- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 2- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 2- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 2- डॉ. निलु रावत</td>
</tr>
<tr>
<td>इकाई 3- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 3- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 3- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 3- डॉ. निलु रावत</td>
</tr>
<tr>
<td>इकाई 4- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 4- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 4- डॉ. निशियो राय</td>
<td>इकाई 4- डॉ. निलु रावत</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### कार्यालयीन एवं संपादकीय सहयोग

<table>
<thead>
<tr>
<th>श्री विनोद वेद्य</th>
<th>श्री अरविन्द कुमार</th>
<th>सु.श्री राधा</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सह. कुलसचिव, दू.शी. निदेशालय</td>
<td>टेक्निकल असिस्टेंट, दू.शी. निदेशालय</td>
<td>टांकण, दू.शी. निदेशालय</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>श्री समित सोनी</th>
<th>श्री गुड़दूर यादव</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>सॉफ्टवेयर सहायक, दू.शी. निदेशालय</td>
<td>कंप्यूटर ऑपरेटर, दू.शी. निदेशालय</td>
</tr>
</tbody>
</table>
शिक्षण उद्देश्य:
विद्यार्थी इस पाठ्यक्रम के अध्ययन के उपरांत निम्नलिखित को समझने में सक्षम हो सकेंगे—

- सामाजिक मानवशास्त्र की प्रकृति, क्षेत्र, विषय-वस्तु एवं मानवशास्त्र का अन्य विज्ञानों से संबंध को समझने में छात्र सक्षम होंगे।
- संस्कृति के तत्त्वों, उपदानों एवं सिद्धांतों को समझ सकेंगे। संस्कृति के सिद्धांत को समझने एवं समालोचना करने में सक्षम होंगे।
- धर्म, जादू एवं विज्ञान में अंतर को स्पष्ट कर सकेंगे। समाज में इनकी प्रासंगिकता को भी समझ सकेंगे।
- आदिव जनजातियों के वंश, गोत्र एवं युवागृह की कार्यपद्धतियों को समझने में सक्षम होंगे।
- जनजातियों के अर्थव्यवस्था एवं विनिमय व्यवस्था को समझ सकेंगे तथा इनकी वर्तमान समाज के संदर्भ में समालोचना भी सकेंगे।
- आदिव जनजातियों की परिवार, विवाह एवं नातेदारी व्यवस्था को समझ सकेंगे।
- भारतीय जनजातियों से परिचित होंगे एवं उनकी कार्यपद्धति से भी छात्र परिचित होंगे।

मूल्यांकन के मानदंड:
1. सत्रांत परीक्षा : 70% 
2. सत्ता आंतरिक मूल्यांकन : 30%
सामाजिक मानवविज्ञान

खण्ड (1) सामाजिक मानवशास्त्र की प्रकृति एवं क्षेत्र
इकाई : 1 मानवशास्त्र की परिभाषा, प्रकृति एवं क्षेत्र
इकाई : 2 सामाजिक मानवशास्त्र एवं उसकी विषयवस्तु
इकाई : 3 सामाजिक मानवशास्त्र का अन्य विज्ञानों के साथ संबंध

खण्ड (2) संस्कृति एवं परिवार
इकाई : 1 संस्कृति की प्रकृति, परिभाषा एवं मानवशास्त्रीय अर्थ
इकाई : 2 संस्कृति उपादान एवं संस्कृति के सिद्धांत
इकाई : 3 परिवार: अर्थ, परिभाषा, प्रकार एवं उत्पत्ति के सिद्धांत
इकाई : 4 नातेदारी: परिभाषा एवं प्रकार

खण्ड (3) आदिव समाज - I
इकाई : 1 धर्म, जादू, विज्ञान एवं टोटम
इकाई : 2 बेंश, गोंद एवं भ्रातुदल
इकाई : 3 युवागृह: संरचना एवं प्रकार्य
इकाई : 4 आदिव अर्थव्यवस्था

खण्ड (4) आदिव समाज - II
इकाई : 1 जनजाति: अर्थ, वर्गीकरण, वितरण एवं परिवर्तन
इकाई : 2 विवाह: परिभाषा, प्रकार एवं सिद्धांत
इकाई : 3 भारत की जनजातियाँ: भील, गोंद, संथाल, धार, खासी गारो, जयंतिका एवं नागा
इकाई : 4 जनजाति समस्याएँ एवं कल्याणार्थ योजनाएँ
### अनुक्रम

<table>
<thead>
<tr>
<th>क्र.सं.</th>
<th>खंड का नाम</th>
<th>पृष्ठ संख्या</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>खंड - 1 - सामाजिक मानवविज्ञान की प्रकृति एवं क्षेत्र</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई - 1 मानवविज्ञान: परिभाषा, विषय-वस्तु एवं क्षेत्र</td>
<td>4-23</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -2 सामाजिक मानवविज्ञान: प्रकृति एवं क्षेत्र</td>
<td>24-40</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -3 सामाजिक मानवविज्ञान का अन्य विषयों के साथ संबंध</td>
<td>41-62</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>खंड - 2 – संस्कृति एवं परिवार</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -1 संस्कृति की प्रकृति, परिभाषा एवं मानवशास्त्रीय अर्थ</td>
<td>63-75</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -2 संस्कृति उपादन एवं संस्कृति के सिद्धांत</td>
<td>76-93</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -3 परिवार: अर्थ, परिभाषा, प्रकार एवं उपरिक्ष के सिद्धांत</td>
<td>94-111</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -4 नातेदारी : परिभाषा एवं प्रकार</td>
<td>112-129</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>खंड - 3 – आदिम समाज - I</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -1 धर्म, जादू, विज्ञान एवं टोटम</td>
<td>130-156</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -2 वंश, गीत्र एवं भारतदल</td>
<td>157-171</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -3 युवागृह : संरचना एवं प्रकार</td>
<td>172-187</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -4 आदिम अर्थव्यवस्था</td>
<td>188-208</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>खंड - 4 – आदिम समाज - II</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -1 जनजाति: अर्थ, वर्गीकरण, वित्तण एवं परिवर्तन</td>
<td>209-225</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -2 विवाह: परिभाषा, प्रकार एवं सिद्धांत</td>
<td>226-246</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -3 भारत की जनजातियाँ: भील, गाँड, संधाल, धार, खासी गारो, जंगलिका एवं नामा</td>
<td>247-262</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>इकाई -4 जनजाति समस्याएँ एवं कल्याणार्थ योजनाएँ</td>
<td>263-283</td>
</tr>
</tbody>
</table>
खण्ड 1 सामाजिक मानवशास्त्र की प्रकृति एवं क्षेत्र
इकाई 1 मानवविज्ञान: परिभाषा, विषय-वस्तु और क्षेत्र
(Anthropology: Definition, Subject matter and Scope)

इकाई की रूपरेखा
1.1.0 उद्देश्य
1.1.1 प्रस्तावना (Introduction)
1.1.2 मानवविज्ञान क्या है? (What is Anthropology)
1.1.3 मानवविज्ञान का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Anthropology)
   1.1.3.1 मानवविज्ञान के बारे में आम गलतफहमी (Common Misconceptions about Anthropology)
1.1.4 मानवविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background of Anthropology)
   1.1.4.1 मानवविज्ञान में मूल सांस्कृतिक दृष्टिकोण
1.1.5 मानवविज्ञान की मुख्य शाखाएँ (Main Branches of Anthropology)
   1.1.5.1 सामाजिक-सांस्कृतिक मानवविज्ञान (Socio-Cultural Anthropology)
   1.1.5.2 शारीरिक/जैविक मानवविज्ञान (Physical/Biological Anthropology)
   1.1.5.3 पुरातात्विक मानवविज्ञान (Archaeological Anthropology)
   1.1.5.4 भाषीय मानवविज्ञान (Linguistic Anthropology)
1.1.6 मानवविज्ञान का क्षेत्र (Scope of Anthropology)
   1.1.6.1 शारीरिक/जैविक मानवविज्ञान का क्षेत्र (Physical/Biological Anthropology)
   1.1.6.2 सामाजिक- सांस्कृतिक मानवविज्ञान का क्षेत्र (Socio-Cultural Anthropology)
   1.1.6.3 पुरातात्विक मानवविज्ञान का क्षेत्र (Archaeological Anthropology)
   1.1.6.4 भाषीय मानवविज्ञान का क्षेत्र (Linguistic Anthropology)
   1.1.6.5 अनुप्रयुक्त और क्रियात्मक मानवविज्ञान (Applied and Action Anthropology)
1.1.7 सारांश (Summary)
1.1.8 बांध प्रश्न
1.1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.1.0 उद्देश्य
इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्वानों निम्नलिखित में सक्षम हो सकेंगे-

- मानवविज्ञान की परिभाषा एवं प्रकृति से परिचित होंगे।
- मानवविज्ञान के ऐतिहासिक परिदृश्य क्या है? यह कैसे विकसित हुआ? इससे परिचित होंगे।
- मानवविज्ञान की मुख्य शाखाओं से परिचित होंगे।
- विद्वानों मानवविज्ञान के क्षेत्र एवं विषय-वस्तु को को समझने और लिखने में सक्षम होंगे।

1.1.1 प्रस्तावना
यह इकाई मानवविज्ञान की परिभाषा, विषयवस्तु और क्षेत्र का पता लगाएगी। मानवविज्ञान के विकास और कार्यक्षेत्र को जानना एक महत्वपूर्ण विषय है। हम जानते हैं मानवविज्ञान कई चरणों में विकसित हुआ है। मानवविज्ञान क्या वर्तमान प्रकृति रात्रियों रात नहीं बनी अपिकु इसके लिए कई सैद्धांतिक बहसें हुई हैं और आज तक सभी मामलों की वस्तु समाप्त नहीं हुई है। तो, इन मुद्दों को समझने के लिए विद्वानों के लिए यह विषय से संबंधित इतिहास को भी जानना चाहिए और इसके साथ साथ आप यह भी समझेंगे कि अनुप्रयुक्त और क्रियात्मक मानवविज्ञान क्या है।

1.1.2 मानवविज्ञान क्या है? (What is Anthropology)
"एंट्रोपोलॉजी" शब्द दो ग्रीक शब्दों, "एंट्रो" (मानव) और "लॉगोस" (अध्ययन या विज्ञान) से लिया गया है। मानवविज्ञान, इस प्रकार, मानव का वैज्ञानिक अध्ययन है। निश्चित रूप से, यह व्युत्पत्ति संबंधी अर्थ बहुत व्यापक और सामान्य है। अधिक सटीक रूप से, मानवविज्ञान को "मानव के जैविक, सांस्कृतिक और सामाजिक कार्य और व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है" कहा जा सकता है। मानवविज्ञानी मानव प्रजाति और मानव व्यवहार के सभी पहलुओं, सभी स्थानों और हर अवस्था, प्राचीन समय के माध्यम से प्रजातियों की उत्पत्ति और विकास से लेकर वर्तमान स्थिति तक में रच रखते हैं।

मानवविज्ञान यह अध्ययन है जो यह ज्ञात करता है मानव होने का तत्त्व क्या है? मानवविज्ञानी मानव अनुभव के कई अलग-अलग पहलुओं को समझने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हैं, जिसे हम समझते हैं हम जानते हैं मानव होने का तत्त्व क्या है? मानवविज्ञानी मानव अनुभव के कई अलग-अलग पहलुओं को समझने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हैं, जिसे हम समझते हैं हम जानते हैं मानव होने का तत्त्व क्या है?
को जीवित रहने के लिए समान चीजों की आवश्यकता होती है, जैसे कि भोजन, पानी और साइनाच, लोगों
के इन जरूरतों को पूरा करने के तरीके बहुत अलग हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, सभी को खाने की जरूरत है, लेकिन लोग अलग-अलग खाद्य पदार्थ खाते हैं और अलग-अलग तरीके से भोजन प्राप्त करते हैं। इसलिए, मानवविज्ञानी यह देखते हैं कि लोगों के विभिन्न समूहों की भोजन कैसे मिलता है, इसे तैयार कैसे करते हैं?
और इसे साझा किन विधियों द्वारा करते हैं जिन में भोजन की क्रमवाई, उत्पादन की सामग्री के कारण नहीं है, अनुप्रयुक्त वितरण और सामाजिक समय के कारण, और अमल सेवा ने यह साबित भी किया की 20 वीं शताब्दी के सभी अकालों का यह कारण था जिसके के लिए उन्हें सीधे पुरस्कार मिला था। मानवविज्ञानी यह समझने की भी कोशिश करते हैं कि लोग सामाजिक रिकॉर्ड में बातचीत कैसे करते हैं (उदाहरण के लिए, परिवारों और दोस्तों के साथ) वे अलग-अलग तरीकों से कपड़े पहनते हैं और विभिन्न समाजों के लोगों से संबंध कैसे करते हैं? मानवविज्ञानी कभी-कभी इन तुलनाओं का उपयोग अपने समाज को समझने के लिए करते हैं। कई मानवविज्ञानी अपने समाजों में अर्थशास्त्र, स्वास्थ्य, शिक्षा, कानून और नीति (केवल कुछ विषयों के नाम पर) को देखते हुए काम करते हैं। इन जटिल मुद्दों को समझने की कोशिश करते समय, वे इस बात को ध्यान में रखते हैं कि वे जीवन जिब्रिज्युन, संस्कृति, संचार के प्रकार और अंतिम में मुन्नकु कैसे रहते थे।

मानवविज्ञान विविधताओं का अध्ययन है - यह हमें इस बारे में सिखाता है कि पर-सांस्कृतिक समय का अध्ययन है मानव होने का क्या मतलब है।

- अपने दृष्टिकोण को व्यापक बनाए और देखें की इससे समाजों में क्या सामान्य है और अपने समाज में क्या अलग है?
- सोचने के विभिन्न तरीकों और बातचीत के विभिन्न तरीकों को समझना सीखें।
- भौगोलिक स्थान, ऐतिहासिक और प्रागैतिहासिक समय में रहने के विभिन्न तरीकों का अनुभाग करें।
- अपनी वैष्णव नागरिकता को समझें।

मानवविज्ञान का लक्ष्य मानवविज्ञानी अनुसंधान के माध्यम से मानव स्थिति की हमारी सामूहिक
समझ को आगे बढ़ाना है, और मानव समाजों को हल करने के लिए इस समझ का उपयोग करना है।
मानवविज्ञान दुनिया के सभी भागों का अध्ययन है, उनका विकासवादी इतिहास, वे कैसे व्यवहार करते हैं, विभिन्न वातावरणों में कैसे अनुकूलन करते हैं, एक दूसरे के साथ संबंध कैसे करते हैं और समाजीकरण कैसे करते हैं। मानवविज्ञान का अध्ययन सामाजिक चालों (जैसे भाषा, संस्कृति, राजनीति, परिवार और धर्म) के साथ उन जैविक विशेषताओं से संबंधित है जो हमें मानव बनाते हैं (जैसे कि शरीर विज्ञान, आपूर्तिकी, पोषण संबंधी इतिहास और विकास)। चाहे भारत में धार्मिक समुदाय का अध्ययन हो, या अमेरिका में मानव
उद्धित्तावादी जीवाश्मों का, मानवविज्ञानी लोगों के जीवन के कई पहलुओं से संबंधित हैं: रोजमर्रा की
प्रथाओं के साथ-साथ अनुसार, समारोह और प्रक्रियाएं जो हम मनुष्यों को परिभाषित करती हैं। मानवविज्ञान द्वारा प्रस्तुत कुछ सामान्य प्रश्न हैं-

- विभिन्न समाज अलग और सामान किस प्रकार है?
- उद्दीक्षा कैसे हुआ, हम कैसे सोचते हैं?
- संस्कृति क्या है?
- क्या मानव समाज और संस्कृति सार्वभौमिक हैं?

लोगों के जीवन का विस्तार से अध्ययन करने के लिए समय निकालकर, मानवविज्ञानी यह पता लगाते हैं कि हमें विविध सम्मान क्या बनाता है। ऐसा करने में, मानवविज्ञानी का लक्ष्य हमारी खुद की और एक दूसरे की समझ को बढ़ाना है और एक नए प्रकार का मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना है।

1.1.3 मानवविज्ञान का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Anthropology)

शरीर विज्ञान, मनोविज्ञान, विकृति विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि कोई भी अन्य विषयों के विपरीत, जिनमें से प्रत्येक केवल एक पहलू तक ही सीमित है, मानवविज्ञान मानव के विभिन्न रूपों का अध्ययन करता है। शरीर विज्ञान केवल एक व्यक्ति के जीवन की प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। इसी प्रकार मनोवैज्ञानिक मनुष्य की मानसिक स्थितियों से संबंधित है। पैथोलॉजिस्ट मनुष्य की रोग स्थितियों या रोगों की जांच करता है। अर्थशास्त्र पैरूं प्रबंधन और मनुष्य की जहरों को पूरा करने या व्यापक अर्थ में, उत्पादन, वितरण और धन की खपत से संबंधित है। समाजशास्त्री सामाजिक समूहों और संस्थाओं और उनके अंतर्वेशों और विभिन्न सामाजिक समस्याओं पर चर्चा करते हैं। इस प्रकार, उपरोक्त वैज्ञानिक और सामाजिक विज्ञान में से प्रत्येक व्यक्ति के एक पहलू या विषेश व्यक्तियों का ही अध्ययन करता है। लेकिन मानवविज्ञानी मानव समूह पर अपना ध्यान रखते हैं, कुल मनुष्य का अध्ययन करते हैं, जिसमें दुनिया की विभिन्न नस्लें या लोगों के अतीत और समस्त दोनों शामिल हैं। क्लूकक्षेत्र के बाद हमें कि मनुष्य के विभिन्न पहलूों से निपटने वाले अन्य सभी वैज्ञानिक विषयों में से, मानवविज्ञान वह विज्ञान है जो मनुष्य के समग्र अध्ययन के सबसे कीर्त्य आता है। इसे एक समग्र या संशोधनात्मक अनुसंधान या समग्रता में मनुष्य का विज्ञान कहा जा सकता है।

मानवविज्ञान एक जैविक और एक सामाजिक विज्ञान दोनों हैं। यह एक ओर मनुष्य के साथ पशु साम्राज्य के सदस्य के रूप में व्यवहार करता है और दूसरी ओर समाज के सदस्य के रूप में मनुष्य के व्यवहार का अध्ययन करता है। मानव जाति के संचालनात्मक विकास और सम्प्रभुते के विकास दोनों का अध्ययन प्रारंभिक काल से किया जाता है। इसी तरह समकालीन मानव समूहों और सम्प्रभुताओं के साथ तुलनात्मक अध्ययन पर मानवविज्ञानी विशेष जोर देते हैं।
1. मानवविज्ञान की परिभाषाएँ

"मानवविज्ञान खुली सोच की मौग करता है जिसके साथ किसी को देखना और सुनना, विस्मय में रिकॉर्ड करना और उस पर आध्यात्म करना होगा जिसका कोई अनुमान नहीं लगा सकता"

मार्गेंड मीड (1901-1978) के अनुसार, “मानवविज्ञान का उद्देश्य दुनिया को मानव विविधताओं के लिए सुरक्षित बनाना है”

रूथ वनेडिक्ट (1887-1948) के अनुसार, “मानवविज्ञान विज्ञान का सबसे मानवतावादी और मानविकी का सबसे वैज्ञानिक विषय है”

एलफ्रेड क्रोबर (1876-1960) के अनुसार, मानवविज्ञान एक विषय न होकर विषयों के बीच एक सेतु के समान है। इसका कुछ भाग इतिहास, तो कुछ भाग साहित्य है, कुछ भाग प्राकृतिक विज्ञान में, तो कुछ भाग सामाजिक विज्ञान में, यह मान के भीतर जैविक क्रियाओं का मानव के बाहरी सामाजिक व्यवहारों के अध्ययन का प्रयास करता है, जहाँ मान को समग्र दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करता है।

एरिक कोल्फ (1923-1999) के अनुसार, “मानवविज्ञान व्यवहार के ऐसे सिद्धांतों को उजागर करना चाहता है जो सभी मानव समुदायों पर लगू होते हैं। मानवविज्ञान के लिए, शरीर के आकार और बनावट, रीति-रिवाज, कपड़े, भाषा, धर्म, और विश्वस्तित में विविधता-ही-किसी भी समुदाय में जीवन के किसी भी पहलू को समझने के लिए संदर्भ का एक प्रेम प्रदान करता है।” - अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिकल एसोसिएशन

1.1.3.1 मानवविज्ञान के बारे में आम गलतफहमी (Common Misconceptions about Anthropology)

विषय के रूप में मानवविज्ञान भारत में सामान्य लोगों के बीच अच्छी तरह से जाना नहीं जाता है। जैसा कि मानवविज्ञान अब तक माध्यमिक विद्यालय स्तर पर पढ़ाया नहीं जाता है, भारतीय आम जनता मानवविज्ञान को संग्रहालयों में होगा जाना पाती है, जिनका प्राथमिक उद्देश्य दुनिया म्यानसे है। परिणाम यह है कि मानवविज्ञान के बारे में कई गलत धारणाएं बनी हुई हैं। एक आम बात यह है कि मानवविज्ञान मुख्य रूप से ‘हड्डियों और जीवांसों’ के बारे में है। बे वास्तव में वैज्ञानिक और उदविकावादी मानवविज्ञान की विशेष दिलचस्पी है, जो हमारे पूर्वजों के शरीर, आहार और वातावरण के पुनर्निर्माण के लिए मानव अवशेष और जीवित स्थलों के साक्ष्य का उपयोग उन्हें समझने के लिए करते हैं। एक दूसरी गलत धारणा यह है कि सामाजिक मानवविज्ञान की विशेष रूप से 'दूरस्थ' क्षेत्रों में आदिवासी लोगों का अध्ययन करते हैं, जिनकी सांस्कृतिक प्रथाओं को 'असाधारण' माना जाता है। हालांकि यह सच है कि कुछ मानवविज्ञानी महानगरीय केंद्रों से दूर स्थानों में अपने शोध को अंजाम देते हैं, ऐसे कई
अन्य लोग हैं जो अपने घरेलू शहरों में, शहरी क्षेत्र में या औद्योगिक कार्यस्थल में भी अनुसंधान करते हैं। एक तीसरी गलत धारणा यह है कि मानवविज्ञान और पुरातत्व एक और एक ही हैं। उत्तरी अमेरिका में पुरातत्व को मानवविज्ञान की एक शाखा माना जाता है, जबकि ब्रिटेन में, पुरातत्व को मानवविज्ञान के लिए एक अलग संबंधित अनुसंधान माना जाता है। सामान्यतया, पुरातत्व निकट या दूर अतीत में लोगों और संस्कृतियों के बारे में है, और सामाजिक मानवविज्ञान वर्तमान लोगों और संस्कृतियों के बारे में है।

इस प्रकार 1.1.3 और 1.1.3.1 के अध्ययन के उपरांत हम यह निष्ठुर निस्काल निस्स्तान सकते हैं की “मानवविज्ञान, मानव के जैविक, सामाजिक और संस्कृतिक आयामों का मानव की उत्पत्ति से लेकर वर्तमान तक का वैज्ञानिक अध्ययन है।”

1.1.4 मानवविज्ञान कि ऐतिहासिक पृथ्वीभूमि (Historical Background of Anthropology)

ऐतिहासिक रूप से, मानवविज्ञान गैर-यूरोपीय लोगों के समाज और संस्कृतियों का अध्ययन करने के लिए, एक तुलनात्मक अनुसंधान के रूप में उभरा। यूरोपीय और अमेरिकी विद्वानों द्वारा अभ्यासी मानवविज्ञानीय अध्ययन किए गए थे जो ज्यादातर पर्यक्रम (आर्म्चेयर) मानवविज्ञानी थे और खोजकर्ताओं, यात्रियों, मिशनरियों और प्रशासकों द्वारा लिखित पुस्तकों को पढ़कर अपने सिद्धांतों का निर्माण किया। धीरे-धीरे, काफी संख्या में गैर-पश्चिमी मानवविज्ञानी अपने स्वयं के समाजों और संस्कृतियों का अध्ययन करने लगे और उन अध्ययनों को राष्ट्रीय निर्माण की प्रक्रिया से जोड़ने का प्रयास किया। परिवर्तन की इस प्रक्रिया में, जो एक बार औपनिवेशिक प्रशासन की सेवा करता था, औपनिवेशिक काल के बाद के नए राष्ट्राध्यक्षों का एक सहायक अंग बन गया।

1.4.1 मानवविज्ञान में मूल सैद्धांतिक दृष्टिकोण

मानवविज्ञान का मूल ढांचा, जो मानव जाति के तुलनात्मक अध्ययन पर टिका हुआ था, अपरिवर्तित रहा। मानवविज्ञानी के लिए, मानवजाति के तुलनात्मक अध्ययन का मतलब होमो सेपरियनस सेपरियनस (मानव का वैज्ञानिक नाम) के जैविक और संस्कृतिक विविधता के संदर्भ में है। मानवविज्ञानी द्वारा संस्कृतियों की तुलना पूरे विश्व में पूर्व-औद्योगिक आविष्कारीय और किसान समाजों तक सीमित थी। जहां तक तुलनात्मक अध्ययन की बात है यह कुछ सामान्यकरणों पर आने के लिए संस्कृति लक्षणों के साथ-साथ उनके परिमाणकरण और सांख्यिकी के अनुप्रयोग तक सीमित थी। लेकिन इस अभ्यास को करने के लिए मानवविज्ञानी की एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका में वितरित पूर्व-औद्योगिक समाजों के विभिन्न पहलुओं पर भारी मात्रा में आंकड़े एकत्र करना था। वास्तव में, मानवविज्ञानी में कार्यप्रणाली और आंकड़े संग्रह करने की प्रक्रियाएं पर्यक्रम (आर्म्चेयर) मानवविज्ञानी के समय से वर्तमान अवधि तक विकसित हुई हैं।
बहत शुभात में, एक या दो उल्लेखनीय अपवाद वाले मानवविज्ञानी, उन समाजों पर क्षेत्रकार्य के माध्यम से किसी भी प्रकार का प्रथम, अनुभवव्य अचलोक नहीं करते थे, जिसका अर्थन उन्होंने किया था।

इस अवधि के दौरान, जो लगभग 1850 से 1890 के बीच थी, मानव समाज पर पहला मानवशासीय सिद्धांत उगन हुआ। यह भव्य सिद्धांत, जिसे एकतरफा उदविकासवाद के रूप में जाना जाता था, ने कुछ सामाजिक-सांस्कृतिक चरणों के संदर्भ में सांस्कृतिक विविधता की व्याख्या की, जिसके माध्यम से सभी मानव समाजों ने इसे मान लिया गया था। इस भव्य सिद्धांत, जो डार्विनियन से प्रभावित था, के अनुसार लगभग सभी प्रमुख मानव समाजशासीय संस्थाओं के विकास को बहत पुर्तकों की संख्या के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रकार हमने रिस्टेशन और विवाह प्रणाली, संपत्ति के अधिकार, धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं, जादुई संस्कार, राजनीतिक संगठनों और सामाजिक तकनीकी-आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक पैटर्न के विकास की कहानियों को पाया।

उदविकासवाद के बाद, मानवविज्ञान में अगला सिद्धांत प्रसारवाद था जिसने एक केंद्र से संस्कृति के लक्षणों के संचरण की दृष्टि और प्रकृति के आधार पर मानव सांस्कृतिक विविधता को समझाने का प्रयास किया। प्रसारवादियों ने तर्क किया कि सांस्कृतियां भिन्न होती हैं क्योंकि उनमें केंद्र से प्राप्त लक्षणों के विभिन्न संस्थान और साथ ही कुछ अप्रवारित ऐतिहासिक दृष्टिकोणों के माध्यम से हुए संयोजन शामिल होते हैं। मानवविज्ञान के आंकड़ों संबंधित करने की प्रक्रियाओं ने हालांकि प्रसारवादी चरण के दौरान सुधार नहीं किया। उसी पुराने अभिलेखीय और द्वितीय संस्कारों को समझाता था जैसा कि उदविकासवादियों द्वारा किया गया था, (अमेरिकी प्रसारकों ने हालांकि कुछ फ़ील्डवर्क किया था) हालांकि पहले बड़े पैमाने पर फ़ील्डवर्क (प्रसिद्ध टोरेस ग्रेट अभियान) ब्रिटिश मानवविज्ञानी डब्ल्यू.एच.एर. रिवर्स के नेतृत्व में किया गया था। रिवर्स जिन्होंने अनेक वंशान्वित विधि का आविष्कार किया था, जो कि फ़ील्डवर्क उन्मुख मानवविज्ञान की बाद की पीढ़ी के लिए एक प्रमुख उपकरण बन गया। प्रसारवाद की अवधि 1890 में शुरू हुई और 20' शताब्दी के दूसरे दशक तक जारी रही।

मानवविज्ञान में सिद्धांत निर्माण का तीसरा चरण 1920 में ट्रेन ब्रिटेन में बी.मालिनोवस्की और ए.एडवर्डस्वर्क ब्राउन के नेतृत्व में शुरू हुआ। इस अवधि के दौरान विकसित होने वाले सिद्धांत को संरचना-प्रकाशित करने वाले एक प्रकार के उद्देश्यों के संचरण में नामित किया गया था जिसे अगले तीन दशकों के दौरान तीतक मानवविज्ञान के अंतरराष्ट्रीय रूप पर शासन किया। मानवविज्ञान में संरचना-प्रकाशित कृतियों के उद्देश्य का शासन दो महत्वपूर्ण विकास हुए थे: एक सैद्धांतिक और दूसरा कार्यगणा। आईए पहले पद्धतिगत विकास के बारे में चर्चा करते 1914-18 के दौरान ब्राउस्टाउफ मालिनोवस्की (इंग्लैंड में बसे एक पोलिश विद्वान) ने अन्तर्राष्ट्रीय जनजातीय के एक समूह के बीच प्रशांत महासागर (ट्रेन हुग्ली) में द्वीपों की एक श्रुतिला में अपने फ़ील्डवर्क का संचालन किया और एक अंतर-द्वीप उत्सव विनिमय (प्रसिद्ध 'कुला' की खोज) की जिसमें समुदायों के सामाजिक और सांस्कृतिक अनुसंधान को बनाए रखा। ट्रेन इंडस्ट्रीज के दैनिक जीवन में
मालिनोवस्की के पूर्ण विस्तार ने एक पद्धति को जन्म दिया, जिसे उन्होंने 'प्रतिभागी अवलोकन' की संज्ञा दी। प्रतिभागी अवलोकन ने मानवविज्ञान की लंबी अवधि के फील्डवर्क के माध्यम से एक छोटे समुदाय के अंदर नूतन सूत्र के दृष्टिकोण को समझने में सक्षम किया, जिसमें मूल निवासी के साथ बातचीत शामिल थी और मूल जीवन के लगभग हर पहलू का अवलोकन किया जाता था। मालिनोवस्की ने पद्धति के माध्यम से उपनन आंकड़ों की गुणवत्ता और शुद्धता ने माध्यमिक स्तर की जानकारी को पार कर लिया, जिसके साथ प्रारंभिक मानवविज्ञान किसी भी मानक से निपटते थे।

प्रतिभागी अवलोकन के साथ जिस तरह के मानवविज्ञानी एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमेरिका में काम कर रहे थे, स्थानीय लोगों के साथ उनके निकट संबंध थे। इस नए उपकरण के साथ, मानवविज्ञानी एक समुदाय के जीवन के हर पहलू का पालन करने के लिए उत्सुक थे और यह तब तक संभव नहीं था जब तक कि समुदाय का आकार एक या दो मानवविज्ञानी के लिए प्रभावी न हो जाए। समुदाय की तत्समिक और समाज के हर पहलू में मानवविज्ञानी की जांच ने मानवविज्ञान में एक सैद्धांतिक निर्देश को जन्म दिया। इस सैद्धांतिक निर्देश को समग्रता की संज्ञा दी गई, जिसके द्वारा मानवविज्ञानी ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों के परस्पर संबंध का उल्लेख किया। मानवविज्ञान में समग्रता का दर्शन जैविक पद्धति और समाजकृति (जेटाल्ट) मनोविज्ञान से लिया गया था। मानव समाज के निर्माण क्षेत्र, अर्थव्यवस्था, सामाजिक, धार्मिक, धरोहर और आंदोलनों में जोड़े जाते थे और यह एक दूसरे के शरीर के अंगों की तरह साझा में जुड़ा होता है। इस पद्धतिगत उपकरण और सैद्धांतिक अभिव्यक्ति के साथ संबंधित प्रक्रियाओं के संदर्भ में भिन्नता को समझाया और समाजों को भी इन अंतरंगतियों के आधार पर समूहों में वर्गीकृत किया।

### 1.1.5 मानवविज्ञान की मुख्य शाखाएँ (Main Branches of Anthropology)

अतीत में, एक मानवविज्ञानी ने जितना सम्बंध हो उतने विषयों को समेक्षित किया। आज, जैसा कि कई अन्य विषयों में है, इतनी जानकारी जमी हो गई है कि मानवविज्ञानी एक आयाम या क्षेत्र में ही सीमित होते हैं। इसी आधार पर मानवविज्ञान को चार मुख्य शाखाओं में विभाजित किया गया है। (देखें चित्र 1)
विभाग 1. मानवविज्ञान की मुख्य शाखाएँ

1.1.5.1 सामाजिक- सांस्कृतिक मानवविज्ञान (Socio-Cultural Anthropology)

सामाजिक- सांस्कृतिक मानवविज्ञान के अंतर्गत यह समझने का प्रयास किया जाता है कि विभिन्न स्थानों पे लोग कैसे रहते हैं और वह अपने आसपास की दुनिया को किस प्रकार समझते हैं। यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है की लोग एक दूसरे के साथ व्यवहार करने हेतु किस प्रकार नियम बनते हैं। यहां तक कि एक समाज के बीतर, लोग इस बात में एक मत करते हैं कि उन्हें कैसे बोलना, कपड़े पहनना, खाना या दूसरे के साथ व्यवहार करना चाहिए। सामाजिक- सांस्कृतिक मानवविज्ञानी सभी विचारों और दृष्टिकोणों को सुनते हैं ताकि वह समझ सके कि एक समाज में क्या क्या भीतरार्य हैं। सामाजिक-सांस्कृतिक मानवविज्ञानी अक्सर पाते हैं कि विभिन्न लोगों और संस्कृतियों के बारे में जानने का सबसे अच्छा तरीका उनके बीच रहना और समय बिताना है। वे अन्य समूहों के दृष्टिकोण, प्रथाओं और सामाजिक संगठन को समझने की कोशिश करते हैं, जिनके मूल्य और जीवन अपने स्वयं से बहुत अलग हो सकते हैं। उन्हें प्राप्त ज्ञान व्यापक स्तर पर मानव समझ को समृद्ध कर सकता है।

1.1.5.2 शारीरिक/जैविक मानवविज्ञान (Physical/Biological Anthropology)

शारीरिक/जैविक मानवविज्ञान के अंतर्गत मानव विविधता और मानव उद्भव का अध्ययन किया जाता है। शारीरिक/जैविक मानवविज्ञानी यह समझने की कोशिश करते हैं कि कैसे मनुष्य विभिन्न वातावरणों में अनुकूलन करते हैं, जीवाश्म और जलदी मृत्यु के क्या कारण होते हैं, और कैसे मनुष्य अन्य जानवरों से विकसित है। ऐसा करने के लिए, वे मनुष्यों (जीवित और मृत), अन्य प्राइमेट्स जैसे कि बंदर और चाँद, और
मानव पूर्वजों (जीवाभ्यस्म) का अध्ययन करते हैं। वे इस बात में भी रूचि रखते हैं कि जीव विज्ञान और संस्कृति हमारे जीवन को आकार देने के लिए कैसे काम करती है। वे दुनिया भर के मनुष्यों के बीच पाए जाने वाली समानता और अंतर को समझने में रूचि रखते हैं। इस क्रम के माध्यम से, जैविक मानवविज्ञानी ने यह दिखाया है कि, जबकि मनुष्य अपने जीव विज्ञान और व्यवहार में भिन्न होते हैं, फिर भी उनमें समानता ज्यादा और भिन्नता कम होती है। यह मानवविज्ञान की एक शाखा है जो मानव उपत्यका को उनकी उपत्यका, भेदभाव, विविधता और वितरण से संबंधित रहस्य का पता लगाने का प्रयास करती है।

1.1.5.3 पुरातात्विक मानवविज्ञान (Archaeological Anthropology)

मानवविज्ञान की यह शाखा अतीत में संस्कृति की उपत्यका, वृद्धि और विकास का पता लगाने का प्रयास करती है। अतीत के समय ताल्लुक इतिहास से तलाशी की उस अवधि से है जब आदमी ने भाषा की क्षमताओं को हासिल किया था, न केवल बोलने के लिए बल्कि अपने जीवन की कहानी को सिर्कार्ड करने के लिए लिखने का भी। इसके अंतर्गत पुरातत्वविद प्रागितिहासिक काल में लोगों का दाग के बाकी अवशेष द्वारा नामांकित करते हैं। 

पुरातत्वविद ने उन स्थानों से दृष्टिकोण, जानवरों और मिट्टी के अवशेष एकत्र किए हैं, और यह समझने का प्रयास करते हैं कि लोग ने पावन वातावरण का उपयोग कैसे किया है।
रूप से लिखित कैसे निर्मित और संरचित होती है। लेकिन भाषाई मानवविज्ञानी लिखित भाषाओं के साथ ही अलिखित भाषाओं का अध्ययन करते हैं। उनके बीच एक और महत्वपूर्ण अंतर यह है कि भाषाई मानवविज्ञानी उन विशेषताओं को महत्वपूर्ण मानता है जिन्हें भाषाविवि द्वारा नगण्य समझा जाता है। ये विशेषताएं हैं ज्ञान, विचार, मान्यता जो इन प्रणालियों से संबंधित हैं जो लोगों के दिमाग में विशेष समय पर विशेष विचार उपयोग करती हैं। इन विशेषताओं में से प्रत्येक सांस्कृतिक रूप से अनुकूलित है और इसलिए प्रत्येक संस्कृति और समाज के लिए अद्वितीय है। भाषाई मानवविज्ञानी दुनिया भर में लोगों से संवाद करने के कई तरीकों का अध्ययन करते हैं। ये इस बात में रूचि रखते हैं कि कैसे भाषा जुड़ी हुई है की हम दुनिया को कैसे देखते हैं और हम एक दूसरे से कैसे संबंधित हैं। इसका अर्थ यह हो सकता है कि भाषा अपने सभी विभिन्न रूपों में कैसे काम करती है और समय के साथ कैसे बदलती है। इसका मतलब यह भी है कि हम भाषा और संस्कृति के बारे में क्या विचार करते हैं और हम अपने जीवन में भाषा का उपयोग कैसे करते हैं। इसमें सबसे छोटे चूहे के आकार वाले वानर से शुरू होकर सबसे बड़े विशाल शरीर वाले गोरला तक, विकास के अपने विभिन्न चरणों में विभिन्न जीवन स्वरूप दिखाते हैं। प्राइमेट तक अध्ययन, शारीरिक मानवविज्ञान की पृष्ठभूमि में मनुष्य की स्थिति को समझने के लिए एक आंतरिक दृष्टिकोण देता है।

1.1.6 मानवविज्ञान का क्षेत्र (Scope of Anthropology)

मानवविज्ञान के निम्नलिखित क्षेत्र इस प्रकार हैं-

1.1.6.1 जैविक/शारीरिक मानवविज्ञान का क्षेत्र

जैसा की 1.1.5.2 में यह समझा गया है कि शारीरिक/जैविक मानवविज्ञान के अंतर्गत मानव विविधता और मानव उद्विकास का अध्ययन किया जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु शारीरिक मानवविज्ञानी निम्नलिखित क्षेत्रों में कार्य करते हैं।

I. प्राइमेटोलॉजी: यह स्तनधारी प्राइमेट समूह का वैज्ञानिक अध्ययन है। मानव जो मानवशासी अध्ययन का केंद्र है, वह प्राणी जगत के आंदोल प्राइमेट के अंतर्गत आता है। प्राइमेट, माइक्रोसीबस जैसे सबसे छोटे चूहे के आकार वाले वानर से शुरू होकर सबसे बड़े विशाल शरीर वाले गोरला तक, विकास के अपने विभिन्न चरणों में विभिन्न जीवन स्वरूप दिखाते हैं। प्राइमेट का एकीकृत अध्ययन, शारीरिक मानवविज्ञान की पृष्ठभूमि में मनुष्य की स्थिति को समझने के लिए एक आंतरिक दृष्टिकोण देता है।

II. इथनोलॉजी: यह मानव विविधता का अध्ययन है। दुनिया में सभी जीवित मानवों को अलग-अलग समूहों में वर्गीकृत किया जाता है जिन्हें मोटे तीर पर नस्त्र के रूप में जाना जाता है। इन्हें अब मेंडलियन पौष्पीकरण के रूप में समझा जाता है, जो एक सामाजिक जीव पूर्त साझा करने वाले मानवों
का एक इन्सिडिंग समूह है। यह नस्लीय समूहों की प्रकृति, गठन और भेदभाव की व्याख्या करने का भी प्रयास करता है।

III. मानव जीवविज्ञान: यह मनुष्य के ठोस जैविक सिद्धांतों और अवधारणाओं से संबंधित है। यह सांस्कृतिक उपलब्धि के प्रभाव के कारण अन्य जानवरों के जीव विज्ञान से भिन्न है। यह संस्कृति से अन्य जीव विज्ञान के संबन्धित है क्योंकि संस्कृति, कभी-कभी, जैविक प्रभाव भी डालती है। शारीरिक मानवविज्ञानी मनुष्य के इस जैविक विशेषता, उनके क्रान्तिक विकास और समय के साथ संरचना में परिवर्तन को समझने का प्रयास करता है।

IV. पुरामानवविज्ञान: यह शारीरिक मानवविज्ञान की शाखा है जो मानव जाति के जैविक इतिहास के प्रलेखन से संबंधित है। वे पृथ्वी की विभिन्न परतों से एकत्रित जीवाश्म साक्ष्य पर काम करते हैं। यह मानव और गैर-मानवीय लक्षणों के बीच की कड़ी को फिर से जोड़ने का प्रयास करता है जो इतने लंबे समय से खोए हुए हैं। वे विभिन्न श्लोकों से प्राप्त जीवाश्म अवशेषों का मूल्यांकन करते हैं और अपनी स्थिति और उद्देश्यवादी महत्त्व को स्पष्टित करते हैं।

V. मानव आनुवंशिकी: आनुवंशिकी विज्ञान में मिले लक्षणों से संबंधित है। माता-पिता और उनकी संतानों के बीच एक आनुवंशिक संबंध है। वह विज्ञान की प्रवृत्ति जिसमें माता-पिता के लक्षण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं उसे आनुवंशिकता कहते हैं। मनुष्य की उत्पत्ति और विकास को जानने के लिए आनुवंशिकता और उसके तंत्र को अच्छी तरह से समझ जाना चाहिए मानव आनुवंशिकी जैविक मानवविज्ञान की एक विशेष शाखा है जो मानवों में विभिन्न लक्षणों की आनुवंशिकता के तंत्र को प्रकट करती है।

VI. पोषण संबंधी नृत्यविज्ञान: यह मानव के पोषण संबंधी दृष्टिकोण और विकास से संबंधित है। किसी देश की जनसंख्या को उचित विकास और वृद्धि की आवश्यकता होती है विकास, हालांकि, दो कारकों आनुवंशिकता और पर्यावरण पर निर्भर है। शारीरिक मानवविज्ञान की यह शाखा मानवों के साथ-साथ इन दोनों कारकों के प्रभाव से भी संबंधित है।

VII. चिकित्सा नृत्यविज्ञान: यह रोग के स्वरूप और मानव समाजों पर उनके प्रभाव का अध्ययन करता है। चिकित्सा मानवविज्ञानी लोगों के करीबी अध्ययन और उनके हीन-के तरीके के माध्यम से सामाजिक-सांस्कृतिक तथा साथ-साथ एक आबादी के भीतर रोग के आनुवंशिक या पर्यावरणीय निर्धारकों को प्रकाश में लाने का प्रयास करता है। यह मानव समाजों में विभिन्न रोगों का मुकाबला करने में बहुत प्रभावी साबित होता है।

VIII. शरीरिक्रिया नृत्यविज्ञान: यह शाखा मानव शरीर के आंतरिक अंगों के साथ उनके जैव-रासायनिक गठन को समझने का कार्य करती है। यह इस बात से भी संबंधित है कि मनुष्य की शरीरिक्रिया बाहरी
कारकों जैसे कि जलवायु, भोजन की आदत आदि के साथ कैसे अनुकूलन करती है। इसके अलावा, यह मनुष्य और अन्य प्राइमेट्स में जैव-भाविक विश्वासात्मक विकास समय का अध्ययन करता है।

IX. व्यापारीक नृविज्ञान: यह शरीर के अंगों की समानता और अंतर को समझने के लिए होमिनिड्स और गैर-होमिनिड्स की कंकाल संरचना से संबंधित है। ज्ञान यह शाखा अपराधियों का पता लगाने के साथ-साथ उनके जैविक अवशेषों के माध्यम से यविक्षिप्तियों की प्रकृति और स्थिति की पहचान में बहुत आग्रही है।

X. दंत मानवविज्ञान (डेंटल एंथ्रोपॉलॉजी): ज्ञान की यह शाखा दंत और उसके पेटर्स से संबंधित है। दंत शरीर के आकार के साथ-साथ भोजन की आदत, और संबंधित व्यवहार स्वरूप ज्ञात करने में मदद प्रदान करते हैं। दंत आकारिक हमें मानव उद्विकास, विकास, शरीर आकृति विज्ञान, आनुवंशिक विशेषताओं को समझने में मदद करती है।

XI. मानव वृद्धि और विकास: यह शारीरिक मानवविज्ञान के लिए रूप का एक और क्षेत्र है जिसमें विकास के जैविक तंत्र के साथ-साथ विकास प्रक्रिया पर पर्यावरण के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। अंद, शारीरिक मानवविज्ञानी बीमारी, प्रदूषण और विकास पर गरीबी के प्रभावों का अध्ययन करते हैं। जीवित मनुष्यों में स्वस्थ विकास के हामॉनल, आनुवंशिक और शारीरिक आधार के बिस्तुत अध्ययन हारे पूर्वजों के विकास स्वरूप की समझ और आज के बच्चों के स्वस्थ्य की समझ में योगदान करते हैं।

XII. मानवविज्ञान (एंथ्रोपोमेट्री): यह मापन का मानवविज्ञान है। यह अध्ययन न केवल उद्विकास के माध्यम से क्रमिक मानव विकास के अध्ययन में और नक्कल भेदभाव स्वरूप को समझने में उपयोगी है, बल्कि जीवन के दिन-प्रतिदिन के तरीके में भी सहायक है जो विशेष रूप से मानव शारीरिक रूपों से संबंधित है।

XIII. एपोनोमी: शारीरिक मानवविज्ञान की यह शाखा स्वैच्छिक शरीर के आयामों और मनुष्य द्वारा संचालित होने वाली मशीन के डिजाइन से संबंधित है। ज्ञान की यह शाखा इस तथ्य से भी बहुत महत्वपूर्ण है कि लोगों के कई समूह शरीर के आकार में भिन्न होते हैं जिनका कारण विभिन्न जैविक और पर्यावरणीय कारक होते हैं।

XIV. जनसंख्याकी: यह जनसंख्या का विज्ञान है। यह प्रजनन और मृत्यु दर से संबंधित है। ये दो कारकों आनुवंशिकता और पर्यावरण से प्रभावित हैं। जैसा कि यह विकास, उष्ण, लिंग संरचना, स्थानिक वितरण, जनसंख्या की उर्ध्वता और मृत्यु दर के अलावा प्रजनन जैसे लक्षणों से संबंधित है, यह स्थानाधिक रूप से शारीरिक मानवविज्ञान की एक विशेष शाखा बन जाता है।
XV. इथोलोजी: यह पशु व्यवहार का विज्ञान है। अन्य पशुओं के व्यवहारों के अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों का उपयोग मानव व्यवहार की मूल पृथ्वी को समझाने और यह बताने के लिए किया जा रहा है कि विभिन्न युगों में मानव पूर्वजों ने कैसे कार्य किया होगा।

1.1.6.2 सामाजिक/सांस्कृतिक मानविवाद का क्षेत्र

I. आधिकारिक मूल्यांकन: उपयोग, खपत, वितरण और विनियम आधिकारिक लेनदेन और इसकी प्रक्रियाओं की बुनियादी संरचनाएं हैं। आधिकारिक मानविवानी इन गतिविधियों पर मुख्य रूप से और-संबंध और आदिव समाज में ध्यान केंद्रित करते हैं। वे औपचारिक आदान-प्रदान सहित आदान-प्रदान के तरीकों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। पारस्परिकता और पुनर्वितरण की अवधारणा यहां महत्वपूर्ण हैं। व्यापार और बाजार प्रणालियों की प्रकृति का भी अध्ययन किया जाता है। समाजों में आधिकारिक विकास और विकास की प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है। कुछ विद्वानों का तर्क है कि मनुष्य की आधिकारिक गतिविधियों का अलावा में अध्ययन नहीं किया जा सकता है, लेकिन उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में उन सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों पर जोर दिया जाता है जो प्रत्येक समाज में आधिकारिक गतिविधियों को प्रभावित और प्रभावित करते हैं।

II. राजनीतिक मूल्यांकन: यह राजनीतिक प्रक्रिया की सर्वव्यापकता पर ध्यान केंद्रित करता है और सफल समाजों में वैध प्राधिकरण, कानून, न्याय और प्रतिबंधों के कार्य, सत्य और नेतृत्व को समझने का प्रयास करता है। यह दुनिया के समाजों और राष्ट्रों और जरिया समाजों के बीच उभरती राजनीतिक प्रक्रियाओं के बीच अंतर और समानता पर आधारित राजनीतिक संरचनाओं के ताइपोलॉजी में मानवशासीय वृद्धिकोण पर केंद्रित है। इसके अलावा, यह राजनीतिक संस्कृति और राष्ट्र निर्माण प्रक्रियाओं का भी अध्ययन करता है।

III. मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन: यह मनोवैज्ञानिक लक्षणों में पारसांस्कृतिक विविधताओं का अध्ययन है। यह मनुष्य के मनोवैज्ञानिक, व्यवहारिक और व्यक्तिगत वृद्धिकोणों का अध्ययन करता है। इसे मनोविज्ञान और सामाजिक-सांस्कृतिक मानविवाद के बीच अंत:विषय वृद्धिकोण के रूप में विकसित किया गया है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक मानविवादी इन प्रक्रिया में बहुत रुचि रखते हैं जिसके द्वारा संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी हस्तांतरित होती है।

IV. पारिस्थितिक मानविवाद: पारिस्थितिकीय शब्द का तत्त्व पर्यावरण और जीव के बीच संबंधों की समग्रता से है। यह मानव और उनके पर्यावरण के बीच के संबंध से संबंधित है। यह विभिन्न संस्कृतिक तरीकों की व्याख्या में पर्यावरण की अवधारणा का उपयोग है और संस्कृतिक समूहों की विविधता भी है। संस्कृतिक व्यवहार और पर्यावरण से संबंधित दो मुख्य विचार निर्धारित है और आधिकारिक निर्धारित विचार और आधिपत्यवाद जिसे पर्यावरणवाद भी कहा जाता है, कहता है कि पर्यावरण
सांस्कृतिक प्रथाओं को निर्धारित करता है जबकि आधिपत्यवाद इससे इनकार करता है और मानता है कि सांस्कृतिक व्यवहारों पर भ्रम को निर्धारित करने के बजाय पर्यावरण उन्हें सीमित करता है। यह मानव और उनके पर्यावरण के बीच के संबंध से संबंधित है। यह विभिन्न सांस्कृतिक तत्वों की उत्पत्ति और सांस्कृतिक समूहों की विविधता दोनों की व्याख्या में पर्यावरण की अवधारणा का उपयोग करता है। यह सांस्कृतिक समूहों को समझने का भी भ्रम करता है। यह मानव समाज पर पर्यावरण के सापेक्ष प्रभाव को समझने का भ्रम करता है और इसका उपयोग विभिन्न समाजों द्वारा कैसे किया जाता है। एंथ्रोपोलॉजी में पारिस्थितिक दृष्टिकोण पहली बार 1930 के दशक में टीवड़ारा अपनी सबसे महत्वपूर्ण अवधारणा cultural ecology के माध्यम से व्यक्त किया गया था, जिसे मानवता दी थी कि सांस्कृति और पर्यावरण अलग-अलग क्षेत्र नहीं हैं, लेकिन एक इंटरलक्स परस्पर क्रिया या परस्पर विशेष कार्य-कारण में शामिल हैं।

V. एथनो-इकोलॉजी: यह मानवशास्त्रीय अध्ययन का एक विशेष उप-क्षेत्र है जो मानवों को उनके क्षुद्र पर्यावरण के अनुप्रयोग से संबंधित है।

VI. नगरीय मानवविज्ञान: शहरी मानवविज्ञान वह दिनों में मानवविज्ञान में अध्ययन के एक विशिष्ट क्षेत्र के मूल में विकसित हुआ। यह शहरीकरण, गरीबी, शहरी क्षेत्र, सामाजिक संबंधों और नवजागरण के मुद्दों से संबंधित सामाजिक मानवविज्ञान का एक उपयोग है। यह क्षेत्र 1960 और 1970 के दशक में समक्षित हो गया है। हालांकि कुछ मानवशास्त्रियों ने इस शीर्ष को शैक्षिक तौर पर जातीय आबादी का अध्ययन किया, शहरी मानवविज्ञान वास्तव में 1967 से विशेष अध्ययन के रूप में शुरू किया गया था जब संयुक्त राज्य के कुछ शहरों में दो दोहरी थे। शहरी मानवविज्ञानी समकालीन शहरों में शहरी सांस्कृतिकों के अध्ययन के लिए मानवविज्ञान की अन्तर्तिक विशेषताओं को लाने की कोशिश कर रहे हैं। शहरी मानवविज्ञान मानवविज्ञान से भूल प्रभावित हैं, विशेष रूप से शिकागो स्कूल ऑफ सोशियल विज्ञान टूल ऑफ अर्बन सोशियोलॉजी। सामाजिक और मानवविज्ञान के बीच पारंपरिक अंतर यह था कि मानवविज्ञान में पारंपरिक रूप से सभ्य आबादी के अध्ययन के रूप में कल्याण की गई थी, जबकि मानवविज्ञान को आदिम आबादी के अध्ययन से संबंधित था।

VII. धर्म का मानवविज्ञान: लोगों में धर्म की उत्पत्ति के संबंध में कई सिद्धांत हैं। कुछ प्रमुख सिद्धांत एनिमिज्म, एनिमेटिज्म, मानवविज्ञान और आदिम एक्सप्रेशनवाद हैं। मनुष्य और प्राकृति के बीच अंतर के बारे में लोगों की धारणाओं का अध्ययन सबसे पहले किया जाता है। प्राकृतिक शक्ति और सुप्रा-प्राकृतिक शक्ति में विवाद गैर-साक्षर और किसान समाजों के बीच अनुभवों और समारोहों संहित धार्मिक परंपराओं के संचालन का विस्तार से अध्ययन किया जाता है। धर्म के क्षेत्र में वर्तमान
और कुलदेवता जैसे व्यवहारों की भी जानच की जाती है। जादू, धर्म और विज्ञान के बीच मतभेद पर चरचा और बहस की जाती है।

VIII. इथनोलोजी: इथनोलोजी, सांस्कृतिक मानवविज्ञान के तहत अध्ययन का एक और क्षेत्र है। इसने 1840 में एक मान्यता प्राप्त शाखा के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज की और आगे सी वर्षों के दौरान यह बहुत विकसित हुई। यह दुनिया की संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन करता है और संस्कृति के सिद्धांत पर जोर देता है।

IX. नृजातिविद्या: एक सांस्कृतिक मानवविज्ञान के लिए विभिन्न संस्कृतियों और सामाजिक-सांस्कृतिक प्रणालियों को निर्देशित करने वाले सिद्धांतों को जानने के लिए नृजातिविद्या अध्ययन आवश्यक है। तथ्य की बात के रूप में नृजातिविद्या अध्ययन के माध्यम से एक आंकड़ा पर तय की व्याख्या करता है, उन्हें वर्गीकृत करता है और मानव की प्रकृति के संबंध में सिद्धांतों का निर्माण करता है। नृजातिविद्या व्यवहार के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अवलोकन के माध्यम से दुनिया के जीवित लोगों की संस्कृतियों का अध्ययन है। नृजातिविद्या नस्ल का अध्ययन नहीं है, जो शारीरिक मानवविज्ञान का काम है।

X. कला, संगीत, मनोरंजन: अपनी जातिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जहरियों को पूरा करने के लिए प्राकृतिक, सामाजिक और अलौकिक वातावरणों को अपनाने से मनुष्य ऐसी अन्य गतिविधियों को करना चाहता है, जिससे उसे कुछ संतुष्टि और सुकून मिले। इतनी ही मनुष्य ने कला और मनोरंजन जैसे गीत और नृत्य, लोक कथाएँ, कविता, नाटक, कला और कई अन्य वैदिक कलाकृतियों का निर्माण किया। जीवन के स्तर को सुधारने के दृष्टि से मनुष्य नैतिकता और जीवन के मूल्यों जैसे आध्यात्मिक काययों में लग जाता है। तो सांस्कृतिक मानवविज्ञान में तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए ये उप विषय शामिल हैं।

XI. लोक-साहित्य: लोक-कथाओं को सांस्कृतिक मानवविज्ञान की शाखाओं में से एक माना जा सकता है। लेकिन इसे भी एक अलग अनुशासन माना गया है। यह एक विज्ञान है 'जो सभ्य लोगों में पुरातन मान्यताओं और रीति-रिवाजों के अस्तित्व से संबंधित है। यह आम लोगों के विचारों, मान्यताओं, परंपराओं, अंधिवासों और पूर्वांग्रह से जुड़ी प्राचीन परंपराओं और रीति-रिवाजों से जुड़ी हर चीज का अध्ययन करता है। लोक कथाएँ भी गीत, कविताओं, मिथक, कहावतें, पहेलियाँ, लोक संगीत और लोक नृत्य के साथ-साथ लोक नाटक भी लोकगीतों के क्षेत्र से संबंधित हैं'।
1.1.6.3 प्रागैतिहासिक मानव विज्ञान

I. जीवावशिष्यविज्ञान: पेलियोन्टोलॉजी नामक एक और वैज्ञानिक अनुशासन है जो प्रागैतिहासिक साथ निकटता से जुड़ा हुआ है और अपने जीवावशिष्य रूपों से विविध नस्ल पर अध्ययन करने में सहायक है। यह हमें बताता है कि कैसे आधुनिक नस्ल उन विविध जीवावशिष्य नस्ल से विकसित हुई है।

II. प्रौद्योगिकी: अपनी इच्छाओं को पूरा करने और प्राकृतिक वातावरण के साथ तालमेल बिठाने के लिए मनुष्य को कुछ भौतिक वस्तुओं जैसे उपकरण, धार्मिक, बर्तन, कपड़े, मकान, डेंगी आदि बनाने पड़ते थे, इसे भौतिक संस्कृतियों का इजलाम जाता है। लोग भौतिक संस्कृति की इन वस्तुओं को बनाने की तकनीकों के अध्ययन को प्रौद्योगिकी के रूप में जाना जाता है। अतीत में संस्कृति के इस पहलू का अध्ययन प्रागैतिहासिक पुरातत्त्व की मदद से किया जा रहा है।

III. नृजातीपुरात्ति: नृजाती शब्द सामाजिक सांस्कृतिक विशेषताओं द्वारा प्रतिविधि समूह को संदर्भित करता है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन मानवविज्ञान का विषय है, जबकि एक निष्ठि समय में लोगों के जीवन के कूट तरीके का वर्णन अध्यात्मक आदि मनुष्य अधिक अनुभव करते हैं। पुरातत्त्व वह मानवविज्ञान की शाखा है जो संस्कृतियों के ऐतिहासिक पुनर्निर्माण से संबंधित है जो अंत मौजूद नहीं हों। यह अपनी भौतिक विशेषताओं में मानव अतीत को फिर से संगठित करने में मदद करता है जिसमें लोग कैसे रहते हैं और पूजा करते हैं, उन्होंने कैसे बनाया, उनकी कलाएँ, कपड़े कुशल आदि शामिल हैं। यह मनुष्य के प्रागैतिहासिक पर विषय सामग्री प्रदान करता है जिसके बारे में कोई लिखित रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है। इसका संबंध मनुष्य के सभी भौतिक अवशेषों से है। इस प्रकार, मानवविज्ञान का अध्ययन करने के लिए पुरातत्त्व का उपयोग अनिवार्य हो जाता है। यही कारण है कि इस शाखा को नृजातीपुरात्ति के रूप में जाना जाता है।

1.1.6.4 भाषाई नृविज्ञान

I. इथनोलिंग्विस्टिक्स (Ethnolinguistics): भाषाई मानवविज्ञान यह शाखा अत्यधिक विशाल है। इथनोलिंग्विस्टिक्स (कभी-कभी सांस्कृतिक भाषाविज्ञान कहा जाता है) भाषाविज्ञान का एक क्षेत्र है जो भाषा और संस्कृति के बीच के संबंध का अध्ययन करता है, और जिस तरह से विभिन्न जातीय समूह दुनिया का अनुभव करते हैं। यह मानवविज्ञान और भाषा विज्ञान के बीच संयोजन है। मानवविज्ञान एक संपूर्ण समुदाय के जीवन के तरीके को संदर्भित करता है, अर्थात्, सभी विशेषताएं, जो एक समुदाय को दूसरे से अलग करती हैं। वे विशेषताएं किसी समुदाय या समाज के संस्कृतिक पहलुओं को बनाती हैं। यह दुनिया के विभिन्न मानव समूहों की मृत और जीवित भाषाओं और
दूर िशा िनदे

mahabhippanditabhavskaya

महामानव गांधी अंतररात्री िविवालय

एम.ए. समाजशास्त्र

दूर िशा िनदे

mahananda

महामानव गांधी अंतररात्री िविवालय

एम.ए. समाजशास्त्र

बोलियों का अथवान है। मानवविज्ञानी इन्हें अथवान करने भाषाओं की उत्पति और विकास
और उनके अंतरियों का पता लगाने की कोशिश करता है। फिर उन्हें वर्गीकृत किया जाता है।
भाषविविध मानवों के अतिरिक्त और उनकी संस्कृति के प्रसार का अभाव करने में भी मदद करता है।
अमेरिकी विश्वविद्यालयों में इन्हें लिंगस्ट्रक्टग्राफ के स्वतंत्र विभागों को स्थापित करने की प्रवृत्ति बढ़
रही है। एक विज्ञान के रूप में भाषा का अथवान मानव विज्ञान से कुछ पुराना है। दोनों विषयों को
मानवविज्ञान क्षेत्र के शुरुआती दिनों में निकटता से जोड़ा जाता है, जब मानवविज्ञानियों ने अलिखित
भाषाओं का अथवान करने के लिए भाषा विज्ञान की मदद ली। भाषा के निपटने और पर्योग
में सूचना सूचना के लिए दिया गया है। हालांकि, प्रीनलिंड के इन्स्ट्रक्ट वक्ताओं के कार्यकर्ता
के लिए नामक धारण, भौगोलिक स्थलों जैसे नदी प्रणाली और तट पर किसी दृष्टि पर आधारित
है। इसी तरह, युरोप में कार्यकर्ता के विचार का अभाव है, जिसे प्राकृत भौगोलिक
विशेषता, क्लॉनिकल नदी के संबंध में खुद को उन्मुख करते हैं।

1.1.6.5 अनुप्रयोग और क्रियाव्रूप मानवविज्ञान (Applied and Action Anthropology)

मानवविज्ञान के विभिन्न अनुप्रयोग हैं। नीचे उल्लेखित इसके कुछ अनुप्रयोग इस प्रकार हैं-

1. मानवविज्ञान (एपोमेट्री): मानवविज्ञान (एपोमेट्री) शरीर के विभिन्न अंगों को मापने का विज्ञान
है। यह शारीरिक मानवविज्ञान का एक अनंतार्घ्य हिस्सा है, और इसकी मदद से शरीर के अंगों के
विभिन्न मापों को लिया जाता है ताकि अंगों के अनुपात का पता चल सके। इस ज्ञान के साथ
शारीरिक मानवविज्ञान हवाई जहाज, रेलवे, क्लास रूम, कार्यालयों आदि में बैठने की व्यवस्था के
संबंध में सलाह दे सकते हैं। अपराधियों का पता लगाने में शारीरिक मानवविज्ञान भी उपयोगी है। पैर
और हाथ के निशान के ज्ञान से अपराधियों का पता लगाना आसान हो जाता है क्योंकि आदमी के
जीवन काल के दौरान पैर और हाथ के निशान कभी नहीं बदलते हैं। इसी तरह बालों की बनावट
और रक्त समूहों के विश्लेषण से भी अपराधियों का पता लगाने में मदद मिलती है। शारीरिक
मानवविज्ञानी भी अवश्यक संयोग या सैनिक रूप से फैला हुए बेटे के पिता का पता लगाने के संबंध में सलाह दे सकते
हैं।

भारत, बांग्लादेश और उत्तरी अफ्रीका में जनसंख्या विस्फोट एक बड़ी समस्या है। जनसंख्या
विस्फोट पूरी मानव जाति के लिए एक खतरा बन गया है। इस समस्या से निपटने के लिए हिरंग क्रांति और
परिवार नियोजन कार्यक्रमों के माध्यम से अधिक भोजन का उत्पादन करने के साथ-साथ मानव आदर्शों को
निरंत्रित करने के लिए दो-तरफ़ राजनीति बनाई गई है। सांस्कृतिक मानवविज्ञानी की सेवाएं इन विकास
कार्यक्रमों की योजना में उपयोगी हैं। इसी प्रकार निषेध के सफल कार्यान्वयन, परिवार नियोजन, प्रौढ़ शिक्षा और विभिन्न अन्य विकास कार्यक्रमों के लिए सांस्कृतिक मानवविज्ञान की सेवाएं आवश्यक हैं।

भारत में राष्ट्रीय विघटन एक और क्षीण समस्या है। शारीरिक और सांस्कृतिक मानवविज्ञानी दोनों की सेवाएं जाति, अंतरराष्ट्रीय, श्वासनकल, श्वास-नाशन, गंभीर आदि की समस्याओं को हल करने में मदद करने के लिए आवश्यक हैं। आजकल, विभिन्न उद्योगों में श्रम प्रबंधन की समस्याएं तीव्र हैं और श्रमिक हड़ताल अक्सर होते रहते हैं। इन समस्याओं का काफी हद तक कम किया जा सकता है अगर सांस्कृतिक मानवविज्ञानी की मदद से पहले मजदूरों के रहने और मनोवैज्ञानिक स्थितियों का अध्ययन किया जाए।

2. क्रियात्मक नृत्यज्ञान: यह सोल टैक्स द्वारा गढ़ा गया है। उनके अनुसार एक क्रियात्मक मानवविज्ञानी समाज में परिवर्तन की प्रक्रियाओं का अध्ययन करने और लोगों को परिवर्तन और मार्गदर्शन योजना के प्रतिकूल प्रभावों को इस तरह से दूर करने में मदद करने के लिए है कि लोग परिवर्तन की प्रक्रिया में बेहतर कार्य करें। यद्यपि यह मानवविज्ञान की एक उपशाखा के रूप में विकसित हुआ है। इस प्रकार के अध्ययन में मानवविज्ञानी खुद को समस्याओं के साथ अंतरंग रूप से शामिल करते हैं और कार्यकर्ता के संदर्भ में अपने अध्ययन का उपयोग करते हैं। इस तरह के एक अध्ययन में, मौलिक शोध और व्यवहारिक अनुसंधान के बीच का अंतर आमतौर पर गायब हो जाता है। मानवविज्ञानी अपने स्वयं के रूप में एक समस्या को स्वीकार करता है और परीक्षण और तृटि विधि के माध्यम से आगे बढ़ता है।

1.1.7 संक्षेप (Summary)
यदि हम मानवों को समझने का लक्ष्य रखते हैं, तो यह आवश्यक है कि हम सभी समय और स्थानों के मानवों का अध्ययन करें। हम प्राचीन मानव और आधुनिक मानव का अध्ययन करता चलते हैं। हम उनकी संस्कृतियों और उनके जैविक का अध्ययन करना चाहिए। क्या हम समझ सकते हैं कि आम तौर पर मानव होने का सच क्या है? अगर हम सिर्फ अपने समाज का अध्ययन करें, हम केवल ऐसे स्पष्टीकरण दे पाएंगे जो संस्कृति-विद्रोह हैं, सामाजिक या अधिकांश या सभी मनुष्यों पर लागू नहीं होता है। मानवविज्ञान हमें एक ऐसी समझ और दृष्टिकोण देता है जिसके द्वारा हम सभी काल के मानव का समग्र रूप से अर्थता सामाजिक, सांस्कृतिक और जैविक रूप से वैज्ञानिक अध्ययन कर सकते हैं।
1.1.8 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. मानवविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. मानवविज्ञान की विभिन्न शाखाओं का परिचयात्मक विवरण लिखें।
3. शारीरिक/जैविक एवं पुरातात्विक मानवविज्ञान की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
4. मानवविज्ञान के क्षेत्रों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
5. अनुप्रयुक्त एवं क्रियात्मक मानवविज्ञान की व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मानवविज्ञान की परिभाषा और सामान्य उद्देश्य बताइए।
2. मानवविज्ञान के क्षेत्रों का उल्लेख कीजिए।
3. मानवविज्ञान की शाखाओं के बीच अंतर समझ कीजिए।
4. मानवविज्ञान क्या है? स्पष्ट कीजिए।
5. सामाजिक-सांस्कृतिक मानवविज्ञान को स्पष्ट कीजिए।

1.1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

इकाई 2 सामाजिक मानवविज्ञान: प्रकृति और क्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

1.2.0 उद्देश्य

1.2.1 प्रस्तावना

1.2.2 सामाजिक मानवविज्ञान: मानवविज्ञान की एक शाखा के रूप में
   1.2.2.1 सामाजिक मानवविज्ञान का अर्थ और परिभाषा
   1.2.2.2 सांस्कृतिक मानवविज्ञान
   1.2.2.3 सामाजिक मानवविज्ञान का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
   1.2.2.4 सामाजिक मानवविज्ञान का उद्देश्य

1.2.3 सामाजिक मानवविज्ञान की प्रकृति और क्षेत्र
   1.2.3.1 सामाजिक मानवविज्ञान का क्षेत्र
   1.2.3.2 भारत में सामाजिक मानवविज्ञान
   1.2.3.3 वर्तमान परिदृश्य
   1.2.3.4 सामाजिक मानवविज्ञान का भविष्य

1.2.4 सारांश

1.2.5 बोध प्रश्न

1.2.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप यह जानने में सक्षम होंगे कि:

- सामाजिक मानवविज्ञान किसे कहा जाता है?
- सामाजिक मानवविज्ञान की विषय-वस्तु क्या है?
- सामाजिक मानवविज्ञान का ऐतिहासिक परिदृश्य क्या है? यह विषय कैसे विकसित हुआ था?
- भारत में सामाजिक मानवविज्ञान कैसे विकसित हुआ?
- सामाजिक मानवविज्ञान का भविष्य और वर्तमान परिदृश्य?
1.2.1 प्रस्तावना

यह इकाई सामाजिक मानवविज्ञान और इसके क्षेत्र के उद्देश्य का पता लगानी आवश्यक है। सामाजिक मानवविज्ञान के विकास और कार्यक्षेत्र का जानना एक महत्वपूर्ण विषय है। हम जानते हैं सामाजिक मानवविज्ञान कई चरणों में विकसित हुआ है। सामाजिक मानवविज्ञान कि वर्तमान प्रकृति रात्रि प्राप्त नहीं बनी अपितु इसके लिए कई सैद्धांतिक बहसें हुई हैं। आज तक सभी मामलों कि बहस समाप्त नहीं हुई है। तो, इन मुद्दों को समझने के लिए विद्वानों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि विषय से संबंधित इतिहास को भी जानें। इसके साथ-साथ आप यह भी समझेंगे कि मानवविज्ञान का उद्देश्य तथा इसकी विषयवस्तु क्या है।

1.2.2 सामाजिक मानवविज्ञान: मानवविज्ञान की एक शाखा के रूप में

मानवविज्ञान कि चार शाखाओं में से एक सामाजिक मानवविज्ञान के अंतर्गत मानव के सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता और उनके कारकों का अध्ययन किया जाता है, जहां कारक आर्थिक, राजनीतिक, पर्यावरणीय, सामाजिक भूमिकाएँ, नातेदारी, सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक पहचान, वर्चस्व के सांस्कृतिक आयाम और सांस्कृतिक ज्ञान हो सकते हैं।

![Diagram](image)

चित्र 1: सामाजिक मानवविज्ञान का अन्य तंत्रों से अंतर्बंध

सरल शब्दों में कहा जाये तो सामाजिक मानवविज्ञान, मानवविज्ञान कि वह शाखा है जिसके अंतर्गत मानव के सामाजिक आयाम का मानव के उद्देश्य से लेकर वर्तमान तक का वैज्ञानिक अध्ययन है।

सामाजिक मानवविज्ञान, मानवविज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा होने के साथ-साथ इसका संबंध जीवित लोगों के सामाजिक, सांस्कृतिक और लोगों के जीवन और परंपराएं के विवरण और विश्लेषण से है (पोडोलेक्कि और ब्राउन, 1997). सामाजिक मानवविज्ञान संस्कृति की अवधारणा को अपने केन्द्र में रख कर समकालीन और ऐतिहासिक मानव समाजों का अध्ययन करते हैं (हावर्ड और डूमिनहट, 1992). मानवविज्ञानी जिन लोगों का अध्ययन करते हैं, उन लोगों के बीच क्षेत्रकार्य करते हैं और अपने अनेकों के
परिणामों का ‘नृजातीवर्णन’ (ethnography) करते हैं। सामाजिक मानविज्ञान का संबंध विभिन्न समाजों के बीच समानता और विभिन्नता के विश्लेषण से है। इस सैद्धांतिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए तुलनात्मक अध्ययन जरूरी है और ऐसे मानविज्ञानियों को इथनोलॉजिस्ट (ethnologists) कहा जाता है। इस प्रकार, सामाजिक मानविज्ञान के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं। ‘नृजातीवर्णन’ (ethnography) और इथनोलॉजी (ethnology)। जहाँ ‘नृजातीवर्णन’ अनुभवजन्य अध्ययन या संस्कृति और जीवन के तरीकों के वर्णन है और इथनोलॉजी तत्त्वों या वर्तमान के विभिन्न समाजों में पाई जाने वाली समानता और विभिनता का सैद्धांतिक अध्ययन है। इसके अतिरिक्त सामाजिक मानविज्ञान कई अन्य विषय विश्लेषण के क्षेत्र हैं।

इसमें से कुछ हैं: कला, चिकित्सा का मानविज्ञान, शहरी/सामूहिक, आर्थिक मानविज्ञान, राजनीतिक मानविज्ञान, विकासी मानविज्ञान, धर्म का मानविज्ञान, कानूनी मानविज्ञान, जनसांख्यिकीय मानविज्ञान, नर्वेजिक मानविज्ञान, मनोवैज्ञानिक मानविज्ञान आदि।

सामाजिक मानविज्ञान शब्द का उपयोग आमतौर पर ग्रेट ब्रिटेन और अन्य समान्य राष्ट्रों में किया जाता है। प्रो. लाउड लेवी-स्ट्रॉस के समर्थन के साथ, यह शब्द भी बड़े पैमाने पर है फ्रांस, नीदरलैंड और स्कैंडिनेवियाई देशों में उपयोग किया जाता है। सामाजिक मानविज्ञान संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड और अन्य देशों में विभिन्न अध्ययन का संदर्भ करता है। यूरोपीय महाद्वीप में इसलिए, हम अक्सर सामाजिक शब्द को विविध प्रकृति से संबंधित करते हैं। ग्रेट ब्रिटेन में मानविज्ञान शारीरिक मानविज्ञान का संदर्भ करता है जो मानने के जैविक तरीके पर अध्ययन करता है। इंग्लैंड में सामाजिक मानविज्ञान यूरोपीय महाद्वीप के अन्य देशों की तरह मानविज्ञान के रूप में समझा जाता है। संदर्भ में, यूरोप में ही सामाजिक मानविज्ञान के दो अलग-अलग अर्थ हैं। पर संयुक्त राज्य अमेरिका में, सामाजिक मानविज्ञान को बड़ा और व्यापक अनुशासन माना जाता है। इसमें विभिन्न पहलुओं से मनुष्य के अध्ययन को शामिल किया गया है। यह न केवल मानव को सामाजिक प्राणी मानता है अपितु उसके सांस्कृतिक पहलु पर भी जोर देता है।

उनीसवीं सदी में, ‘इथनोलॉजी (ethnology)’ शब्द का प्रयोग होता था न कि सामाजिक मानविज्ञान। ‘इथनोलॉजी (ethnology)’ को नृजातीय समूहों के विविध व्यवहार का अध्ययन कहा जाता था। सांस्कृतिक विभिनता इस तरह के अध्ययन का एक प्रमुख हिस्सा था। इसके साथ ही, इसमें सांस्कृतिक परिवर्तन का भी अध्ययन किया जाता था। कभी-कभी, मानविज्ञान के संदर्भ में सामाजिक मानविज्ञान को परिभाषित किया जाता है। वह मानविज्ञानी, जो सामाजिक संबंधों के जैसे कि परिवार, नातेदारी, उप समूह, राजनीतिक संगठन, कानून और आर्थिक गतिविधियाँ (जिसे सामाजिक संस्करण कहा जाता है) पर ध्यान केंद्रित करते हैं उन्हें सामाजिक मानविज्ञान कहा जाता है।
1.2.2.1 सामाजिक मानविवान का अर्थ और परिभाषा

सामाजिक मानविवान को एक वाक्य में परिभाषित कर पाना बहुत ही जटिल कार्य है। सामाजिक मानविवान एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न "मानव होने का स्वरूप तात्पर्य है?" को संबोधित करता है। इस प्रश्न के उत्तर हेतु वह विश्व के अलग-अलग स्थान में रहने वाले लोगों में अपने जीवन को व्यवस्थित करने के लिए बनाये गए परिचार, समुदाय, उनके आस-पास की दुनिया के बारे में और एक अच्छा जीवन जीने से संबंधित विचारों का अध्ययन करता है। इंग्लिश प्रियार्ड के अनुसार- ‘सामाजिक मानविवान में सभी मानव संस्कृतियाँ और समाजों का अध्ययन शामिल है। मूल विचार यह है कि यह दुनिया भर के मानव समाजों की संरचना का पता लगाने की कोशिश करता है। सामाजिक मानविवान यह स्थापित करना चाहता है कि समाज किसी भी देश का हो वह एक संगठित समूह दर्शाता है। इन समाजों में सिर्फ रीति-रीतियाँ या मान्यताएं, ही अलग-अलग नहीं हैं बल्कि काम करने, रहने, शादी करने, पूजा करने, राजनीतिक आयोजन करने आदि में भी भिन्न हैं। सब कुछ अलग है क्योंकि इन संस्कृतियों, विश्वासों के पीछे जो विचार हैं वे अलग हैं। सामाजिक मानविवान, एक तरफ, विभिन्न जनजातियों लोगों के बीच सामाजिक और संस्कृतिक विचारधाराओं का अध्ययन करता है तथा दूसरी ओर यह आदिवासी समाज के बीच पाई जाने वाली समानताओं का भी विश्लेषण करता है। वास्तव में, जब हम आदिवासी अर्थव्यवस्था को समझने की कोशिश करते हैं तो एक विशेष समूह, उदाहरण के लिए मुंडा जनजाति, हम यह पता लगाने की कोशिश करते हैं कि यह अर्थव्यवस्था किस तरह से मुंडा समाज के अन्य पहलु से जुड़ी है। जॉन टुइर्स ने सामाजिक मानविवान को बहुत ही रूढ़िवादी शैली में परिभाषित किया है। उनके अनुसार सामाजिक मानविवान सामाजिक संस्थाओं के अध्ययन का एक तुलनात्मक अनुशासन है। हालाँकि सामाजिक मानविवान को आदिम समाज के अध्ययन तक समिति करने के बावजूद भी, टुइर्स यह सुझाव देते हैं कि इसका उपयोग देशज समाज के अध्ययन के लिए भी किया जा सकता है।

दूसरी ओर एरिक्सेन का मनन है कि सामाजिक मानविवान में लघु स्थानों के समाजों के अध्ययन पर जोर दिया जाता है। वह तर्क देते हैं कि भले ही सामाजिक मानविवान का संबंध लघु स्थानों के समाजों से है, लेकिन ये उनके बड़े मुद्रों को संदर्भित करता है।

पिड्गटन के अनुसार, “सामाजिक मानविवानी समकालीन आदिम समुदायों की संस्कृतियों का अध्ययन करते हैं”। सामाजिक मानविवान की यह परिभाषा थोड़ी संकीर्ण है क्योंकि मानविवान में केवल आदिम संस्कृतियों का अध्ययन नहीं बल्कि समकालीन संस्कृतियों का भी अध्ययन करते हैं।

एस॰ सी॰ लुबे ने “सामाजिक मानविवान को मानविवान के उस हिस्से के रूप में परिभाषित किया जिसमें संस्कृति के भीतर पहलुओं के बजाय सामाजिक संरचना और धर्म के अध्ययन पर प्राथमिक ध्यान दिया जाता है।” यह स्पष्ट है कि सामाजिक मानविवान सामाजिक संरचना जैसे सामाजिक संस्था, सामाजिक संबंध और सामाजिक गतिविधियों आदि के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करता है।
चार्ल्स बिनिक ने कहा है कि “सामाजिक मानवविज्ञान सामाजिक व्यवहार का अध्ययन है, विशेष रूप से सामाजिक रूपों और संस्थानों के व्यवस्थित तुलनात्मक अध्ययन है।

संस्कृति में, सामाजिक मानवविज्ञान सभी देशों और संस्थानों के मनुष्य के सामाजिक व्यवहार और सामाजिक पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन है।

1.2.2.2 सांस्कृतिक मानवविज्ञान

सामाजिक-सांस्कृतिक मानवविज्ञान में विभाजन को पूरी तरह में आसानी से स्वीकार नहीं किया जाता है। हमने पहले ही बताया है कि सामाजिक मानवविज्ञान के संदर्भ में विभाजन देश में अलग-अलग शब्द है। इसी तरह विभिन्न देशों में सामाजिक-सांस्कृतिक मानवविज्ञान शब्द भी अलग है। सांस्कृतिक मानवविज्ञान शब्द अमेरिका में लोकिय है। अमेरिका में, सांस्कृतिक मानवविज्ञान पर जोर दिया जाता है क्योंकि उनका मानना है कि मानव जैविक और सामाजिक आदमी से अधिक सांस्कृतिक भी है। संस्कृति हमें समय के समाने में मदर करती है, भले ही समय और स्थान विशेष न हो। अमेरिकी सांस्कृतिक मानवविज्ञान में पुरातत्व भी शामिल है। संस्कृति के अध्ययन पर विशेष जोर अमेरिकी स्कूल ऑफ थॉट को एक विशेषता प्रदान की, जिसके परिणामस्वरूप ethnology का निर्माण हुआ।

मानव के बारे में ज्ञान के रूप में मानवविज्ञान उन लोगों के सांस्कृतिक पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करता है जो स्वाभाविक नहीं हैं बल्कि अर्जित किये गए हैं। हार्स्कोविस्ट्स के अनुसार, सांस्कृतिक मानवविज्ञान मानव के उन तरीकों का अध्ययन करता है जिनके द्वारा उसने अपनी प्राकृतिक बृहदात्रि के साथ सामाजिक बनाया, सामाजिक परिवेश का निर्माण किया और कैसे इन रीति-रिवाजों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सीखा, बनाए रखा और सींपा जाता है।

'संस्कृति' शब्द अपने आप में जटिल है। संस्कृति को विभिन्न मानवविज्ञानी द्वारा अलग तरीकों से परिभाषित किया गया है। संस्कृति की सबसे स्वीकृत और संक्षिप्त परिभाषा ‘संस्कृति समाज के सदस्यों द्वारा अधिग्रहित हर एक तत्त्व है’ के रूप में दी जा सकती है। जो भी भौतिक और अभौतिक सामग्री मानव ने समाज के एक सदस्य के रूप में हासिल किया है वह सांस्कृतिक मानवविज्ञान का विषय। मनुष्य के कार्यों द्वारा निर्मित मानव-परंपराओं, लोकगीतों, सामाजिक संस्थानों और अन्य सामाजिक तंत्र सब कुछ शामिल है। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि अमेरिकी मानवविज्ञानी ने केवल सांस्कृतिक अभिविन्यास का अध्ययन करते हैं बल्कि सांस्कृतिक मानवविज्ञान के क्षेत्र के तहत सामाजिक पहलु भी आता है। यह कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक मानवविज्ञान एक व्यापक शब्द है जो मनुष्य के सभी सामाजिक पहलुओं को सम्मलित करता है लेकिन सांस्कृतिक पहलुओं पर जोर देता है। सांस्कृतिक मानवविज्ञान के लिए, समाज और संस्कृति बिना सामाजिक व्यवस्था के उभर नहीं सकते। इस संदर्भ में डेविड बिडनी कहते हैं कि
सामाजिक और सांस्कृतिक मानवविज्ञान को मानवविज्ञान कि शाखाओं के रूप में समझा जाता है जिसके अंतर्गत मनुष्य के समाज और संस्कृति के अध्ययन को सम्मलित किया गया है।

1.2.2.3 सामाजिक मानवविज्ञान कि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सामाजिक मानवविज्ञान, जैसा कि हम इसे भारत, दक्षिण अफ्रीका और अमेरिका के बाहर कहते हैं, की उपभल इंग्लैंड से होती है। इंग्लैंड-प्रिंसिपल ने सामाजिक मानवविज्ञान की इंग्लैंड में उपभल और विकास का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। उनका कहना है कि मानवविज्ञान, इंग्लैंड में से 1885 के एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता था। यह क्रमशः कैम्ब्रिज में 1900 और 1908 में लंदन में शुरू किया गया था। लेकिन, पहला पद सामाजिक मानवविज्ञान के नाम से विश्वविद्यालय में, 1908 से शुरू हुआ था। सर जेम्स फ्रेंजर को 1908 में लिवरपूल में मानव प्रकृति बनाया गया। तब से विषय व्यापक हो गया है और मानवविज्ञान प्राप्त हुई। इसे अब प्रेट ब्रिटेन में सोशल एंथ्रोपोलॉजी के नाम से पढ़ाया जाता है। लेकिन यह तक दिया जाता है कि ऐतिहासिक रूप से, 18वीं शताब्दी से ज्यादा समय पहले मानवविज्ञान हुआ था।

19 वीं शताब्दी के सामाजिक मानवविज्ञानी डार्विन और उनके सहयोगियों के निष्कर्षों से बहुत प्रभावित थे। इस अनुगमन का विकास में सामाजिक डार्विनवादियों द्वारा दी गई सामाजिक मानवविज्ञान की परिभाषा एक मौल का पत्थर है। वर्तमान मानवविज्ञान की नींव हेनरी मेन कि किताब प्रमिटिव ला (1861) और लुईस हेनरी मॉगन की पुस्तकें, प्रमिटिव सोसाइटी (1877) में रखी थी। ये दोनों लेखकों ने आदिम समाज के सिद्धांतों को विकसित किया जिसका प्रभाव 20 वीं शताब्दी के दिनों को मिलता है। मॉगन द्वारा एक सिद्धांत प्रतिपादित किया गया था; अन्य सिद्धांत भी थे; उदाहरण के लिए, वेस्टमार्क का मानव विवाह का सिद्धांत; ब्रिफॉल्ट ने परिवार के सिद्धांत को प्रतिपादित किया। यहाँ निष्कर्ष यह है कि उद्भवकाव्यवहियों की एक टीम थी, जिसमें संस्कृति, धर्म और सामाजिक मानवविज्ञान के अन्य क्षेत्र के सिद्धांत शामिल थे। इन विकासविद्याओं में डब्ल्यू.एच.एयर्स, रिचर्ड टाइलर, फ्रेंजर, विलियम जेम्स, एसी. हेनर्डन और चार्ल्स वेलिंगमैन। ये सभी प्रारंभिक सामाजिक मानवविज्ञानी हैं और सामाजिक विकास के विकास के रूप में सामाजिक मानवविज्ञान को परिभाषित किया। दूसरे शब्दों में, सामाजिक मानवविज्ञान समाज, धर्म, विवाह, रितेदारी आदि सामाजिक संस्थाओं की उपभोक्ता और विकास का अध्ययन करता है।

फ्रांज बोआस और मैलिनोव्स्की को अक्सर पहले आधुनिक मानवविज्ञान के रूप में माना जाता है। बोआस जर्मनी के थे लेकिन वह 1880 में अमेरिकी इंडियन का अध्ययन करने के लिए अमेरिका आए थे। उन्होंने खुद क्षेत्र अनुसंधान किया और आधुनिक अमेरिकी सांस्कृतिक मानवविज्ञान की स्थापना की। मैलिनोव्स्की के अनुसार, प्रकार्यात्मकता संस्कृति विकास का सबसे महत्वपूर्ण तरीका है। मैलिनोव्स्की के अनुसार, सामाजिक मानवविज्ञान आदिवासी समाज के विभिन्न हिस्सों के आपसी संबंध से संबंधित है। अन्य शब्दों में, आदिवासी अर्धव्यक्ता, राजनीति, रितेदारी आदि सभी परस्पर जुड़े हुए हैं। उनके अनुसार,
सामाजिक मानविवाह आदिवासी समाज के सदस्यों के बीच कार्यात्मक संबंधों का अध्ययन करने में रचि रखता है। रेडिलफ-ब्राउन, मैलिनोव्सकी के समाजवादी, ने सामाजिक संरचना की अवधारणा विकसित की और उसके रूपों की व्याख्या की। यह सामाजिक मानविवाह में एक और महत्वपूर्ण विकास है। उनके अनुसार, सामाजिक संरचना एक व्यक्ति की प्रतिष्ठा और उसकी भूमिका के अध्ययन से संबंधित है। दूसरे शब्दों में, यह एक संरचना के भीतर सामाजिक संबंध के नेटवर्क से संबंधित है। रेडिलफ-ब्राउन ने मानविवाह को अभी और यहीं के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया। उन्होंने भी प्राथमिक आंकड़ों पर जोर दिया। इस प्रकार, सामाजिक मानविवाही वर्तमान के सामाजिक संरचना, सामाजिक संरचना और उनके कार्यों के परस्पर संबंध पर ध्यान केंद्रित करने लगे।

लेकिन इस प्रवृत्ति को कुछ आलोचनाओं का भी सामना करना पड़ा जैसे- (1) इससे सामाजिक परिवर्तन का पता नहीं चलता। इसका संबंध केवल सामाजिक व्यवस्था से है। (2) जो कुछ भी इसने परिवर्तन नहीं किया है, वह परिवर्तन अनुकूल नहीं है। पर हर समाज परिवर्तन की प्रतिक्रिया से गुजरता है। कभी-कभी क्रांतिकारी रास्ते से परिवर्तन आता है। तो, संरचनात्मक-प्रक्रियात्मक अध्ययन इस क्षेत्र को समाहित करने में असमंगल है और इसने आलोचना का द्वार खोल दिया है। इसलिए, 1940 के दशक तक मानविवाहियों ने उद्विक्षावाद का अध्ययन करने की आवश्यकता को पुनर्विचार किया। प्रत्येक विवाद का उद्धव केंद्र के क्षेत्र को समाहित किया गया। वी. गॉडन चाइड, लेली हाइट और जूलियन टीवड के विचार इस कूल का इतिहास करते हैं। उन्होंने नए परिप्रेक्ष्य के साथ सामाजिक विकास को परिभाषित किया। उद्विक्षावाद के अध्ययन के विभिन्न नए बूढ़ीकृत्वकों के प्रश्न, विशेष वे सामान्य के साथ कैसे संयोजित किया जाए पर ध्यान आकर्षित किया गया। मार्शन हैरिस के लेखन जिन्होंने रेडिलफ-ब्राउन के कार्यों पर जोर दिया तथा संस्कृति के अध्ययन के लिए nomothetic नामकात् और ideographic वैचारिक दृष्टिकोण के बीच अंतर को महत्वपूर्ण माना। इसी बीच, रोबर्ट रेडफील्ड ने सम्बन्धता के अध्ययन को सामाजिक मानविवाह के लिए जरी माना। रेडफील्ड ने लोक-ग्राम सातय और शहर और लघु परंपराओं की अवधारणाओं को विकसित किया जो एक सम्बन्ध और उसके विभिन्न आयामों के अध्ययन के लिए बहुत उपयोगी अवधारणाएँ थीं। रहस्यात्मक और अनूठी लोक-रात्रि और शहर। इस प्रकार, गाँव, शहर और शहर के अध्ययन की शुरुआत हुई। इस क्षेत्र में योगदान करने वाले अन्य विद्वान हैं; मार्शन ई., ऑस्टर, फिल्स सिंगर, मैक्रीम मरिय, मैडल बॉम आदि।

किसी भी अन्य अनुभाव की तरह मानविवाह भी कई नए झाँक का सामना कर रहा है। नैतिक आयामों में प्रतीकात्मक, नई नृत्यविवाह जैसे कई नए सिद्धांत आदि नए वादे लेकर आए हैं। इस क्षेत्र का कई अन्य नए सिद्धांतों और विचारों के साथ लगातार विस्तार होता रहा है। इसके साथ ही कई पहलुओं में सामाजिक मानविवाह का विस्तार भी हुआ है। सामाजिक मानविवाह में विकासात्मक अध्ययन एक प्रमुख क्षेत्र का रूप में उभर रहा है। नए क्षेत्रों के नए तरीके और तकनीकी भी सामने आ रहे हैं और
अनुसंधान को समृद्ध कर रहे हैं। उत्तर आपूर्तिकालाबाद जैसे विचार नए मंच का निर्माण कर रहे हैं। कई मानवविवाही उप-क्षेत्र आ रहे हैं जो अलग और विशिष्ट सांस्कृतिक पहलुओं पर जोर दे रहे हैं और सभी उपसर्ग ‘एथनो’ का उपयोग कर रहे हैं तथा संस्कृति के साथ उनके गठबंधन को इंगित करूँ, जैसे कि एथनो-साइंस, एथनोम्युजियोलॉजी, एथनोसाइकोलॉजी, नृवंश-लोकगीत। इस प्रकार, सामाजिक मानवविज्ञान निरंतर मानवविवाह की एक शाखा के रूप में विकसित हो रहा है।

1.2.2.4 सामाजिक मानवविज्ञान का उद्देश्य

पिडिंगटन ने सोशल एंथ्रोपोलॉजी के दो उद्देश्यों को स्वीकार किया है-

(i) सामाजिक मानवविज्ञान का प्राथमिक उद्देश्य मानव प्रकृति के बारे में जानकारी एकत्र करना है।
   मानव प्रकृति एक विवादास्पद विषय है। विभिन्न विद्वानों ने मानव प्रकृति के विभिन्न पहलुओं पर जोर दिया है। आदम मनुष्य और समाज, मानव प्रकृति को उसके सबसे अत्यंतविकसित और कठिने रूप में प्रस्तुत कर्ते हैं। इसलिए, उनका अध्ययन मानव प्रकृति की बुनियादी अवधारणाओं की समझ के लिए उपयोगी है।

(ii) सामाजिक मानवविज्ञान का एक अन्य उद्देश्य सांस्कृतिक परिस्थितियाँ और परिणामों का अध्ययन है। अधिकांश आदिम समाज धीरे-धीरे अधिक विकसित समाज के संपर्क में आ रहे हैं। वह संपर्क धीरे-धीरे सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन पैदा कर रहा है।

रॉयल एंथ्रोपोलॉजिकल सोसायटी ऑफ़ प्रेट ब्रिटन और आयरलैंड के अनुसार सामाजिक मानवविज्ञान के सबसे महत्त्वपूर्ण उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

(i) अपने वर्तमान स्वरूप में आदिम संस्कृति का अध्ययन।
(ii) संस्कृति संपर्क और विशिष्ट उद्देश्यों का अध्ययन।
(iii) सामाजिक इतिहास का पुनरंजन।
(iv) सार्वभौमिक रूप से मान्य सामाजिक कानूनों की खोज।

इस प्रकार सामाजिक मानवविज्ञान का मुख्य उद्देश्य मानव समाज, सामाजिक संस्थाओं, संस्कृति और नातेदारी का अपने सबसे प्राथमिक रूप में अध्ययन करना है। वर्तमान समय की समझ के लिए उपयोगी होने के अलावा, यह मानव इतिहास तथा मानव समाज के साथ-साथ सामाजिक संस्थाओं की प्रकृति के बारे में हमारे ज्ञान को भी बढ़ाता है।

1.2.3 सामाजिक मानवविज्ञान की प्रकृति और व्याप्ति

सामाजिक, सामाजिक मानवविज्ञान का उद्देश्य मानव समाज का समग्र अध्ययन करना है। यह वास्तव में एक समग्र अध्ययन है और मानव समाज से संबंधित सभी पक्षों को समालित करता है। संस्कृति इसके अंतर्गत स्वाभाविक रूप से आती है, क्योंकि यह मानव समाज कि अभिन्न अंग है तो, बुनियादी
सामाजिक मानविवाह का उद्देश्य मानव का सामाजिक प्राणी के रूप में अध्ययन करना है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए यह एक व्यापक क्षेत्र का अन्वेषण करता है, मानव सामाजिक जीवन के लगभग हर पहलू को समालित करता है।

आधुनिक सामाजिक मानविवाह का उद्देश्य सिर्फ मानव समाज का अध्ययन करने नहीं है, बल्कि आधुनिक मानव जीवन के जोती मुद्दों को समझना भी है। जैसा कि मानवशासीय अध्ययन में आदिम लोगों पर ध्यान केंद्रित किया गया है, इन लोगों द्वारा आधुनिक समय में विकास की प्रतिक्रिया के कारण कई समस्याओं का सामना करना पड़ा इसलिए यह मुद्दा भी मानविवाहियों के अध्ययन के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। मानविवाही न केवल इन समस्याओं के अध्ययन से प्रभावित हैं, बल्कि इसके लिए एक समाधान खोजने का प्रयास भी करते हैं। विकासाधक मानविवाह और विकासाधक मानविवाह आदि सामाजिक मानविवाह के भीतर विविध क्षेत्र हैं जो इस तरह की समस्याओं के दृष्टिकोण से पिन्हट हैं।

1.2.3.1 सामाजिक मानविवाह का क्षेत्र

इवांस प्रिच्ह क्र (1966) के अनुसार, सामाजिक मानविवाह में सभी मानव संस्कृतियों और समाज का अध्ययन शामिल है। वृत्तियादी तौर पर, यह मानव समाज की संरचना का पता लगाने की कोशिश करता है। सामाजिक मानविवाह प्रथम मानव समाज को एक संगठित पूर्णता के रूप में मानता है। रीति-रिवाज, काम करने, जीवन यापन करने, विवाह करने, पूजा करने, राजनीतिक संगठन बनाने के पूरे स्तर- ये सभी एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न होते हैं। जैसा कि संरचना और इसके पीछे काम करने वाले विचार अलग-अलग होते हैं, समाज भी बहुत भिन्न-भिन्न होते हैं। सामाजिक मानविवाह पहले इन मतभेदों का पता लगाने के साथ-साथ समानताओं को भी स्थापित करने की कोशिश करता है। जैसा कि हम विभिन्न संस्कृतियों और समाजों को देख सकते हैं, हम इन विभिन्न संस्कृतियों और समाजों में समानता भी देखते हैं। तो, मानविवाही इन विभिन्नताओं के साथ-साथ समानता का अध्ययन करते हैं।

मूल रूप से, सामाजिक मानविवाह का अध्ययन सामाजिक संरचना के इतिहास घूमता है। हम धर्म के अध्ययन का उदाहरण ले सकते हैं। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में लोग विभिन्न धर्मों का पालन करते हैं। हर धर्म में अलग-अलग रूपों में होती हैं और लोग इन रूपों को अपने-अपने धार्मिक भूमिकाओं के अनुसार निम्नलिखित हैं। इन विभिन्न धर्मों के बीच सामान्य बात पारिपथिक लि-जनालिक अंतर-नेचुरल में विश्लेषण है। तो, अंतर और समानता दोनों सामाजिक मानविवाह का अध्ययन विषय बन जाता है।

इवांस-प्रिच्ह, समाजशास्त्र के साथ सामाजिक मानविवाह की तुलना करते हुए कहते हैं कि सामाजिक मानविवाह का विषय के रूप में आदिम समाज है। दूसरे शब्दों में, यह आदिम, देशज लोगों,
पहाड़ियों और झाड़ियों के लोग, अनुसूचित जनजातियों और लोगों के ऐसे अन्य समूहों के अध्ययन से संबंधित है। लेखक (फील्डवर्क) सामाजिक मानवविज्ञान का एक और अभिन्न अंग है। सामाजिक मानवविज्ञान में आंकड़े ज्यादा से एकत्र किए जाते हैं। इस प्रकार, सामाजिक मानवविज्ञान को अध्ययन के दो व्यापक क्षेत्र के संबंध में परिभाषित किया जा सकता है-

(1) आदिम समाज
(2) क्षेत्रकार्य (फील्डवर्क)

जॉन बीहरी (1964) ने वकालत की, कि सामाजिक मानवविदों को अनुय संस्कृतियाँ का अध्ययन करना चाहिए। यह मानवविज्ञान को सामाजिक संस्थाओं के अध्ययन का एक तुलनात्मक अनुशासन बनाता है। थॉमस हायलेंड एरिकसन (1995) सामाजिक मानवविज्ञान में लघु स्थानों के अध्ययन का समर्थन करते हैं।

जॉन बीहरी (1964) ने वकालत की, कि सामाजिक मानवविदों को अनुय संस्कृतियाँ का अध्ययन करना चाहिए। यह मानवविज्ञान को सामाजिक संस्थाओं के अध्ययन का एक तुलनात्मक अनुशासन बनाता है। थॉमस हायलेंड एरिकसन (1995) सामाजिक मानवविज्ञान में लघु स्थानों के अध्ययन का समर्थन करते हैं।

एरिकसन के अनुसार, सामाजिक मानवविज्ञान अध्ययन करता है:

1. लघु समाज का
2. गैर-आदिम समाज का
3. समाज के छोटे और बड़े मुद्दे का

सामाजिक मानवविज्ञान के रूप में अलग-अलग सैद्धांतिक रूपों के साथ से सामने आई है। इसके अध्ययन की शुरुआत इस आदिम समाज से। मॉगन ने उद्विकासवादी सिद्धांत को प्रारंभिक किया और मानव समाज में उद्विकास के अध्ययन की महज वृत्ति माना। उनके अनुसार मानव समाज तीन मुख्य चरणों से आगे बढ़ा है—अर्थव्यवस्था, व्यवस्था और सम्पत्ति। ऐसे उद्विकासवादी दृष्टिकोण के साथ सामाजिक नृविज्ञानियों ने मानव समाज को उद्विकासवाद के आलोक में जांचा। संरचनात्मक-प्रकारात्मक का सैद्धांतिक ढंग ब्रिटेन में एक लोकप्रिय दृष्टिकोण बन गया। सामाजिक मानवविज्ञान शब्द का उपयोग करने वाले ब्रिटिश मानवविज्ञानी ने समाज की अवधारणा पर जोर दिया है, जो उन व्यक्तियों की कुल है जो साथ-साथ रहते हैं और समान भावनाओं को साझा करते हैं। विभिन्न सामाजिक अंतर्वंश और अंत:वंश के अध्ययन का उद्देश्य है। प्रकारावाद ने सामाजिक संस्थाओं के प्रकारात्मक अध्ययन को प्रतिपादित किया। दूसरी ओर, अमेरिकी मानवविज्ञानी सांस्कृतिक मानवविज्ञान शब्द को प्रस्तावित करते हैं, सांस्कृतिक मानवविज्ञान शब्द ने संस्कृति की अवधारणा पर ध्यान केंद्रित किया है जो मानव व्यवहार, मौखिक या गैर-मौखिक और उनके उत्पादों-भौतिक या गैर-भौतिक का योग है। सांस्कृतिक मानवविज्ञानी इसके पीछे के मूल को देखते हुए प्रत्येक हस्तक्षेप और अंतर्वंश व अंतर्वंश का विशेषण करने की कोशिश करते हैं। सम्बन्ध शब्द मानवविज्ञानियों में उद्विकासवादी सिद्धांत के बाद से जाना जाता था, लेकिन यह रॉबर्ट रेडफिल्ड का अग्रणी काम था, जिन्होंने
सभ्यता के अध्ययन की शुरुआत करते सामाजिक मानवविज्ञान के विकास के इतिहास में एक आंदोलन लाया। उन्होंने लोक गाँवों और शहरी केंद्रों का अध्ययन किया और उन दोनों के बीच सातत्त्विक स्वरूप और प्रक्रियाओं को समझने का प्रयास किया। इस प्रकार, उन्होंने लोक समाज, शहरी समाज और लोक-शहरी सातत्त्विक की अवधारणा विकसित की। पिर ग्रामीण सभ्यता और कस्बे की एक इकाई के रूप में गाँव का अध्ययन शहरी सभ्यता के केंद्र के रूप में अस्तित्व में आया।

इस प्रकार, मानवविज्ञान केंद्र आदिव लोगों का अध्ययन नहीं है। सामाजिक मानवविज्ञान का विषय एक विशाल क्षेत्र को समाविष्ट करता है। यह आदिवासी समाज के साथ-साथ शहरी समाज का भी अध्ययन करता है। परिस्थितियों की परवाह किए बिना कोई भी संस्कृति और समाज परिवर्तन से परे नहीं है। पृथक आदिव समाज भी समय के साथ बदलते हैं। कई बार परिस्थितियों के दबाव के कारण भी समाज नहीं बदलता है। परम्परा तरीके का संक्षेप से पालन करते हैं, परंपरा की जीवन रूपांतरण को लागू करते हैं। सामाजिक मानवविज्ञान कंप्युटर या कंप्युटर नहीं समाज / संस्कृति बदलती है। समाज के अध्ययन करने का प्रयास किया।

लेकिन, परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है, चाहे वह एक सुदूर और अलग-अलग गाँव हो या आध्यात्मिक शहर, हर जगह लोगों को अपने जीवन रूप में कई तरह के बदलाव देखने को मिलते हैं, जो समय बीतने से प्रभावित होता है।

मनुष्य के जीवन के कई आयाम हैं और हर एक का विस्तार से अध्ययन करने के प्रयासों के परिणामस्वरूप सामाजिक मानवविज्ञान की प्राथमिक शाखा से कई उप-शाखाओं की उत्पत्ति और कृत्रिम हुई है। जैसे कि आर्थिक मानवविज्ञान, राजनीतिक मानवविज्ञान, मनोवैज्ञानिक मानवविज्ञान, धर्म का मानवशास्त्र इत्यादि। समाज की नई मांगों के साथ कई नई उप-शाखाएं भी आ रही हैं। जैसे, संचार और दृश्य मानवविज्ञान। सामाजिक मानवविज्ञान को अन्य अध्ययन की प्राथमिकता बनाए रखने के लिए मानव समाज में सभी नए परिवर्तनों को समायोजित करना होगा। इस प्रकार, नए क्षेत्र अपने क्षेत्र का विस्तार करेंगे।

1.2.3.2 भारत में सामाजिक मानवविज्ञान

विश्व मानवविज्ञान के परिदृश्य में, भारतीय मानवविज्ञान बहुत सुया है। प्रथम बेठे (1996) ने मानवविशालियों (उनकी शास्त्रीयता के बारूद) द्वारा भारत में समाज और संस्कृति के अध्ययन का अर्थ में ‘भारतीय मानवविज्ञान’ शाखा का इस्तेमाल किया। भारतिय समाज और संस्कृति का अध्ययन देश के अंदर और बाहर विभिन्न मानवविज्ञानियों द्वारा किया जा रहा है। हालांकि, मानवविज्ञान भारत के विभिन्न प्रांतों में विभिन्न जनजातियों और जातियों की परंपराओं और विश्वासों के नृत्यवर्ण संकलन के साथ उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में इसकी उत्पत्ति का श्रेय देता है। यह आंकड़े ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान ही मानवविशालियों द्वारा एकत्र किया गया था। अकादमिक हित के साथ सरकारी अधिकारियों और मिशनरियों ने पहली बार अटारहवीं शताब्दी में कुछ मानवविशालियों आकड़े एकत्र किए लेकिन, इसके पीछे
का मकसद भारतीय समाजों और संस्कृतियों का अध्ययन करना नहीं था बल्कि ब्रिटिश प्रशासन को सुचारू संचालन के लिए मदद करना था। मिशनरियों का धार्मिक मकसद था। हालांकि, प्रशासकों और मिशनरी ने जब विभिन्न प्रकार के लोग जो पूरी तरह से विभिन्न संस्कृतियों वाले थे को देखा तो वह चिंतित रह गए। उन्होंने लोगों और उनके तथ्यों का वर्णन करके, लेखन के माध्यम से अपने अर्जित अनुभव को बताने की कोशिश की।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में, भारत में प्रशासकों और मिशनरियों ने भारतीय लोगों और उनके जीवन के बारे में बहुत कुछ लिखा। प्रशिक्षित ब्रिटिश अधिकारी जैसे एलिस्ट्रेट, थर्स्टन, ओ मेलोन, रसेल, डूबेन, मार्शल, ओमेली, बोस और कई अन्य जो भारत में तैनात थे, ने भारत की जनजातियों और जातियों पर लिखा। इस दौरान कुछ ब्रिटिश मानवविज्ञानी जैसे रबर्ट, सेलिमैन, रेडिलफ-आउन, हस्नन ने भारत में आकर मानवविज्ञानी क्षेत्र का संचालन किया। इसके बाद पूरी तरह सत्तावादी के दौरान, भारत में मानवविज्ञानी सफलतापूर्वक आया।

भारतीय नृविवाहितों ने पंडकी मानवविज्ञानी से काम के विषयों, रूपरेखाओं और प्रक्रियाओं को उद्धार किया और अन्य संस्कृतियों के बजाय अपनी संस्कृति और समाज का अध्ययन करने का प्रयास किया। विभिन्न विद्वानों जैसे एस. सी. रॉय, डी. एन. मजूमदार, जी. एस. घुरे, एस. जी. और एस. के. बोस, एल. जी. सिम्पसन ने भारत में समाजशास्त्र सामाजिक मानवविज्ञान की उत्पत्ति और विकास का पता लगाने की कोशिश की। यह प्रयास 1921 से पहले प्रकाशित जनजातियों और जातियों के कार्यों को प्रतिबिंबित करता है। मानववैज्ञानिक व्यापारों में ब्रिटिश प्रशासकों और मिशनरियों के लेखन शामिल थे, क्योंकि 1921 से पहले भारत में मानवशास्त्रीय कार्य मुख्य रूप से इन लोगों द्वारा किया जाता था। इसके बाद, डी. एन. मजूमदार ने भारत में मानवविज्ञान के उद्धार का पता लगाने की कोशिश की। यह प्रयास अलग़ से रॉय के पन्चवीं वर्षों के बाद किया गया था। डी. एन. मजूमदार ने ब्रिटेन और अमेरिका में उत्पन्न संस्कृति के सिद्धांत के साथ भारत में मानवविज्ञान के विकाशील अनुशासन से संबंधित होने का प्रयास किया। अमेरिकी प्रभाव को पहली बार ब्रिटिश प्रशासकों और मिशनरियों के कार्यों के अलावा पहचाना गया।

जी.एस. घुरे, ने अपने लेख में समाजशास्त्र, सामाजिक मनोविज्ञान और सामाजिक मानवविज्ञान (1956) के शिक्षण में लिखा है कि भारत में सामाजिक मानवविज्ञान ने इंग्लैंड, यूरोप या अमेरिका में विकास के साथ तालमेल नहीं रखा है। हालांकि, भारत में सामाजिक मानवविज्ञान कुछ हद तक ब्रिटिश मानवविज्ञानीय कुछ कॉन्नेक्टेड स्कॉल्स के काम से परिचित हैं, लेकिन अमेरिकी सामाजिक मानवविज्ञान का उनका ज्ञान अपयान नहीं है। एस. सी. दूबे (1952) ने कहा कि भारतीय मानवविज्ञान को सामाजिक कार्यक्रमों, प्रशासकों और राजनीतिक नेताओं से अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है, तकि अनुमंडल उम्मीद में उभरते हर से उभरते हे से निपटा जा सके। एन.के. बोस ने 1963 में अप्रतिमति सैनी शीर्षक के तहत भारत में
मानवविज्ञान की प्रगति पर चर्चा की- प्रागैतिहासिक मानवविज्ञान, शारीरिक मानवविज्ञान और सांस्कृतिक मानवविज्ञान

1970 के दशक में गाँव के अध्ययन, जाति अध्ययन, नेतृत्व के अध्ययन और सत्य सर्वचना, जनजातिय गाँव में नातेदारी और सामाजिक संगठन और एलेक्सेंडर एं्ड्रोपोलोजिज्ज जैसे रहस्य भारतीय परिस्थिति में आए और एल.पी. विद्याधर ने भारत में मानवविज्ञान के विकास का पता लगाते हुए इन मुद्दों पर चर्चा की। उन्होंने मनुष्य और समाज की उचित समझ के लिए विभिन्न विषयों से एकक्रम प्रभाव की आवश्यकता महसूस की। उनका मुख्य जोर 'भारतीयता' पर आधारित था। उनके अनुसार प्राचीन धर्मंग्रहों में परिलक्षित भारतीय विचारकों के विचार सामाजिक तथ्यों से भरे हुए थे और इसलिए उन्हें भारत की सांस्कृतिक प्रकृति और समस्तता के इतिहास की समझ में खोज जा सकता था। सुरजीत सिन्हा (1968) ने एल. पी. विद्याधर के दृष्टिकोण का समर्थन करते हुए कहा कि भारतीय मानवविज्ञानी आसानी से पश्चिम के वर्तिमान घटनाक्रमों का जवाब दे सकते थे लेकिन उन्होंने भारतीय स्थिति को तात्कालिक प्रारूपित कर दी थी।

भारत में, मानवविज्ञान मिशनरीयों, व्यपारियों और प्रशासकों के काम से रूप हुआ, जहाँ प्रमुख ध्यान भारतीय लोगों की विभिन्न सांस्कृतिक पृथ्वीय थी। समृद्ध आदिवासियों संस्कृति ने सामाजिक मानवविज्ञान के अध्ययन को आकर्षित किया। सामाजिक मानवविज्ञान अनुसंधान के लिए जनजातिय संस्कृति एक प्रमुख क्षेत्र बन गया। यह बदलते चलन के साथ जारी रहा और गाँव की व्यवस्था, और भारतीय समस्तता के अध्ययन को समस्तता किया। अन्य सामाजिक संस्थान जैसे- धर्म, नातेदारी, विवाह आदि भी शोध के क्षेत्र में आए। भारतीय संस्कृति के रीति-रिवाजों और विविधता ने भारत के सामाजिक मानवविज्ञान के बीच अनुसंधान का एक अनुत्कृष्ट क्षेत्र बनाया। अलग-अलग विचार जैसे कि प्रभू जाति, पवित्र संकुल, जनजाति-जाति सातत्य, लघु और बृहद परंपरा, सांस्कृतिकरण आदि ने भारतीय मानवविज्ञान को एक नई दिशा प्रदान की। इस प्रकार, मजबूत भारतीय मानववांसी विचार का एक निकाय बनाया गया। नए विचारों के जोड़ के साथ भारतीय मानवविज्ञान का विकास जारी है। पारंपरिकतिक, विकासात्मक अध्ययन आदि जैसे उभरे रूपों के साथ भारतीय मानवविज्ञान का विकास जारी है। पारंपरिकतिक, विकासात्मक अध्ययन आदि जैसे उभरे रूपों के साथ भारतीय मानवविज्ञान का विकास जारी है। पारंपरिकतिक, विकासात्मक अध्ययन आदि जैसे उभरे रूपों के साथ भारतीय मानवविज्ञान का विकास जारी है। पारंपरिकतिक, विकासात्मक अध्ययन आदि जैसे उभरे रूपों के साथ भारतीय मानवविज्ञान का विकास जारी है।

1.2.3.3 वर्तमान परिस्थिति

स्वतंत्रता के बाद भारत ने सामाजिक सुधार की नई चुनौतियों का सामना किया, क्योंकि एक नई सरकार ने कार्यभार संभाला। भारतीय संस्कृति की पूरी धारणा का पुनर्निर्माण करना पड़ा, क्योंकि विविध सांस्कृतिक क्षेत्र एक ही छत के नीचे आ गए थे। विभिन्न आदिवासी समाज और संस्कृतियों इस बदलती स्थिति से निपटने में असमर्थ थे। प्राशासनिक नीतियों के अलावा, भारतीय सामाजिक नृविज्ञानियों ने इस तरह
दूर िशा िनदे
शालय
, महा मा
गांधी अंतररा ी
य िहंदी िव व
िवालय
एम
ए
समाजशा
ितीय सेमे ट
र–सामािजक मानविवान
के े  संकट को द ूर करने के  िलए पहल की और भारतीय सभ्यता की सामान्य छत के  नीचे भारत में विविध संस्कृतियों के अध्ययन में रूचि दिखाई सरकार की नीतियाँ इन सामाजिक मानविवान कार्यों से प्रभावित थी व्याख्यान ये कार्य आदिवासी विकास जैसे संबंधित मुद्दों से सम्बंधित था यह झांक भारतीय मानविवान के क्षेत्र में जारी है। आज, वैश्विकीय के युग में, भारत में सामाजिक मानविवानी आदिवासी समुदायों के सामने नई चुनौतियाँ ने पिपटे हैं। विकास अध्ययन के साथ, पहचान और लॉगिक मुद्दे उनके बीच लोकप्रि है। लोक संस्कृति का अध्ययन एक प्रमुख क्षेत्र में व्याप है। विकास अध्ययन के साथ, आदिवासी विश्वास और पुनर्वास जैसे मुद्दों पर सामाजिक मानविवानी के लिए एक प्रमुख ध्यान केंद्रित किया गया है। जनजातीय कला, स्वदेशी ज्ञान प्रणाली का अध्ययन आदि नए वैश्विक मुद्दों के साथ लोकप्रियता प्राप्त कर रहे हैं जैसे- लोबल वामी।

1.2.3.4 सामाजिक मानविवान का भविष्य

मानव समाज के प्रत्येक क्षेत्र में मानविवान बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। औपनिवेशिक काल के दौरान, यह एक प्रशासनिक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया गया था। सामाजिक मानविवान उस औपनिवेशिक धारणा से बाहर आ गया है और अब एक नया अनुशासन रास्ता बना रहा है। एक अक्रियात्मक अनुशासन के रूप में इसका एक सुदृढ़ सैद्धांतिक आधार और अभित्तिय व्यवहारिक आयाम है। निकट भविष्य में भी यह नए सैद्धांतिक ढाँचे के साथ अनुशासन रास्ते परिवर्तन को समायोजित करने में वास्तव में सक्षम है। मानविवान ने अपनी मानवीय संस्कृति से संबंधित प्रक्रिया का अध्ययन करने में वातव में सक्षम है। मानव समाज और जीवन में बदलाव का भी ध्यान से प्रलेखन करता है। यह मानव जीवन के ऐतिहासिक और प्रागैतिहासिक पक्ष को भी समावेश करता है। इसलिए, यह मानव समाज के प्रत्येक चरण के लिए बहुत प्रासंगिक है।

क्लाउड लेवी-स्ट्रॉस ने सामाजिक मानविवान के भविष्य की परिकल्पना एक अध्ययन के रूप में की है जो व्यक्तियों और समूहों के बीच संबंध के मामले में पूर्ण है। संबंध का अध्ययन, एक समाज में व्यक्तियों के बीच शब्दों और प्रतीकों का अर्थ, भाषा विज्ञान, ज्ञान, कला आदि के अध्ययन का गठन होगा। विभिन्न समूहों के बीच जीवन-साथी (मातृसम्बंधक समूह में पुरुष और पितृसम्बंधक समूह में महिला) के अध्ययन का गठन होगा। विवाह, परिवार समूह और रिश्तेदारी का अध्ययन, व्यक्ति-प्रभाव के साथ स्थिती पर संबंध और ध्यान के संबंध के अध्ययन का गठन होगा। इस प्रकार, मानव समाज के अध्ययनों का अध्ययन संस्कृति के संबंध में है, बिना उस संस्कृति के संबंध में किया जा सकता है जो संस्कृति का प्रतीक है। सामाजिक मानविवान के क्षेत्र में ऐसे कई नवीन विचार आ रहे हैं और सिद्धांत और व्यवहार दोनों के मामले में इसका दायरा बढ़ाता जा रहा है।
1.2.4 सारांश

इस इकाई में इस बात पर ध्यान केंद्रित किया गया था कि मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं को समाविष्ट करने वाले अनुशासन के रूप में सामाजिक मानवविज्ञान कैसे विकसित हुआ है। सामाजिक मानवविज्ञान इस प्रकार, विभिन्न लक्ष्यों और दृष्टिकोणों के माध्यम से विभिन्न समय अवधि के साथ विकसित हुआ है और इसने मानव जीवन के लगभग सभी पहलुओं को सम्मलित किया है। आपने सामाजिक मानवविज्ञान के विभिन्न सैद्धांतिक ढंगों के बारे में सीखा। इन सैद्धांतिक दृष्टिकोणों के साथ, मानव जीवन के विभिन्न मुद्दों के साथ सामाजिक मानवविज्ञान कैसे व्यवहार करता है, इस पर भी चर्चा की गई। सामाजिक मानवविज्ञान के वर्तमान और भविष्य के परिदृश्य पर भी चर्चा की गई है। आप इस इकाई के अध्ययन के बाद सामाजिक मानवविज्ञान के भारतीय और विश्व परिदृश्य के बारे में समझ पाएंगे।

1.2.5 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

6. मानवविज्ञान एवं सामाजिक मानवविज्ञान की स्पष्टता करते हुए दोनों में अंतर स्पष्ट कीजिए।
7. सांस्कृतिक मानवविज्ञान की स्पष्ट व्याख्या कीजिए।
8. सामाजिक मानवविज्ञान के प्रकृति एवं क्षेत्र की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
9. भारत में सामाजिक मानवविज्ञान के क्षेत्रों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
10. सामाजिक मानवविज्ञान के भविष्य की व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक मानवविज्ञान को परिभाषित कीजिए।
2. सामाजिक मानवविज्ञान के इतिहास और विकास का वर्णन कीजिए।
3. भारत में सामाजिक मानवविज्ञान कैसे विकसित हुआ है?
4. सामाजिक मानवविज्ञान के उद्देश्य और क्षेत्र का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
5. सामाजिक मानवविज्ञान का उद्देश्य स्पष्ट करें।
1.2.6 संदर्भ ग्रंथ सूची


• IGNOU notes on SOCIAL ANTHROPOLOGY: NATURE AND SCOPE.


इकाई 3 सामाजिक मानविज्ञान का अन्य विषयों से संबंध
(Relationship of Social Anthropology with Other Disciplines)

इकाई की रुपरेखा
1.3.0 उद्देश्य
1.3.1 प्रस्तावना (Introduction)
1.3.2 अन्य सामाजिक विज्ञान के विषयों के साथ सामाजिक मानविज्ञान का संबंध
  1.3.2.1 सामाजिक मानविज्ञान और समाजशास्त्र (Social Anthropology and Sociology)
  1.3.2.2 सामाजिक मानविज्ञान और मनोविज्ञान (Social Anthropology and Psychology)
  1.3.2.3 सामाजिक मानविज्ञान और इतिहास (Social Anthropology and History)
  1.3.2.4 सामाजिक मानविज्ञान और इथनोलॉजी (नृजातिय विज्ञान) (Social Anthropology and Ethnology)
  1.3.2.5 सामाजिक मानविज्ञान और अर्थशास्त्र (Social Anthropology and Economics)
  1.3.2.6 सामाजिक मानविज्ञान और राजनीति विज्ञान (Social Anthropology and Political Science)
  1.3.2.7 सामाजिक मानविज्ञान और सामाजिक कार्य (Social Anthropology and Social Work)
  1.3.2.8 सामाजिक मानविज्ञान और सांस्कृतिक अध्ययन (Social Anthropology and Cultural Studies)
  1.3.2.9 सामाजिक मानविज्ञान और साहित्य (Social Anthropology and Literature)
  1.3.2.10 सामाजिक मानविज्ञान और जनस्वास्थ्य (Social Anthropology and Public Health)
  1.3.2.11 सामाजिक मानविज्ञान और नीति और शासन (Social Anthropology and Policy and Governance)
  1.3.2.12 सामाजिक मानविज्ञान और प्रबंधन (Social Anthropology and Management)

1.3.3 सारांश (Summary)
1.3.4 बोध प्रश्न
1.3.5 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.3.0 उद्देश्य
इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, विद्यार्थी निम्नलिखित में समझ हो सकेंगे-

- सामाजिक मानविज्ञान और विभिन्न विषयों के मध्य संबंधों को समझ सकेंगे।
- सामाजिक मानविज्ञान की जैविक और सामाजिक कारकों की व्याख्या करने की क्षमता जिसके द्वारा मनुष्य की संस्कृति और व्यवहार को समग्रता से समझ सकेंगे।

1.3.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामाजिक मानविज्ञान वह मानविज्ञान की शाखा है जो मानव संस्कृति से संबंधित है और समाज, सांस्कृति और सामाजिक घटनाओं पर जोर देती है। इसमें अंतर व्यक्तिगत और अंतर समूह संबंध विशेष रूप से गैर साक्षर लोगों के समन्वय हैं। सभी सामाजिक विज्ञान मानव के व्यवहार का अध्ययन करते हैं, लेकिन मानवविज्ञान का संदर्भ, विश्वस्तु, दृष्टिकोण समाजशास्त्र और अन्य सामाजिक विषयों से बहुत अलग है। समाज की आंतरिक विश्लेषण के अध्ययन के अंतर्गत, सामाजिक मानवविज्ञान समाज का बाहरी अध्ययन जैसे जनसंख्या के विश्लेषण और इसकी प्रगति की दर और चरण भी करता है। समाज की संस्थाओं को इन कारकों का उपयोग करके समझा जाता है। उसी संस्थाओं का भी अध्ययन करता है जैसे - राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, कानूनी, स्वयंसेवक आदि। यह उन विषयों का अध्ययन करता है जो इन संस्थाओं में सामान हैं और जो सुविधाएं भिन्न हैं। उनकी विशेषज्ञता और स्वायत्तता के स्तर का भी अध्ययन किया जाता है। विशेष रूप से नागरिक मानवविज्ञान को सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन कहा जाता है। सामाजिक मानवविज्ञान सामाजिक संबंधों का अध्ययन है। अन्य सामाजिक विषयों के बीच की अंतरिक्षित है। व्यक्तियों के बीच की अंतरिक्षित समाज के मानविक और मूल्यों की मध्यस्थता द्वारा और लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अभिन्नता होती है।

1.3.2 अन्य सामाजिक विज्ञान के विषयों के साथ सामाजिक मानवविज्ञान का संबंध

सामाजिक और सांस्कृतिक मानवविज्ञानी समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, सांस्कृतिक अध्ययन, साहित्य, सार्वजनिक स्वास्थ्य, नीति और शासन अध्ययन, प्रबंधन, आदि जैसे सामाजिक विज्ञानों से प्राप्त विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल करते हैं। इस प्रकार, मानव व्यवहार के समझ के लिए अपनी खोज में इन सभी विषयों को संबंधित करने में सक्षम है, और उन सभी को उस तरीके की व्याख्या करने के लिए आकर्षित करता है जिसमें सभी जैविक और सामाजिक कारक समग्रता में मनुष्य की संस्कृति और व्यवहार को चित्रित करते हैं।
1.3.2.1 सामाजिक मानवविज्ञान और समाजशास्त्र (Social Anthropology and Sociology)

सामाजिक मानवविज्ञान को आमतौर पर अन्य संस्कृतियों के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसमें भाषा व नस्ल के शास्त्र का उपयोग कर गुणात्मक अंतर्क्ष्ठान का संकलन किया जाता है। सामाजिक मानवविज्ञान, समाजशास्त्र के समान है, लेकिन समाजशास्त्र के समरूप नहीं है, कम से कम पिछले शताब्दी के संदर्भ में जिस दौरान प्रत्येक अनुशासन जिस प्रकार विकसित हुआ है, सामाजिक मानवविज्ञान ने पूर्व-यूरोपियन समाजों पर, तो समाजशास्त्र ने यूरोपियन समाजों पर ध्यान केंद्रित किया है।

मानवविज्ञानी ने अन्य संस्कृतियों में अपने शोध किया, प्रतिभागी अवलोकन का तकनीक को नियोजित किया, तुलनात्मक (विशेष रूप से पार-संस्कृतिक) अध्ययन की वकालत की। समाजशास्त्रियों ने अपने स्वयं के समाजों में शोध किया, प्रश्नात्मक का इस्तेमाल किया, और सामाजिक अनुशासन का पार-संस्कृतिक रूप से परीक्षण करने का प्रयास किया। बेहद, इन स्वयं के कई अपवाद हैं, जिसके परिणामस्वरूप समाजशास्त्रियों ने कभी-कभी अपने प्रयोगशालाओं में मानवविज्ञानी के रूप में और कभी-कभी इसके विपरीत रूप में देखा है (ब्रेड, 2009).

हालांकि, इन दो विचारों के बीच महत्वपूर्ण अंतर हैं। पहला बड़ा अंतर यह है कि समाजशास्त्र अपनी परीक्षण के अनुरूप सामाजिक संबंधों का अध्ययन करता है, सामाजिक मानवविज्ञानी भी समाजशास्त्रियों की तरह एक ही विषयवस्तु का अध्ययन करते हैं, परंतु वे अन्य मामलों में भी रूचि रखते हैं। जैसे लोगों के विश्वासों और मूल्यों, जिनका सामाजिक व्यवहार से सीधे जुड़ाव नहीं दिखता है। सामाजिक मानवविज्ञानी उनके विचारों और विश्वासों के साथ-साथ उनके सामाजिक रिश्तों में भी दिलचस्पी रखते हैं, हाल के वर्षों में कई सामाजिक मानवविज्ञानी ने अन्य लोगों के विश्वास प्रणाली का अध्ययन न केवल समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से किया है, बल्कि सूचनात्मक के अपने दृष्टिकोण से भी किया है।

सामाजिक मानवविज्ञान और समाजशास्त्र के बीच दूसरा महत्वपूर्ण अंतर है कि, सामाजिक नृविज्ञानियों ने ज्वादार ऐसे समुदायों में काम किया है, जो कम परिचित और तकनीकी रूप से कम विकसित दोनों हैं, जबकि समाजशास्त्रियों ने मुख्य रूप से अनुभवित जातरूप, पश्चिमी-समाज, समाजों की सामाजिक संगठन और विशेषताओं के प्रकारों का अध्ययन किया है। दोनों में अंतर करना कठिन है अर्थात इसके मौलिक सिद्धांत के बजाए इसके सामाजिक क्षेत्र में अंतर है। इस तरह सामाजिक मानवविज्ञान द्वारा लघु समाजों के अध्ययन ने समाजशास्त्रीय ज्ञान में मुख्य योगदान किया है।

अंत में, यह कह सकते हैं कि सामाजिक मानवविज्ञानी ज्वादार अपरिचित संस्कृतियों में काम करते हैं, जिनमें भाषा का अनुवाद एक समय है, समाजशास्त्रियों के लिए भाषा कोई बड़ी समस्या नहीं है। समाजशास्त्री आमतौर पर उसी भाषा (कम या ज्वादा) में काम करते हैं, जिसको वे बोलते और पढ़ते हैं और जब से कम उनकी कुछ बुनियादी अवधारणाओं और श्रेणियों सामान होती हैं। लेकिन सामाजिक मानवविज्ञानी के लिए, उनके कार्य का सबसे कठिन हिस्सा आमतौर पर उसके द्वारा अध्ययन किए जाने वाले
लोगों की भाषा और विचारों के तरीके को समझना है, जो अपने आप से बहुत अलग हैं। यही कारण है कि,
मानवविज्ञान में, अध्ययन के जा रही समुदाय की भाषा का ज्ञान अपरिहार्य है क्योंकि लोगों के विचारों की
श्रेणियों और उनकी भाषा के रूप एक साथ बंधे हुए हैं। इस प्रकार अवधारणाओं और प्रतीकों की व्याख्या
और अर्थ के बारे में प्रश्न आमतौर पर समाजशास्त्रीयों की तूलना में सामाजिक मानवविज्ञान के अध्ययन का
एक बड़ा हिस्सा होता है। समाजशास्त्र, सामाजिक मानवविज्ञान का सबसे करीबी साथी अनुशासन है और
दोनों विषय अपनी सैद्धांतिक समस्याओं और रूचियों के कई हिस्से साझा करते हैं। हर सामाजिक
मानवविज्ञानी समाजशास्त्री हो सकता है, पर हर समाजशास्त्री सामाजिक मानवविज्ञानी नहीं हो सकता,
क्योंकि वह दोनों सामाजिक रिश्तों से संबंधित हैं, पर मानवविज्ञानी संस्कृति के अन्य पहलुओं के साथ
संबंध रहते हैं। हालांकि, सामाजिक मानवविज्ञान और समाजशास्त्र दोनों के शीर्ष विद्वानों को यह चिंता करने
का बहुत कम समय मिलता है कि वे क्या कर रहे हैं समाजशास्त्र या सामाजिक मानवविज्ञान।

1.3.2.2 सामाजिक मानवविज्ञान और मनोविज्ञान (Social Anthropology and Psychology)

मन और मानव व्यवहार के वैज्ञानिक अध्ययन को मनोविज्ञान कहा जाता है। मनोवैज्ञानिक अपने
सिद्धांतों और अनुसंधान के माध्यम से विविध विषयों का अन्वेषण करते हैं। इन विषयों में मस्तिष्क, व्यवहार
और व्यक्तिगत अनुभव के बीच संबंध; मानव विकास; व्यक्ति के विचार, भावनाओं और व्यवहार पर अन्य
लोगों का प्रभाव; मनोवैज्ञानिक विचार और उनके उपचार; व्यक्ति के व्यवहार और व्यक्तिगत अनुभव पर
संस्कृति का प्रभाव; व्यक्तित्व और बुद्धिमत्ता में लोगों के बीच अंतर; और लोगों को ज्ञान प्राप्त करने,
व्यवस्थित करने, और उनके व्यवहार को निर्देशित करने की क्षमता शामिल है।

इस प्रकार मनोवैज्ञानिकों के अध्ययन का ध्यान मानव व्यवहार के सभी पहलुओं और इसके
व्यक्तिगत, सामाजिक और संस्कृतिक आयाम पर है जो कभी सामाजिक मानवविज्ञान के ज्ञान के बिना कभी
पूरे नहीं होगे। इसलिए, हमारे आसपास की दुनिया में सामाजिक प्रकिरणों और अर्थों को समझने के लिए
सामाजिक मानवविज्ञान का अध्ययन जरूरी है। सामाजिक मनोविज्ञान और सामाजिक मानवविज्ञान दोनों एक
और व्यक्तियों के बीच के संबंधों और दूसरी ओर समूहों, समुदायों, समाजों और संस्कृतियों से संबंधित हैं।

बैरेट (2009: 135) के अनुसार, ऐतिहासिक रूप से ब्रिटिश सामाजिक मानवविज्ञान मनोविज्ञान से
काफी अलग हैं। दूसरे शब्दों में सामाजिक मानवविज्ञान अवव्याख्यावाद का विरोध करता है, जिसका अर्थ
अन्य अनुसन्धानकारी स्थरों (जैसे मनोविज्ञान) द्वारा सामाजिक जीवन की व्याख्या करने का विरोध। इस
परिप्रेक्ष्य को दुर्दशा के कारण द्वारा जात किया जा सकता है, जिन्होंने घोषणा कि किसी भी समय यदि
सामाजिक घटना के लिए एक मनोवैज्ञानिक स्पष्टीकरण प्रदान किया जाता है हम निश्चित हो सकते हैं कि वह
गलत है। अमेरिकी संस्कृतिक मानवविज्ञान, मनोविज्ञान के लिए अधिक प्रणालीत रहा है, विशेष रूप से
व्यक्तित्व केंद्रित अध्ययन। बोआस, व्यक्ति और समाज के बीच संबंधों में रूचि रखते थे, और अंत में संस्कृति
और व्यक्तित्व स्कूल की स्थापना की, जिसमें व्यक्तित्व पर जोर दिया गया था। हाल के वर्षों में मनोवैज्ञानिक मानवविज्ञान नामक एक विशिष्ट दृष्टिकोण सामने आया है, जिसमें दृष्टिकोण और मूल्यों और शिशु-पालन प्रथाओं और किशोरवास्तव पर ध्यान केंद्रित किया गया है (Bourguignon, 1979)।

एकमात्र अंतर यह है कि सामाजिक मानवविज्ञान समूह और मनोविज्ञान व्यक्ति का अलग-अलग बनाने का अवयव था। सामाजिक मानवविज्ञानी सामाजिक संरचना या संस्कृति के विशेष्य है मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व प्रणाली और मानसिक प्रक्रिया जैसे अनुभूति, धारणा, सीखने, भावनाओं और उद्देश्यों में सामाजिक मानवविज्ञानी व्यक्तित्व प्रणाली को संरक्षित के रूप में लेते हैं और सामाजिक संरचना में भिन्नता के लिए उनका अध्ययन करते हैं, जबकि मनोवैज्ञानिक सामाजिक संरचना को निरंतर मानते हैं और अपने विश्लेषण के आधार के रूप में व्यक्तित्व प्रणाली में बदलाव की तलाश करते हैं।

अपने काम में बीर्ट (2009) ने कहा है कि मनोवैज्ञानिक और मानवविज्ञानी दोनों के लिए एकमात्र वास्तविक इकाई व्यक्ति है। सामाजिक मानवविज्ञानी सामाजिक प्रणाली के स्तर पर सामाजिक व्यक्ति करते हैं जबकि मनोवैज्ञानिक सामाजिक प्रणाली के स्तर पर करते हैं। अंत में, कुछ सामाजिक मानवविज्ञानी, समाजशास्त्री और मनोवैज्ञानिक का काम एक सामाजिक आधार पर है, जो सामाजिक संरचना और व्यक्तित्व को एकीकृत करने में साझा साधनों को दर्शाता है।

1.3.2.3 सामाजिक मानवविज्ञान और इतिहास (Social Anthropology and History)

इतिहासकार मुख्य रूप से अतीत में रचना रखते हैं, चाहे प्राचीन हो या हाल का, उनका अध्ययन यह जानने के लिए होता है कि क्या हुआ और क्यों हुआ। कुल मिलाकर, वे अधिकतर पिछली घटनाओं और उनकी स्थितियों के विशेष अनुक्रम में रचना रखते हैं नाकि उन सामान्य स्वरूप, सिद्धांत या कानून में जो इन घटनाओं को प्रदर्शित करते हैं। दोनों ही संदर्भों में इनका ध्यान सामाजिक मानवविज्ञानीयों से बहुत कम है। मानवविज्ञानी सामाज केंद्रित होकर (हालाँकि विशेष रूप से नहीं) संस्कृति या समुदाय की वर्तमान स्थिति को समझने में रचना रखते हैं। हालांकि अनुसंधान अलग-अलग हैं, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो महत्वपूर्ण बिंदुओं में बहुत करीबी रिश्ता है। पहला मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है। पहला सामाजिक मानवविज्ञानी जिसका उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति के बारे में रचना है और अंत में, सामाजिक मानवविज्ञान का इतिहास से दो अलग-अलग साझा संदर्भों में भी रही है।
लेकिन इतिहास एक अन्य अर्थ में सामाजिक मानवविज्ञानी के लिए महत्वपूर्ण हो सकता है, जो न केवल अतीत की घटनाओं के एक जूझात के रूप में है, बल्कि वर्तमान को समझाने के लिए, बल्कि समकालीन विचारों के के रूप में भी है जो लोग इन घटनाओं के बारे में सोचते हैं जिसे एक अंग्रेजी दार्शनिक कॉल्वुड "अतीत का इतिहास" कहा है, अर्थात अतीत के बारे में लोगों के विचार, समकालीन स्थिति का एक आंतरिक हिस्सा है जो अंतर मौजूदा सामाजिक संबंधों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं जिसको ज्ञात करना मानवविज्ञानीयों का मुख्य उद्देश्य है। साथ ही, एक ही सामाजिक स्थिति में शामिल लोगों के विचार समूहों में ऐतिहासिक घटनाओं के 'समान' श्रृंखला के बारे में बहुत अलग विचार हो सकते हैं। मिथक और पारंपरिक इतिहास कभी-कभी पिछली घटनाओं के बारे में महत्वपूर्ण सुरुगे दे सकते हैं।

इतिहास लोगों की जागरूक परंपरा का हिस्सा है और उनके सामाजिक जीवन में भी सक्रिय है। यह घटनाओं का सामूहिक प्रतिनिधित्व है। इवांस-प्रिचार्ड ने अपने पुस्तक 'सोशल एंोपोलॉजी एड अदर एसेज' (1950) में कहा था कि प्रकार्यात्मक मानवविज्ञानी (फंशनलिस्ट एंप्रोपोलॉजिस्ट) इतिहास को इस अर्थ में मानते हैं कि यह आमतौर पर तथ्य और कल्पना का मिश्रण, जो उस समय की संस्कृति के अध्ययन के लिए अवश्यक प्रासंगिक है। संस्थाओं के इतिहास की उपेक्षा प्रकार्यात्मक मानवविज्ञानी (फंशनलिस्ट एंप्रोपोलॉजिस्ट) को न रखना काल्क्रमिक संस्थाओं का अध्ययन करने से रोकती है, बल्कि इतिहास क्राईम संस्थाओं के परीक्षण से भी रोकती है, जिसको वह सबसे अधिक महत्व देते हैं, क्योंकि यह इतिहास ही है जो उन्हें एक प्रयोगात्मक स्थिति प्रदान करता है।

यह सच है कि रेडक्लिफ-ब्राउन जैसे कुछ प्रारंभिक मानवविज्ञानी इस बात से इनकार करते हैं कि इतिहास में मानवविज्ञान के लिए कोई प्रासंगिकता थी, क्योंकि उन्हें सोचा था कि इतिहास मुख्यतः विशेष घटनाओं का अध्ययन करता है और अतीत का वैज्ञानिक अध्ययन संबंध नहीं था। लेकिन, इवांस-प्रिचार्ड (1968) ने तर्क दिया कि मानवविज्ञान एक सामान्य अनुशासन नहीं है, बल्कि इतिहास की एक शाखा थी। बहुत पहले बोइस (1897) जो अमेरिकी मानवविज्ञान के संस्थापक थे, ने मानववैज्ञानिक जांच की एक केंद्रीय विशेषता के रूप में ऐतिहासिक जांच को शामिल किया था।

दोनों सामाजिक मानवविज्ञानी और इतिहासकार अपारिचित सामाजिक परिस्थितियों को न केवल अपनी सांस्कृतिक श्रेणियों के रूप में, बल्कि जहाँ तक संभव हो, जिराओं की श्रेणियों के संदर्भ में भी प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। सामाजिक मानवविज्ञान और इतिहास के बीच मुख्य अंतर उनके विषयवस्तु में बहुत अधिक नहीं है (हालांकि आम तौर पर यह भिन्न होता है) बल्कि सामान्यता की अंश में है जिसका वे अध्ययन करते हैं। इतिहासकार विशेष स्थानों पर विशेष संस्थाओं के इतिहास में रुचि रखते हैं। हालांकि एक बहुत ही सामान्य अर्थ में यह सच है कि इतिहासकार इस बात से चिंतित है कि व्यक्ति क्या है, सामाजिक मानवविज्ञानी, समाजशास्त्री जैसे ही, सामान्य और विशिष्ट के अध्ययन के साथ संबंध रखते हैं, और यह
दूसरी मानविवाद और ईथिनोलॉजी (Social Anthropology and Ethnology)

इसास-प्रिंसर्ड के शब्दों में, "इथनोलोजी लोगों को उनके विस्तार के आधार पर वर्गीकृत करता है।" इथनोलोजी में, मानविवाद वर्तमान समय में लोगों के वर्गीकरण को उन्होंने किया है। इथनोलोजी और सामाजिक मानविवाद में अलग-अलग सामाजिक अंतर होता है। दोनों को मानविवाद से अधिक सामाजिक विज्ञान की मान्यता शामिल है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद ही सामाजिक मानविवाद को मानविवाद के साथ जोड़ा गया था। इससे पहले, मानविवाद और सांक्षेपण से संबंधित था। इथनोलोजी का संबंध सभी समूह के सांक्षेपण से है, न कि स्थान या समय को दर्शाता है।

1.3.2.5 सामाजिक मानविवाद और अर्थशास्त्र (Social Anthropology and Economics)

इथनोलोजी एक विशेष संथान पर केंद्रित है, और आर्थिक वस्तुओं के संचार, खपत और वितरण और आर्थिक वर्तमान समय के संबंध में अध्ययन है। मानविवाद में आर्थिक मानविवाद नामक विशेषज्ञता का एक आयात है। यह एक अनमोल तथ्य है कि एक
संस्थागत तरह का अर्थशास्त्र पहली बार मानवविज्ञान में प्रकट होता है जिसके क्षेत्र अनुसंधान का प्रत्यक्ष संबंध विदेशी संस्थागत लोगों से होता है। मानवविज्ञान का अर्थशास्त्र के साथ पर्यावरण अतिच्छादन है। सभी समाजों में पूरी तरह से विकसित मौद्रिक अर्थव्यवस्था नहीं है, सभी समाजों में दूरदूर वस्तुएं हैं और विनियम के कुछ साधन हैं।

सामाजिक मानवविज्ञानी मानव समाज में उत्पादन और वितरण प्रणालियों की सीमा की खोज करने और एक निश्चित समय में, अध्ययन किए जा रहे समाज में, विशेष प्रणाली को समझने में रुचि रखते हैं। अधिकांश सामाजिक मानवविज्ञानी किसी एक समाज की अर्थव्यवस्था के संचालन में वैज्ञानिक रूप से रुचि नहीं है; दूसरी ओर, गैर-मानवविज्ञानी अर्थशास्त्री, अपनी अर्थव्यवस्था के संचालन में उपर दिलचस्पी रखते हैं। वह बहुत अनग-अलग आर्थिक प्रणालियों के संचालन में आमतौर पर ज्यादा दिलचस्पी नहीं दिखाते।

आदित्य अर्थशास्त्र की "आधुनिकता" बनाम "मूलवादी" व्यवस्थाओं के नाम के तहत सामाजिक मानवविज्ञान, पश्चिम के तैयार मॉडल के बीच मिन्न विकल्प लाए पहला आर्थिक विज्ञान, विशेष रूप से सूक्ष्म अर्थशास्त्र जो सार्वभौमिक रूप से मान्य है इसलिए आदित्य समाजों पर भी लागू होता है दूसरी बार आधुनिकतावादी स्थिति मिलाने है तो आदित्य समाजों की अर्थव्यवस्था हेतु एक नए विश्लेषण जो और अधिक उपयुक्त हो विकसित करने की आवश्यकता है।

शराबल डी, सहिलंस एक सामाजिक मानवविज्ञानी हैं, जिन्होंने आदित्य लोगों की अर्थव्यवस्था पर काम किया है। उन्होंने तर्क दिया है कि आधुनिक समाज के लिए पैसा सब कुछ है और एक आदित्य समाज के लिए नातेदारी महत्वपूर्ण है। सहिलंस का आवलोकन सामाजिक मानवविज्ञान और अर्थशास्त्र के बीच संबंध और भेदभाव की व्याख्या करता है।

आदित्य समाजों के बीच अर्थशास्त्र की स्थिति की मात्राओं को मात्राओं की द्वारा दिया गए सिद्धांत से देखा जा सकता है। उनका मानना था कि आदित्य समाजों के बीच अर्थव्यवस्था सामाजिक और सांस्कृतिक चौकों का एक एकीकृत हिस्सा है। उनका आवलोकन यह था कि आधुनिक प्रणाली और कार्यों को पूरी तरह से तभी समझा जा सकता है जब हम संक्षिप्ति और समाज के अनु पहलुओं के साथ उनके आंतरिक बंधों को देख।

बेशक, सामाजिक मानवविज्ञान आदित्य समाजों का अध्ययन करता है, और यह इसे अर्थशास्त्र के अनुसार के करीब लाता है। सामाजिक मानवविज्ञान और अर्थशास्त्र के बीच इस अनुसंधान संबंध के बावजूद, यह कहा जाता है कि प्रत्येक का अपनी अलग स्थायित्व स्थिति है। वे अपने दृष्टिकोण और उपागमों में भिन्न होते हैं।
1.3.2.6 सामाजिक मानवविज्ञान और राजनीति विज्ञान (Social Anthropology and Political Science)

मानवविज्ञान का आधार उद्योक्तावाद, जीव विज्ञान और मानवी, वेचर और दुर्खीम जैसे महान सामाजिक सिद्धांतकार थे, जबकि राजनीतिक विज्ञान की नींव शास्त्रीय दर्शन था। जहाँ सामाजिक मानवविज्ञान समाज के सभी उप-परिसंचालनों से संबंधित है वहाँ राजनीतिक विज्ञान, राजनीतिक प्रणाली और सत्ता पर केंद्रित है। हालांकि, वह मानना गलत होगा कि मानवविज्ञान का संबंध सत्ता से नहीं है। एक प्रमुख ब्रिटिश सामाजिक मानवविज्ञानी, एडमंड लीच (1965) ने तर्क दिया है कि सत्ता सभी सामाजिक जीवन का सबसे बुनियादी पहलू है, और इसलिए मानवशास्त्रीय अध्ययन के लिए केंद्रीय है, और वास्तव में मानवविज्ञान में विशेषज्ञता का एक क्षेत्र है जिसे राजनीतिक मानवविज्ञान कहा जाता है।

सामाजिक मानवविज्ञानी, राजनीतिक धृष्टिकोण से कुछ घटनाओं को देखते हैं समाज के परिष्कार, अध्ययनकर्ता के लक्ष्यों और सैद्धांतिक आकृतिक आधार के आधार पर मानवशास्त्रीय व्यवहारों का एक श्रृंखला है। राजनीतिक और अन्य गतिविधियों का अतिक्रमण अधिक जटिल समाजों की तुलना में सरल समाजों में अधिक है। इसे थोड़ा अलग तरीके से रखने के लिए, विभिन्न संस्कृतिक पहलुओं की कम कार्यान्वयन विश्लेषण भी है। सरल समाज की गतिविधियों में सामाजिक मानवविज्ञानी स्पष्ट रूप से और मुख्य रूप से राजनीतिक संबंध पर ध्यान केंद्रित करते हैं जो आमतौर पर अन्य प्रकार की गतिविधियों में अत्यधिक होते हैं।

राजनीतिक गतिविधि सभी मानव सामाजिक क्रिया का एक फल है और "रूचि व्यवस्थापन" सभी प्रणालियों के एक सार्वभौमिक कार्य है। सामाजिक मानवविज्ञानी नीतियों के एक अत्यधिक विविध समुच्चय का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनके लिए ऐसे राजनीतिक सिद्धांत लागू होना चाहिए जो सार्वभौमिकता का दावा करते हैं। एक राजनीतिक वैज्ञानिक के लिए मानवविज्ञान साहित्य की उपस्थिति अथवा सही सिद्धांत परिक्रमा के लिए एक प्रेरणा है, बल्कि स्थानीय राजनीतिक स्थितियों को भी समझने का आधार है। मानवविज्ञान का राजनीति विज्ञान में सैद्धांतिक योगदान उद्योक्तावादी धृष्टिकोण है। कोहेन, (1967) ने स्पष्ट रूप से कहा कि, सामाजिक मानवविज्ञानी स्वयं के हमेशा समाजों के उद्योक्तावादी ढांचे का अभ्यन्तर करते हैं। नए राष्ट्र के स्थानीय क्षेत्रों और संस्थानों पर अनुसंधान राजनीतिक वैज्ञानिक और सामाजिक मानवविज्ञानी को एक ही क्षेत्र और एक ही ज्ञान के अध्ययन से जोड़ा है। गैर-परिक्षित दुनिया के कई हिस्सों में, स्थानीय राजनीतिक प्रणालियां और सामाजिक-राजनीतिक संस्थाओं के रूपों पर बहुत अधिक निष्ठुर हैं जो अभी भी उनकी पारंपरिक संस्कृतियों से काफी प्रभावित हैं। सामाजिक मानवविज्ञान राजनीति विज्ञान को नृत्यातिपत्ताओं के विशेषण में मदद कर सकता है और क्षेत्र में प्रतिभागी अवलोकन तकनीकों के उपयोग के लिए शोधकर्ताओं को तैयार कर सकता है (आर. कोहेन, 1967)।
1.3.2.7 सामाजिक मानविवात्मक और सामाजिक कार्य (Social Anthropology and Social Work)

कीथ हार्ट (1996: 42) के अनुसार एकमात्र चीज जो वास्तव में मानविवात्मक को शेष सामाजिक विज्ञानों से अलग कर सकती है, वह यह है कि, यह मानव प्रकृति और संस्कृति के साथ-साथ समाज को भी संबोधित करता है। समाज और संस्कृति के बारे में ज्ञान सामाजिक कार्यकर्ता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। सामाजिक मानविवात्मक, व्यक्तिगत संबंधों से लेकर वैशिष्ट्यिक राजनीतिक और आर्थिक संबंधों तक के स्तरों पर सामाजिक संबंधों का व्यवस्थित अध्ययन है। यह अतीत और वर्तमान दोनों में दृष्टियों के सभी हिस्सों के लोगों के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, भौतिक और भाषाई व्यवहार की जांच करता है। सामाजिक कार्यकर्ता कई तरह से लोगों की मदद करते हैं जैसे: - दूसरों के साथ व्यवहार करना, उनकी व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामुदायिक समस्याओं को हल करना और उनके दैनिक जीवन को प्रभावित करने वाली सामाजिक और पर्यावरणीय कार्यकर्ताओं को योजना। सामाजिक कार्यकर्ता विशिष्ट सामाजिक और सांस्कृतिक संबंधों में अपने व्यक्तिगत का अभ्यास करते हैं जो निश्चित रूप से उनके अभ्यास के तरीके को प्रभावित करता है (पियाने, 1997). सामाजिक समस्याओं को सुधारने और संरचनाओं का हल करने के लिए योजना बनाने से पहले उन्हें समाज के मूलबित्तों, मानदंडों, विश्वासों, विचारधाराओं को ध्यान में रखना होगा।

सामाजिक कार्यकर्ता की खून को समझना भी उतना ही जरूरी है। सामाजिक कार्यकर्ता स्वयं उन समाजों के उदय हैं, जिनमें वे रहते हैं और अनिवार्य रूप से इससे प्रभावित होते हैं। समाज और संस्कृति के बारे में ज्ञान भी आवश्यक है ताकि सामाजिक कार्यकर्ता को स्वयं या खुद के बारे में जागरूकता प्राप्त करने में मदद मिल सके। सामाजिक कार्यकर्ता का व्यक्तित्व अभ्यास में स्वतंत्रता होने वाला एक प्रमुख उपकरण है और संस्कृति, व्यक्तित्व के विकास में एक प्रमुख भूमिका निभाती है।

समाज और संस्कृति बुनियादी अवधारणाएं हैं जिनका उपयोग सामाजिक मानविवात्मक हमारे आसपास की सामाजिक वास्तविकता को समझने के लिए करते हैं। सामाजिक मानविवात्मक में, हम आमतौर पर सामाजिक प्रणाली, उनकी संरचना, उनके संगठन, कार्य, आदि के विभिन्न तुलनात्मक घटकों का अध्ययन करते हैं। सामाजिक प्रणाली अन्योन्य गतिविधियां, संस्थाएं और मूल्य हैं जिसका अध्ययन सामाजिक मानविवात्मक का काम है। सामाजिक प्रणालियों के इन घटकों की पहचान कर, सामाजिक मानविवात्मक में, विभिन्न सिद्धांत और अवधारणाएं दूसरों के इन घटकों को समझने का प्रयास करते हैं। सामाजिक मानविवात्मक और सामाजिक कार्य कई पहलुओं में भिन्न भिन्न होते हैं। सामाजिक मानविवात्मक में समाज के लिए सैद्धांतिक दृष्टिकोण है और सिद्धांत निर्माण इसकी प्रमुख उद्देश्य है। दूसरी ओर सामाजिक कार्य व्यावहारिक में चाहिए और समस्याओं में निर्देश दिलाने वाला होना चाहिए। सामाजिक कार्य और सामाजिक मानविवात्मक के बीच एक और महत्वपूर्ण अंतर यह है कि सामाजिक मानविवात्मक एक मूल्य मुक
दूर िशा िनदे  
शालय  
महा मा  
गांधी अंतररा ी  
य िहंदी िव व  
िवालय  
एम  
ए  
समाजशा  
ितीय सेमे ट  
र  
सामािजक मानविवान  
अनुशासन है। उेय और पूवाह से मु होना एक गुण माना जाता था। दूसरी ओर सामाजिक कार्य मानवीय 
सिद्धांतों पर आधारित मूल्य आधारित पेशा है (जॉनसन, 1998:14). उपरोक्त चर्चा से यह बहुत स्पष्ट है कि 
सामाजिक कार्य अक्सर अपनी अवधारणायें विभिन्न विषयों से उदार लेते हैं। इस प्रकार हम यह निकर्ष 
निकाल सकते हैं कि सामाजिक मानवविज्ञान के विपरीत, सामाजिक कार्य ज्ञान स्रोतों की एक विस्तृत श्रृंखला 
से आता है जिसमें पूर्ववर्ती, अनुभव और सामान्य ज्ञान शामिल हैं।

1.3.2.8 सामाजिक मानवविज्ञान और सांस्कृतिक अध्ययन (Social Anthropology and 
Cultural Studies)

इक्कीसवीं सदी की दुनिया एक समय संस्कृति की ओर बढ़ रही है। सामाजिक वैज्ञानिक 
सांस्कृतिक अध्ययनों को समाजशास्त्र, सामाजिक इतिहास, फिल्म / वीडियो, सांस्कृतिक मानवविज्ञान और 
औद्योगिक समाजों में विभिन्न सांस्कृतिक घटनाओं का अध्ययन करने हेतु एक संयोजन के रूप में परिभाषित 
करते हैं। सांस्कृतिक अध्ययन के शोधकर्ताओं मूल रूप से इस बात पर ध्यान केंद्रित करते हैं कि किसी विशेष 
घटना को विवाहारुद्ध, नृत्य, सामाजिक धर्म या लिंग के मामलों से कैसे जोड़ा जाता है। मूल रूप से, 
सांस्कृतिक अध्ययन रोजमर्रा के जीवन के अर्थ और प्रभावों से संबंधित है। सांस्कृतिक घटनाओं में उन तरीकों 
को शामिल किया जाता है जिससे लोग अपनी संस्कृति में विशेष कार्य करते हैं। हर संस्कृति में लोगों के काम 
करने के तरीकों से विशिष्ट अर्थ जुड़े होते हैं।

इस प्रकार, सांस्कृतिक अध्ययन हमें नए तरीकों के साथ सार्थक रूप से जुड़ने और बातचीत करने में 
सक्षम बनाते हैं। यह हमें कई जटिल तरीकों के बारे में जागरूक करता है, जो हमारे जीवन पर प्रभाव डालती है 
और हमारी संस्कृतियों का निर्माण करती है। सांस्कृतिक अध्ययन में फिल्म और अन्य सांस्कृतिक संस्थाओं 
और ग्रंथों को गंभीर रूप से बनाने के लिए सामाजिक प्रक्रियाओं की श्रमिकता है। यह हमें यह समझाता है कि 
कैसे हमारी पहचान पैदा की जाती है और यह सोचने के लिए कि हम संभवतः उह कैसे आकार 
दे सकते है। इस प्रकार, सांस्कृतिक अध्ययन को एक ऐतिहासिक, मानवतावादी अनुशासन और साथ ही एक 
प्राकृतिक विज्ञान के रूप में देखा जा सकता है, जो उस पद्धति या दृष्टिकोण पर निर्भर करता है जिसका उपयोग 
सांस्कृतिक घटनाओं के अध्ययन में किया जाता है। 'संस्कृति' को एक प्राकृतिक अवधारणा के रूप में 
समझने की पारंपरिक प्रूढ़ता अभी भी न केवल आम लोगों में, बल्कि संस्कृति के अकादमिक क्षेत्र में लोग 
लोगों के बीच भी काफी प्रभावी है। संस्कृति की ऐसी समझ के परिसर स्वरूप सांस्कृतिक संस्कृति के विभिन्न 
रूपों में दर्शावे जिसे संक्षेप में बताया जा सकता है। संस्कृति की ऐसी समझ के परिसर स्वरूप सांस्कृतिक संस्कृति के 
विभिन्न रूपों में दर्शावे जिसे संक्षेप में बताया जा सकता है। संस्कृति की ऐसी समझ के परिसर स्वरूप सांस्कृतिक संस्कृति के 
विभिन्न रूपों में दर्शावे जिसे संक्षेप में बताया जा सकता है। संस्कृति की ऐसी समझ के परिसर स्वरूप सांस्कृतिक संस्कृति के 
विभिन्न रूपों में दर्शावे जिसे संक्षेप में बताया जा सकता है। संस्कृति की ऐसी समझ के परिसर स्वरूप सांस्कृतिक संस्कृति के
से वांछत नहीं है क्योंकि यह 'देशज' या 'लोक' संस्कृति की बजाए, 'उच्च' और 'कुलीन' संस्कृति के 'उत्सव' पर आधारित है। हालांकि, वर्तमान में, 'उच्च' और 'निम्न' जैसे शब्द अब सांस्कृतिक सिद्धांतों में उपयोग नहीं किए जाते हैं, क्योंकि सभी संस्कृतियों को समान माना जाता है। सामाजिक मानवशास्त्रीय ज्ञान के अनुसार हर संस्कृति का अपना दृष्टिकोण होता है।

1.3.2.9 सामाजिक मानवविज्ञान और साहित्य (Social Anthropology and Literature)

विद्वान और शिक्षाविद बहुत भार सामाजिक मानवविज्ञान और साहित्य के बीच एक सख्त अनुशासनात्मक सीमा की वैधता पर सवाल उठाते हैं, ऐसे समय में जब स्कूल और कॉलेज ऐसे अध्यापकों को नियुक्त कर रहे हैं जो दो या दो से अधिक अनुगमन को मिला कर एक विभाग की स्थापना कर रहे हैं। सामाजिक मानवविज्ञानी द्वारा नृजातीयवृतांत में साहित्य का उपयोग किया जा सकता है, उदाहरण के लिए, पीढ़ियों का जीवन इतिहास एक महत्वपूर्ण आंकड़ा को सोते हो सकता है। पांपरा कथाओं का संग्रह लोगों के नृजातीयवृतांत में मूल्यों को जोड़ सकता है। अनुशासन और प्रदर्शन का अध्ययन करने में, विक्टर टनर समकालीन कविताओं के साथ-साथ नवजागरण नाटकों के दृष्टिकोण का भी उपयोग करते हैं।

साहित्य को सामाजिक 'विरुद्ध साक्ष्य' या सामाजिक 'प्रवचन' के रूप में परिभाषित करने और सांस्कृतिक आलोचना के भीतर साहित्यिक अध्ययनों को फिर से परिभाषित करने के भीतर प्रयासों में समाजशास्त्री और मानवविज्ञानीय ने समाज और संस्कृति को अपने प्राथमिक विषयों के रूप में लाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है (एशले,1990)। आज, सामाजिक मानवविज्ञान सांस्कृति के अध्ययन में संदर्भ और अनुभव का प्रतिनिधित्व करने के लिए नए तरीके लेकर आए हैं। नृजातीयवृतांत पाठ, कथा, रूपक और "सची कपना" के रूप में नया दृष्टिकोण है।

सामाजिक मानवविज्ञानी भी अलग-अलग रूपों का अध्ययन करने के लिए मौखिक साहित्य का उपयोग करते हैं जिन्हें साहित्यिक गुणों से युक्त माना जा सकता है। यह आयाम मौखिक इतिहास जैसे मिथकों, कथाओं, महाकाव्यों, गीतों, प्रशंसा काल्यान, लघुकथा, और गीतों के पाठ और कभी-कभी नीतिवचन, नाटक और पहेलियों को भी सम्बद्ध करता है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें साहित्य के क्षेत्र के दोनों विद्वान, भाषाई अध्ययन और लोक कलाकार लंबे समय से सामाजिक मानवविज्ञानी के साथ बातचीत कर रहे हैं।

इस प्रकार सामाजिक मानवविज्ञान और साहित्य अध्ययन का उद्देश्य साहित्य के अनुभव को मानवविज्ञान में एकीकृत कर सार्वभौमिक करना है। साहित्यिक अध्ययन और अध्ययन के अन्य क्षेत्र के बीच की सीमाओं को तोड़ने और सांस्कृतिक अध्ययन में साहित्यिक अध्ययन को एकीकृत करने का इरादा बाद की 20 वीं शताब्दी में एक स्पष्ट महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। व्याख्यात्मक मानवविज्ञान के विकास में कल्पनाकोश गीत जो भूमिका को शायद ही कभी कम करके आंका जा सकता है। वह सबसे प्रसिद्ध सामाजिक मानवविज्ञानी में से एक है। फिर भी आज, व्याख्यात्मक मानवविज्ञान के भीतर, गीत के आलोचक बड़े रहे
है और उनका प्रभाव कम हो रहा है। "गहन वर्णन" क्या है? इसकी मुख्य विशोषिताएं क्या हैं? यह कैसे किया जाता है? हमें यह कैसे पता चलता है कि "मूल निवासी का दृष्टिकोण" अर्थात्, किसी अन्य संस्कृति के सदस्य कैसे सोचते हैं, महसूस करते हैं और अनुभव करते हैं? "गहन विवरण" और मानवशासीय संदर्भ के बीच क्या संबंध है? आदि कुछ बढ़ते प्रश्न हैं।

इस प्रकार यह व्याख्यातंत्र मानवविज्ञान की समानता का दर्शाता है जो मुख्य रूप से देशज दृष्टिकोण को प्राप्त करने से संबंधित है। यह कुछ प्रारंभिक प्रश्नों की उठाई है जैसे- हम कैसे मूल इतिहास और साहित्य को पढ़ते चाहिए? क्या हम ऐसी मूल अभिव्यक्तियों को आंकड़ों के रूप में, सांस्कृतिक कलाकृतियों के रूप में उपयोग कर सकते हैं? नृजातियों का संवाद को ऐसा करने में क्या संशोधन करना पड़ सकता है? ये कुछ ऐसे सवाल हैं जिनके जवाब देने के लिए साहित्य मदद करेगा।

1.3.2.10 सामाजिक मानवविज्ञान और जनस्वास्थ्य (Social Anthropology and Public Health)

जनस्वास्थ्य "सार्वजनिक, निजी, समुदाय और व्यक्ति के रोग को रोकने, जीवन को लम्बा करने और समाज के संगठित प्रयासों और समाज, संगठनों के सूचित विकास के माध्यम से स्वास्थ्य को बढ़ावा देने का विज्ञान है" (Winslow, C.E.A.1920)। मानवविज्ञान, चिकित्सा और चिकित्सा पद्धति के बीच सम्बन्धों को अच्छी तरह से प्रलेखित करता है। सामान्य मानवविज्ञान ने बुनियादी चिकित्सा विज्ञान में एक उलेखनीय स्थान हासिल कर लिया है (जो उन विषयों के अनुरूप है जिन्हें आमतौर पर पूर्व-नैदानिक के रूप में जाना जाता है)। इसलिए नहीं क्योंकि प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल, प्रामाण्य चिकित्सा और अंतर्राष्ट्रीय जनस्वास्थ्य में ज्ञान के एक उपकरण के रूप में बीसवीं शताब्दी में नृजातियों का संबंध ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

चिकित्सा द्वारा नृजातियों का परिचय तब हुआ जब सामाजिक मानवविज्ञान ने अपनी व्यवसायिक पहचान के एक रूप में नृजातियों को अपनाया और सामाजिक मानवविज्ञान की प्रारंभिक परियोजना से प्रस्ताव करना शुरू कर दिया।

लोकप्रिय चिकित्सा, या लोक चिकित्सा की अवधारणा, बीसवीं शताब्दी के महत्वपूर्ण ही जाती है। डॉक्टर, मानवविज्ञानी और चिकित्सा नृविज्ञानियों ने इन शब्दों का उपयोग स्वास्थ्य पेशेवरों के मदद के अलावा संसाधनों का वर्णन करने के लिए किया, जो कि ऐसे से उनके देशज ज्ञान पर जोर देने के साथ। इसके अलावा, लोकप्रिय चिकित्सा पद्धतियों के आसपास के रीति-रीतियों का अध्ययन करने के साथ ही विज्ञान और धर्म के बीच संबंध भी पश्चिमी मनोचिकित्सकों के लिए चुनौती बना हुआ है। डॉक्टर लोकप्रिय चिकित्सा को मानवशासीय
अवधारणा में बदलने की कोशिश नहीं कर रहे; बल्कि वे वैज्ञानिक रूप पर आधारित हो के इसका निर्माण करना चाहते हैं।

चिकित्सा अवधारणा में वे बायोमेडिसिन की सांस्कृतिक सीमा को स्थापित करने के लिए उपयोग कर सकते हैं (कोमलेस, 2002). व्यावसायिक मानविवाही ने बीमारीं शताब्दी की शुरुआत में लोक चिकित्सा की अवधारणा का उपयोग करना शुरू किया। उन्होंने जादूई प्रथाओं, चिकित्सा और धर्म के बीच अंतर करने के लिए इस अवधारणा का उपयोग किया। इसके अलावा, उन्होंने इस अवधारणा का लोकप्रिय चिकित्सकों और स्व-चिकित्सा पद्धतियों की भूमिका और महत्व का पता लगाने का प्रयास किया। ये प्रौद्योगिक मानविवाही लोकप्रिय चिकित्सा को कुछ सांस्कृतिक समूहों के विशिष्ट सांस्कृतिक अभ्यास के रूप में देखते थे जो बायोमेडिसिन की सार्वभौमिक प्रथाओं से अलग थे। इस प्रकार, यह माना जा सकता है कि इस संकृति की अपनी विशिष्ट लोकप्रिय औपचारिकता है जो उसकी सामाजिक सांस्कृतिक विशेषताओं पर आधारित है।

इस अवधारणा के तहत, चिकित्सा प्रणालियों को प्रत्येक नृजातीय समूह के सांस्कृतिक इतिहास के विशिष्ट उत्पाद के रूप में देखा जाता है। वैज्ञानिक बायोमेडिसिन को एक अन्य चिकित्सा प्रणाली के रूप में मानते हैं और इसलिए एक सांस्कृतिक रूप का अर्थ दिया किया जाता है। जनस्वास्थ्य की समझ और अभ्यास में सामाजिक मानविवाही कृष्टिकृत, विधियों, सूचना और सहयोग की अभिव्यक्ति व्यापक रूप से इकट्ठा चिकित्सा सदृश बताई गई है। सामाजिक मानविवाही का विशेष रूप से स्थानीय प्रतिभागियों के सहयोग से काम करते हुए, विशेष रूप से जनस्वास्थ्य समस्याओं के समाधान के लिए हस्तक्षेप लेना व जानजान करना है। उनका आधारित कार्य मूल्यांकनकारी के रूप में काम करना है, जनस्वास्थ्य संस्थाओं की गतिविधियों और जनस्वास्थ्य कार्यक्रमों की सफलताओं और विफलताओं की जांच करना है। उनका काम प्रमुख अंतरराष्ट्रीय जनस्वास्थ्य एजेंसियों और उनके कामकाज पर ध्यान केंद्रित करना है, साथ ही साथ संक्रामक रोग और अन्य आपदाओं के खतरों के लिए जनस्वास्थ्य प्रतिक्रियाएं भी हैं। इस प्रकार जनस्वास्थ्य में सामाजिक मानविवाही की भूमिका एक सामाजिक मानवाशीर्षी कृष्टि के साथ स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं की जांच करना है, जैसे (i) जनस्वास्थ्य समस्याओं की सामाजिक मानवाशीर्षी समझ (ii) जनस्वास्थ्य हस्तक्षेपों का सामाजिक मानवाशीर्षी डिजाइन (iii) जनस्वास्थ्य कार्यक्रमों के सामाजिक मानवाशीर्षी मूल्यांकन (iv) सामाजिक स्वास्थ्य और जनस्वास्थ्य के सुधार के मानवाशीर्षी आलोचना। इस प्रकार, सामाजिक मानविवाही की भूमिका जनस्वास्थ्य के अभ्यास में संकृति और समाज के अंतर को भरना है (महन और इनहॉन, 2011)।
1.3.2.11 सामाजिक मानविवान और नीति एवं शासन (Social Anthropology and Policy and Governance)

इकरारस्वी सदी, सामाजिक नीति बनाए की प्रक्रिया, तेजी से बदल रही है। इसके परिणामस्वरूप मानविवानी, अन्य सामाजिक वैज्ञानिकों के साथ मिलकर, सामाजिक और पर्यावरणीय नीतियों में बदलाव पर वैश्विककरण के इस नए चरण के प्रभावों पर गंभीर अध्ययन कर रहे हैं। सामाजिक मानविवान ने एक उपक्रम के रूप में योगदान दिया है, और सामाजिक नीति अनुसंधान, अभ्यास, और नए तरीकों की वकालत की है; इसकी प्राथमिकता इसलिए भी बढ़ी है क्योंकि दुनिया तेजी से वैश्विककरण की प्रक्रिया के कारण बदल रही है (ओकोगु और मेन्चर, 2000)। वैश्विककरण का अध्ययन करने वाले सामाजिक मानविवानी, राज्य, राजनीति, विकास, और अन्य विषयों के साथ, अपने शोध और नीति की केंद्रीयता की खोज कर रहे हैं, और नीति के मानविवान में काम का एक निकाय विकसित हो रहा है। यद्यपि कुछ सामाजिक मानविवानी जो नीति का अध्ययन करते हैं वे सार्वजनिक वहस या वकालत में शामिल हो गए, जिससे मानविवान ने कई आंदोलनों में सक्रियता से भाग लिया, सार्वजनिक नीति का मानवशास्त्र, नीतिगत मुद्दों और प्रक्रियाओं और उन प्रक्रियाओं के महत्वपूर्ण विशेषज्ञ में अनुसंधान के लिए समर्पित है। हालांकि, मानविवानी का आम तौर पर सार्वजनिक नीति पर अध्याशिखियों की तुलना में कम प्रभाव होता है, ऐसे कई तरीके हैं जिनके द्वारा मानविवानी अपनी राय रखते हैं, जैसे कि (क) हम जिन लोगों का अध्ययन करते हैं, उनकी शरीर का दस्तावेजीकरण करते हैं, या अन्य गरीब या असंतुष्ट बेघर लोगों के अधिकारों के रूप में कार्य करना (क्ष) सरकारी नीतियों के प्रभावों को सार्वजनिक करने और वैकल्पिक नीतियों का विशेषण करने, लिखने का कार्य (ग) चुने हुए अधिकारियों के लिए सार्वजनिक गवाह के रूप में काम करना (ड) अपनी विभिन्न भूमिकाओं में सहयोग एजेंसियों के सदस्यों या इन एजेंसियों के भीतर काम करने वाले स्थानीय लोग और उनकी सांस्कृतिक पूंजी से समन्वित महत्वपूर्ण मुद्दों को इंगित करने के लिए काम करना। (च) प्रतिरोध की रणनीतियों का अध्ययन और मानविवानी का काम कैसे देशज लोगों को सूचित कर सकता है (वेसेल, एट अल 2005)।

लंबे समय से मानविवानियों के बीच एक सैद्धांतिक और व्यक्तिगत विभाजन हुआ है, जो शुद्ध अनुसंधान पर ध्यान केंट्रिक्ट कर रहा है और जो मानव द्वारा सामना की जा रही समस्याओं पर ध्यान केंट्रिक्ट कर रहा है। तेजी से बदलती दुनिया में, मानविवानी के अनुभवजन और नृवंशिवान के तरीकों में दर्शाया गया है क्योंकि क्षेत्रिय नीतीं सक्रिय रूप से व्यक्तियों की नई श्रेणियों का निर्माण करती है। वेसेल, (2005) का सुझाव है कि लंबे समय से स्थापित "राज्य" और "निजी", "स्थानीय" या "राज्यी" और "वैश्विक," "मैंक्रो" और "माइक्रो," "टॉप डाउन" और "डाउन टॉप", और "कैंट्रीक्रूट" और "विकैंट्रीक्रूट" जैसी श्रेणियों का निर्माण करते हैं जो वर्तमान गतिशीलता को समझने में विफल हैं।
यद्यपि कुछ सामाजिक मानवविज्ञानी कृषि में नीति-संबंधी परियोजनाओं पर पहले के दौर में काम करते थे, लेकिन पर्यावरण और कृषि के क्षेत्र में लागू और नीतित्तव कार्यों में मानवविज्ञानी की संख्या में काफी वृद्धि हुई है क्योंकि बहुराष्ट्रीय निगमों ने सरकारों पर सामान्य हासिल की है। मानवविज्ञानी के यह मुद्दे में रच रखते हैं जैसे कि खेती के पेयपान, पानी का उपयोग, पेट्रोलिमिक्स और अन्य इनपुट का उपयोग, मोनो क्रॉसिंग में वृद्धि (भविष्य के अकाल के लिए इक्सको सभी संभावित क्षमता के साथ) और गुणवत्ता के जीव के मुद्रे।

अन्य लोग जैव विविधता के नुकसान से संबंधित मुद्दों के साथ शामिल रहे हैं, विशेष रूप से पारंपरिक समाजों को उनकी मूल प्रजातियों को संरक्षित करने में मदद करने के लिए अंतरराष्ट्रीय लोगों ने सरकार द्वारा उन्नीत हो गए। इसलिए नीति-संबंधी मुद्दों के लिए दो क्षेत्रों के साथ काम करने वाले एकत्रीत वर्णातिक धातु और अधिकांश मानवविज्ञानी के तरीके से यही अनुमान उत्पन्न करते हैं।

इन सामाजिक मानवविज्ञानी पारंपरिक रूप से जमीनी स्तर पर काम करते हैं और लोगों और उनकी समस्याओं और मुद्दों को अच्छी तरह से समझने का प्रयास करते हैं। सामाजिक मानवविज्ञानी की सबसे बड़ी ताकत में से एक राजनीतिक अथवा संविधान के सैद्धांतिक मुद्दों से निपटने के लिए न केवल इस मामले में प्रणालियों को समय रूप से देखने की उनकी क्षमता है, बल्क वैश्विकरण के सामाजिक, संशोधन के और आर्थिक परिणामों पर पधार पड़ने के लिए नीति निर्माताओं को प्रभावित करते हैं।

निश्चित रूप से विरोध का दस्तावेजीकरण करने में सामाजिक मानवविज्ञानी के लिए कई भूमिकाएँ हैं। पूरे शताब्दी में सामाजिक मानवविज्ञानी ने संकृति और अनुभव की जीवनसाथी के साथ संरचना पर ध्यान देने के लिए नीति निर्माताओं को प्रभावित करने के लिए काम करना है।

सामाजिक मानवविज्ञानी पारंपरिक रूप से जमीनी स्तर पर काम करते हैं और लोगों और उनकी समस्याओं और मुद्दों को अच्छी तरह से समझने का प्रयास करते हैं। एक सामाजिक मानवविज्ञानी का सबसे बड़ा ताकत में से एक राजनीतिक अथवा संविधान के सैद्धांतिक मुद्दों से निपटने के लिए न केवल इस मामले में प्रणालियों को समय रूप से देखने की उनकी क्षमता है, बल्क वैश्विकरण के सामाजिक, संशोधन के और आर्थिक परिणामों पर पधार पड़ने के लिए नीति निर्माताओं को प्रभावित करने के लिए काम करना है।

निश्चित रूप से विरोध का दस्तावेजीकरण करने में सामाजिक मानवविज्ञानी के लिए कई भूमिकाएँ हैं। पूरे शताब्दी में सामाजिक मानवविज्ञानी ने संकृति और अनुभव की जीवनसाथी के साथ संरचना पर ध्यान देने के लिए नीति निर्माताओं को प्रभावित करने के लिए काम करना है।

1.3.2.12 सामाजिक मानवविज्ञान और प्रबंधन (Social Anthropology and Management)

पिछली शताब्दी में, सामाजिक मानवविज्ञानी ने संस्कृति अवधारणा और अभ्यास संबंधी नीति-संबंधी मानवविज्ञानी के माध्यम से मानव व्यवहार का एक समग्र विश्लेषणात्मक समझ बनाने का प्रयास किया है। यद्यपि सामाजिक मानवशास्त्रीय अवधारणाओं को बड़े पैमाने पर शिक्षाविदों ने परिभाषित किया है, लेकिन स्वास्थ्य देखभाल,
शिक्षा, व्यवसाय और उद्योग जैसे क्षेत्रों में काम करने वाले शोधकर्ताओं ने सामाजिक मानवशासी की अवधारणाओं का उपयोग किया है। इन शोधकर्ताओं ने बार-बार यह साबित किया कि व्यापक विषय की समझ के लिए एक मानवशासी परिप्रेक्ष्य में बहुत कुछ है। पहली नज़र में, दो पेशे - मानवविज्ञान और प्रबंधन अत्यधिक भिन्न दिखाई देते हैं। लेकिन करीब से देखने पर सामान्य रूप से कई बिंदुओं का पता चलता है। उदाहरण के लिए, सामाजिक मानवविज्ञान की तरह, प्रबंधन व्यवसायी मानवीय व्यवहार से बाहर निकलने का प्रयास करते हैं क्योंकि वे व्यवसाय करने वाले लोगों के आयामों को संबोधित करते हैं। इसलिए, सामाजिक मानवविज्ञान और प्रबंधन विद्याओं के बीच एक मूल्यांकन आदान-प्रदान होता है। कुछ हद तक यह सामाजिक मानवविज्ञान सलाहकार के रूप में काम कर रहे हैं और कई सलाहकार मानवशासी परिप्रेक्ष्य का उपयोग कर रहे हैं (एनएपीए बुलेटिन, 1990)।

समकालीन व्यापारिक दुनिया में परिवर्तन की दर कई मायनों में व्यापारिक जगत को चुनौती देती है। किसी व्यवसाय का अस्तित्व प्रबंधन पर निर्भर करता है। सामाजिक मानवविज्ञान परामर्शदाताओं और उनके ग्राहकों को पांच प्रमुख रुझानों का सफलतापूर्वक जवाब देने में मदद कर सकता है जो भविष्य में हम सभी के जीने और काम करने के तरीके को आकार देगे वे कई श्रेणियों में हैं (Giovannini & Rosansky, 1998)।

1. बढ़ता वैश्विकरण
2. जनसांख्यिकीय रुझान
3. सामाजिक मुद्दे
4. यांत्रिक नवाचार (टेकनोलॉजिकल इनोवेशन)
5. संगठनात्मक परिवर्तन

एक क्षेत्र विज्ञान के रूप में सामाजिक मानवविज्ञान की अवधारणा, प्रबंधन के वैचारिक और पद्धति दोनों क्षेत्रों में बहु-अनुग्रहस्तम्भ अनुसंधान को विकसित करने की बड़ी क्षमता रखती है। मानवविज्ञान की मुख्य विशेष विधि प्रतिबंधियों अन्तर्लोकण है। वह विधि संस्थानों और अन्य सामाजिक पत्ताओं में परिवर्तन की प्रक्रियाओं को समझने में, तथा ज्ञान प्रबंधन के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। सामाजिक मानवविज्ञान का उद्देश्य प्रतिभागियों द्वारा संबंधित क्षेत्रों की व्याख्या और अनुभव कैसे किया जाता है उन संदर्भ का स्तरीक विचार और स्तरीक समझ करता है। यह अनुसंधान क्षेत्र के अस्पष्ट और मौन पहलुओं को समझने में सक्षम बनाता है। सामाजिक मानवविज्ञान, हाल के घटनाक्रम की ध्यान में रखते हुए, तीन श्रेणियों में प्रबंधन के अध्ययन, अभ्यास और शिक्षा में योगदान कर सकता है।
1.3.3 सारांश (Summary)

इस प्रकार, सामाजिक और सांस्कृतिक मानवविज्ञानी समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, सामाजिक कार्य, सांस्कृतिक अध्ययन, साहित्य, सार्वजनिक स्वास्थ्य, नीति और शासन अध्ययन, प्रबंधन, आदि जैसे सामाजिक विज्ञानों से प्राप्त दृष्टिकोण की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल करते हैं। इस प्रकार, मानव व्यवहार की समझ के लिए अपनी खोज में इन सभी विषयों को संबंधित करने में सक्षम है, और उन सभी को उस तरीके की व्याख्या करने के लिए आकर्षित करता है जिसमें सभी जैविक और सामाजिक कारक समग्रता में मनुष्य की संस्कृति और व्यवहार को चित्रित करते हैं।

1.3.4 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. कौन-कौन से विषयों को सामाजिक मानवविज्ञान ka संज्ञानात्मक विषय माना जाता है?
2. सामाजिक और मनोविज्ञान में सामाजिक मानवविज्ञान का क्या योगदान है?
3. क्या इतिहासकार पिछली घटनाओं और उनके विशेष अनुकूल की स्थितियाँ का अध्ययन सामाजिक मानवविज्ञानी के दृष्टिकोण को शामिल किए बिना कर सकते हैं?
4. सांस्कृतिक अध्ययन और साहित्य सामाजिक मानवविज्ञान से कैसे संबंधित हैं?
5. पारंपरिक और साथ ही समकालीन समाज की विभिन्न समस्याओं को हल करने में सामाजिक मानवविज्ञानी की विभिन्न भूमिकाएँ क्या हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक मानवविज्ञान एवं प्रबंधन में क्या संबंध है?
2. सामाजिक मानवविज्ञान एवं जनस्वास्थ्य में क्या संबंध है?
3. सामाजिक मानवविज्ञान एवं नीति शास्त्र में क्या संबंध है?
4. सामाजिक मानवविज्ञान एवं अर्थशास्त्र में क्या संबंध है? स्पष्ट कीजिए?
5. सामाजिक मानवविज्ञान एवं इतिहास के संबंधों की व्याख्या कीजिए.
1.3.5 संदर्भ ग्रंथ सूची


सुझाए गए लेख (Suggested Readings)


खंड 2 संस्कृति एवं परिवार

इकाई 1 संस्कृति: प्रकृति, परिभाषा एवं मानवशास्त्रीय अर्थ

(Culture: Nature, Definition and Anthropological Meaning)

इकाई की रूपरेखा

2.1.0 उद्देश्य

2.1.1 प्रस्तावना (Introduction)

2.1.2 संस्कृति की प्रकृति

2.1.2.1 मानव: संस्कृति का निर्माण

2.1.2.2 संस्कृति की विशेषताएं

2.1.2.3 संस्कृति के लक्षण

2.1.3 संस्कृति की परिभाषा

2.1.4 संस्कृति की मानवशास्त्रीय परिभाषा

2.1.5 बोध प्रश्न

2.1.6 सारांश

2.1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप यह जानने में सक्षम होंगे कि:

- संस्कृति की प्रकृति क्या है और मानव में ही क्यों पायी जाती है?
- संस्कृति की विशेषताएं और लक्षण क्या हैं?
- संस्कृति की विभिन्न परिभाषाएं क्या हैं और मानवविज्ञानी दृष्टिकोण से संस्कृति का क्या अर्थ है?

2.1.1 प्रस्तावना

यद्यपि संस्कृति शब्द का उपयोग आज अधिकांश सामाजिक विज्ञानों द्वारा एक वैज्ञानिक अवधारणा के रूप में किया जाता है, लेकिन मानवविज्ञान में इसकी सबसे व्यापक परिभाषा प्रदान की गई है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। यही कारण है कि हम समाजों में एक साथ रहते हैं। दिन-प्रतिदिन हम एक-दूसरे के साथ बातचीत करते हैं और सामाजिक संबंधों को विकसित करते हैं। हर समाज में एक संस्कृति होती है, चाहे वह संस्कृति कितनी भी सरल क्यों न हो। हर समाज के सदस्य एक साझा संस्कृति का निर्माण करते हैं जिसे उन्हें
सीखना होता है। संस्कृति विकास में नहीं मिली है। यह भाषा रूपी वाहन के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक प्रेरित की जाती है। समाजों की तरह, दुनिया भर में संस्कृतियाँ भिन्न हैं। यह इकाई मानवविज्ञान से संबंधित विचारों में संस्कृति के अर्थ और परिभाषा पर चर्चा करती है।

2.1.2 संस्कृति की प्रकृति

संस्कृति एक ऐसा शब्द है जिसे हम सभी अपने दिन-प्रतिदिन के उपयोग में लाते हैं। अपने दैनिक उपयोग में, संस्कृति परिस्कृत व्यवहार के रूप में व्यक्तिगत शोधन को संदर्भित करता है। संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा से लिया गया है 'संस्कृत' तथा 'संस्कृत' दोनों ही शब्द संस्कार से बने हैं संस्कार का शाब्दिक अर्थ है कुछ धार्मिक क्रियाओं की पूर्ति करना अर्थात विभिन्न संस्कारों के माध्यम से सामूहिक जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति। लेकिन मानवविज्ञानी काफी अलग तरीके से इस शब्द को परिभाषित एवं उपयोग करते हैं। संस्कृति शब्द का उपयोग मानवविज्ञान द्वारा बहुत व्यापक अर्थों में किया जाता है क्योंकि संस्कृति में "जीवन की बात" से तीन तुलना में बहुत अधिक सम्प्रदायता होता है। "सुसंस्कृत" लोगों और "असंस्कृत" लोगों के बीच कोई मेलभाव नहीं है, क्योंकि सबभी लोग मानवविज्ञान के दृष्टिकोण से संस्कृति का निर्माण करते हैं।

मानव इसलिए मानव है, क्योंकि उसके पास संस्कृति है, इसके अभाव में वह पशु के समान है। संस्कृति ही मानव की सबसे महत्वपूर्ण रचना है। मानव का मनुष्य संस्कृति का धारक, निम्नांक, संवर्धक और संरक्षक है। भाषा को मनुष्य का सबसे बड़ा संस्कृतिक अविभाज्य माना जा सकता है।

2.1.2.1 मानव: संस्कृति का निम्नांक

मानवशासी लेस्ली व्हाइट ने मानव की प्रतीकात्मक क्षमता को संस्कृति का आधार माना है। आपने अनुसार प्रतीकात्मक क्षमता के कारण ही मनुष्य जल और पवित्र जल में अंतर स्पष्ट कर सका, जबकि अन्य प्राणी ऐसे करने में असमर्थ हैं। अपनी पुस्तक टी इवोल्यूशन ऑफ कचरा (1959) व्हाइट ने मानव और केवल मानव को ही संस्कृति का निम्नांक माना है। व्हाइट ने मानव की पांच विशेषताएं तथा मानसिक क्षमताओं को संस्कृति के निम्नांक के लिए उंतराई माना है, जो इस प्रकार है-
2.1.2.2 संस्कृति की विशेषताएं

उपयुक्त परिभाषाएं संस्कृति की प्रकृति को एक सीमा तक प्रतिबिंबित करती हैं, तथापि संस्कृति की अध्यालिखित विशेषताएं उसकी वास्तविक प्रकृति को पूर्णता स्पष्ट करती हैं।

इन विशेषताओं का उल्लेख ए. एल. क्रोबर द्वारा किया गया है। संस्कृति अधिवैतिक अथवा संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की रचना नहीं है, व्यक्ति उसके छोटे से भाग के निर्माण में अपना योगदान अवश्य देता है किंतु उसकी स्थितता एवं निरंतरता पर उसका अधिकार नहीं होता क्योंकि संस्कृति व्यक्ति के भाग ना होकर सामूहिक व्यवहार है। व्यक्ति व्यवहार उस व्यक्ति की मूल्य के बाद समाप्त हो जाता है लेकिन सामूहिक व्यवहार पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहते हैं। इसी आधार पर संस्कृति को अधिवैतिक (व्यक्ति से ऊपर) कहा गया है।

संस्कृति अधिसाध्ववरी (Super Organic) है। सर्वप्रथम हरबर्ट स्पेंसर ने संस्कृति के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग किया, जबकि एक अवधारणा के रूप में इसका प्रयोग सर्वप्रथम लिपपट द्वारा किया गया। इस अवधारणा को विस्तार क्रोबर द्वारा दिया गया। वस्तुतः संस्कृति अधिसाध्ववरी (सुपरऑर्गनिक) इस अर्थ में है कि मानव ने अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं का उपयोग कर संस्कृति का निर्माण किया है। व्यक्ति
सावयव (ऑर्गनिक) है किंतु इसने जिस संस्कृति का निर्माण किया है वह सावयव से ऊपर है। सावयव से अधिक है और इसे ही अधिसावयवी (Super Organic) कहा गया है।

कलकहीन के इस विचार को निष्कर्ष के तौर पर देखा जा सकता है कि संस्कृति में अधिवैयतिक (Super Individual) तथा अधिसावयवी (Super Organic) होने का अर्थ केवल इतना है कि मनुष्य किसी संस्कृति में जम लेता है, किंतु संस्कृति सहित जम नहीं लेता। संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की विरासत नहीं है। वह इसके निर्माण में अपना योगदान अवश्य करता है किंतु संस्कृति का उद्देश्य, परिवर्तन एवं परिमार्जन एक व्यक्ति पर निर्भर ना होकर संपूर्ण समाज पर होता है।

हर्स्कोविट्स ने अपनी पुस्तक मैन एंड हिस वर्क में संस्कृति के निम्नलिखित विशेषताओं की चर्चा की है—

1) संस्कृति सीखी जाती है।
2) यह एक अन्तिम व्यवहार है।
3) संस्कृति जैविकीय, पर्यावरण संबंधी, मनोविज्ञान और मानव अनुभवों के ऐतिहासिक तत्व से प्राप्त की जाती है।
4) संस्कृति का वर्गीकरण संभव है।
5) संस्कृति संरचित है, या चिंतन के प्रतिमानों, अनुभव एवं व्यवहारों से बनती है।
6) संस्कृति गतिशील है।
7) संस्कृति परिवर्तनशील एवं सामर्थ्य है।
8) विज्ञान की पद्धतियों के विश्लेषण द्वारा संस्कृति अपनी नियमितताओं को प्रदर्शित करती है।
9) संस्कृति एक वंत्र है जहाँ वैयक्तिक सामंजस्य और संपूर्ण समायोजन द्वारा रचनात्मक अनुभवों को प्राप्त किया जाता है।
2.1.2.3 संस्कृति के लक्षण

क्रोवर ने अपनी पुस्तक नेचर ऑफ कल्चर (1952) में संस्कृति के चार लक्षणों की चर्चा की है।

2.1.3 संस्कृति की परिभाषा

प्रत्येक समाज की एक संस्कृति होती है, यह सार्वभौमिक होती है, हालांकि कुछ समाजों में यह सरल हो सकती है, जबकि अन्य में जटिल। इसी तरह हर इंसान सुसंस्कृत है संस्कृति जीवन संस्कृति के अधीन। संस्कृति जीवन-विषय की एक रूप-रेखा है। यह मानव जीवन का आधार है। यह जीविवाह पर टिकी हुई है (अथवा मानव का विख्यात महत्व, स्वतंत्रता-पुर्वक घुमाय जा सकने वाले हाथ इत्यादि) लेकिन जैविक नहीं है। यह मानसिक, तकनीकी और भौतिक, तकनीकी प्रक्रियाओं और उत्पादों की समग्रता है। इसी समग्रता को संस्कृति कहते हैं।

न्यूनतम भौतिक वस्तुओं (मूर्ति) के बिना मनुष्य का रहना संभव नहीं है। लोगों के बीच सामाजिक संबंधों के संजाल के बिना, मानव जीवन असंभव है। विचारों, नियमों, आदशों, प्रतीकों और साँच के पैटर्न (अमूर्त) के बिना मानव अस्तित्व अन्वयनहीं है। प्रतीकों, विचारों, नियमों, आदशों और साँच के पैटर्न, सामाजिक संबंधों और भौतिक वस्तुओं के संजाल में एक साथ मानसिक, तकनीकी संबंधी, तकनीकी प्रक्रियाएं और उत्पाद शामिल हैं। संस्कृति इस पूं ट को एककृत करने की रूप-रेखा है। यह मानव के जीवन शैली का कुल समग्र है। संस्कृति मानव जीवन के लिए एक संभावित मार्गदर्शक के रूप में कार्य करती है।
संकृति मानव प्रजाति के लिए अद्वितीय है। किसी भी प्रजाति के पास अपनी जटिलता में मनुष्य की तरह, सीखने, संचार करने और जानकारी को संग्रहीत करने, संसाधित करने और उसी सीमा तक उपयोग करने की क्षमता नहीं है। संकृति में नैतिक बल होता है जो मानव व्यवहारों के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करता है। न तो बंदरों और न ही जानवरों के जीवन में नैतिक बल है। नैतिकता संकृति का एक हिस्सा है।

इसलिए मानव संकृति में नैतिक आधार है।

संकृति जैविक आनुवंशिकता के बजाय सामाजिक पशु का एक उपाद है जिसका अर्थ है कि संकृति गैर-आनुवंशिक है। यह माता-पिता से संतानों को विरासत में नहीं मिल सकती है, लेकिन इस सामाजिक रूप से माता-पिता से बच्चों में प्रसारित किया जा सकता है। जानवरों की तरह, मानव व्यवहार नहीं कर सकता। पशु व्यवहार जन्मजात है। जानवरों को व्यवहार या अधिकांश, प्रोटो-संकृति विरासत में मिलती है, लेकिन मनुष्य सामाजिकशास्त्र द्वारा संकृति प्राप्त करते हैं।

सभी समाजों में संकृति है, हालांकि समाज नहीं है। मनुष्यों या समाजों के विभिन्न समूहों में अलग-अलग संकृतियाँ हैं। यह सांकृतिक विविधता को दर्शाता है जिसका अर्थ है कि संकृति में एकता के साथ-साथ विविधता भी है। सभी मनुष्यों में संकृति है, लेकिन सभी संकृतियाँ एक जैसी नहीं हैं। इस संदर्भ में, "एक संकृति" और "संकृति" के बीच अंतर करना आवश्यक है। संकृति शब्द पूरी तरह से मानव समाजों के जीवन के तरीके को दर्शाता है और "एक संकृति" शब्द मानव समाज के विशिष्ट विश्वस्त की हिस्से के जीवन के तरीके को दर्शाता है जिसे तकनीकी रूप से एक समाज कहा जाता है।

संकृति का विश्लेषण तीन आयामों के संदर्भ में किया जा सकता है (अपादुरई, 1996)। पहले स्तर पर, मनुष्य प्रकृति और जीवन संबंधित है। वे वस्तुओं का उपयोग और उपयोग करते हैं, अंततः उन्हें विनियोजित करते हैं। दूसरा स्तर प्रौद्योगिकी और अनुप्रयोग संबंधित है जो मनुष्यों को सामाजिक संबंधों को बनाने और समुदाय का निर्माण करने में मदद करते हैं। तीसरा स्तर अंतिम अर्थ की संलगन है जो लक्ष्य और प्रेरणावाद प्रदान करता है। धर्म और विचारधाराएं इस खोज का उत्तर प्रदान करती हैं। ये तीन स्तर एक सामाजिक समूह को एक पहचान प्रदान करते हैं और इसे अन्य समूहों से अलग करते हैं।
अप्पादुरई (1996) ने वैचिक संस्कृति का पांच-आयामी मॉडल विकसित किया है। पांच आयामों
को "थनोसकोप्स", "मेडिसकोपस", "टेक्नोसकोपस", "फाइनसकोपस" और "आयोडेकोपस" ("ethnoscapes",
"mediascapes", "technoscapes", "finanscapes" and "ideoscapes) नाम दिए गए हैं। वास्तव में,
ये वैचिक संस्कृति की मानसिक तस्वीर के रूप में चित्रित किये हैं। ethnoscapes द्वारा, अप्पादुरई का अर्थ
है उन व्यक्तियों का परिधान जो तबीबी की दुनिया का निर्माण करते हैं जिसमें हम रहते हैं। पर्यटक,
आप्रवासी, शरणार्थी, निर्वासित और अन्य गतिशील समूह और व्यक्ति। Technoscapes प्रौढ़ोगिकी का
वैचिक विन्यास है। Finanscape वैचिक पुंजी का आयाम है- मुद्रा बाजार, राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेज और
बस्तुओं की mediascapes समाचार पत्रों द्वारा दी गई सूचना के वितरण और प्रसार को संदर्भित करता है।
पत्रिकाओं, टीवी स्टेशनों, फिल्म निर्माण स्टूडियों, आदि और मीडिया द्वारा बनाई गई छवियों के लिए।
Ideoscape भी छवियों का एक आयाम है, लेकिन राजनीतिक रूप से निर्देशित और अक्सर राज्यों की
विचारधाराओं या आंदोलनों की प्रति-विचारधाराओं के साथ करना है इसको संदर्भित करता है।

टॉमिलसन (1999) के अनुसार संस्कृति गतिशील है। लोग संस्कृति बनाते हैं और संस्कृति लोगों
को बनाती है। संस्कृति बदलती आधिकारिक और सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों के साथ परिवर्तित होती है।
एक संस्कृति अन्य संस्कृतियों के साथ बदलती है जिसके साथ उसका वाणिज्यिक या राजनीतिक संरक्षण होता
है। हालाँकि, संस्कृतियों का निर्माण लोगों द्वारा किया जाता है। संस्कृति के स्रोत सामाजिक संस्था
हैं जो स्वतंत्रता और रचनात्मकता के साथ लोगों का एक समूह। रचनात्मक व्यक्ति संस्कृति के परिवर्तन और
विकास में योगदान कर सकते हैं। लोगों के लिए संस्कृति केवल प्रभावों की वस्तु नहीं है, बल्कि ऐसे विषय हैं
जो विभिन्न प्रभावों को नियंत्रण सकते हैं और उन्हें अतिक्रिया या एकीकृत कर सकते हैं।

संस्कृति के संबंध में फीदरस्टोन (1996) का मानना है कि “संस्कृति मानव के जीवन का एक ऐसा
पक्ष है, जो उन्हें मानवीय एवं सामाजिक प्रकृति का बनाता है”। मोरश ओपलर ने अपनी पुस्तक ‘एन अपाचे
लाइफ वे’ (1941) में संस्कृति के लिए लवागत पहलुओं को प्रकाश में लाने का प्रयास किया है। उनके
अनुसार “प्रत्येक समाज की अपनी-अपनी सांस्कृतिक विशेषता होती है, जो दूसरे से बिलकुल भिन्न होती है। सांस्कृतिक
भिन्नता का कारण उनमें पाए जाने वाले भिन्न-भिन्न लय हैं। तलए प्रकार की प्रेरणा होती है, जो
भीतिक तथा अभीतिक दोनों प्रकार की संस्कृतियों को विशिष्ट रूप प्रदान करती है। इसी तरह क्रोबर
(1948) संस्कृति का वर्णन करते हुए उसे अर्जित और संक्रमित चैत्यविषय प्रतिक्रियाएं, आदतें, तकनीकी,
विचार, मूल्यों का समूह और उससे प्रभावित होने वाला वर्तन बताते हैं।

संस्कृति की अवधारणा की समझ के लिए विभिन्न परिभाषाओं, अवधारणाओं और दृष्टिकोणों के
बावजूद, यह माना जाता है कि संस्कृति जीवन का एक तरीका है, नैतिकता संस्कृति का एक हिस्सा है।
व्यावहारिक रूप से सभी आधुनिक परिभाषाएं प्रमुख विशेषताओं को साझा करती हैं। सारांश में संस्कृति -

✔ संस्कृति सीखा हुआ व्यवहार है जिसे प्रत्येक व्यक्ति उस संस्कृति का सदस्य बन बना सीखता है।
✅ संस्कृति को साझा किया जाता है क्योंकि यह सभी लोगों को व्यवहार के बारे में विचार प्रदान करती है।

✅ यह प्रतीकात्मक है, क्योंकि यह प्रतीकों के हेर-फेर पर आधारित है।

✅ यह प्रणालीगत और एकीकृत है चूंकि संस्कृति के अंग एक एकीकृत संपूर्ण में एक साथ काम करते हैं।

बोडले (1994) सारांश देते हैं कि “संस्कृति कम से कम तीन तक्तों या घटकों से बनी है: लोग क्या सोचते हैं, क्या करते हैं और वे जो भौतिक उत्ताद तैयार करते हैं।” साझा मूल्यों और विधासों के रूप में संस्कृति को परिभाषित करने में यह समस्या है कि लोगों के बीच एक बड़ा अंतर हो सकता है, जैसे कि वे क्या सोचते हैं और उन्हें क्या करना चाहिए (मूल्य) और वे वापस में क्या करते हैं (ल्यवहार)। इन घटकों के अलावा, संस्कृति में कई गुण या विशेषताएं हैं।

2.1.4 संस्कृति की मानवशास्त्रीय परिभाषाएं

क्रोबर तथा कल्कहानी ने अपनी पुस्तक ऑन में कंसेप्ट एण्ड डेफिनिशन ऑफ कल्चर (1952) में संस्कृति की 300 भाषाओं का संकलन प्रस्तुत किया और बताया कि इस शब्द (संस्कृति) की 164 परिभाषाएं हैं। अपनी पुस्तक ग्रिमिटिव तर्ल्चर (1871) में टायलर ने संस्कृति की सबसे विस्तृत परिभाषा प्रस्तुत की जिसे मैरिल तथा एल्ड्रिच ने संस्कृति की शासीय परिभाषा (क्लासिकल डेफिनिशन) की संज्ञा दी है। टायलर के शब्दों में “संस्कृति और सम्मान वह होता जो समस्या है जिसमें ज्ञान, विश्लेषण, कला, आचार, कानून, प्रथा और ऐसे ही अन्य ज्ञान के उपर घरों के नाम सम्बन्ध होता है.” टायलर की परिभाषा में दो बातें स्पष्ट हैं 1. संस्कृति अर्जित करने की जाती है अर्थात् यह वंशावस्तु नहीं होती तथा 2. व्यक्ति अपनी संस्कृति समाज में रहकर सीखता है।

टायलर की परिभाषा ने उस वैज्ञानिक अवधारणा को खोदत कर दिया जिसके अनुसार यह मान्यता प्राप्त थी कि संस्कृति अनुवांशिकता से प्राप्त की जाती है। फल स्वरूप श्रेष्ठ संस्कृति को श्रेष्ठ तथा अश्रेष्ठ संस्कृति को निम्न समझा जाता था। पंतु इस परिभाषा की कमी ये है कि इसमें संस्कृति और सम्मान तथा एक दूसरे का पर्यावरण समझा गया है जबकि यह दोनों अलग-अलग अवधारणाएं हैं।

ब्रिटिश प्राकृतिकवादी मैलिनोवस्की ने संस्कृति को प्राकृतिक ढंग से बताया है। मैलिनोवस्की ने संस्कृति को “जीवन की संगमता माना है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने शारीरिक, मानसिक एवं अन्य आवश्यकता की पूर्ति करता है और अंततः अपनी स्वायत्तता (प्रकृति के बंधनों से मुक्ति) प्राप्त करता है” के रूप में परिभाषित किया। उनके अनुसार संस्कृति का संबंध वंशावस्तु उपकरण, समाज, शिल्पशास्त्रीय प्रक्रिया, विचार, आदत तथा मूल्य से है। इस प्रकार मैलिनोवस्की ने संस्कृति को अभौतिक तथा भौतिक अथवा मूर्त
या अमूर्त में विभाजित करने का प्रयास किया है। बाद में अपनी पुस्तक ‘साइटिफिक थ्योरी ऑफ कल्चर’ (1944) में संस्कृति को प्रयास बाद सिद्धांत के अनुसार परिभाषित किया है, उनके अनुसार “संस्कृति मानव की आवश्यकता पूर्ति का साधन है।” चूँकि संस्कृति का अर्थल्य मानव के अर्थल्य से जुड़ा हुआ है। अतः संस्कृति का मुख्य प्रयास मानव का अर्थल्य बनाए रखना है।

हर्षकोविट्स ने अपनी पुस्तक ‘मैन एंड हिज बर्क’ (1956) में “संस्कृति को प्रयास बाद का मानव निर्मित भाग मानते हैं।” उन्होंने परवर्धन को दो भागों में विभाजित किया है- प्राकृतिक तथा सामाजिक। उन्होंने सामाजिक परवर्धन के अंदर मानव निर्मित सभी भौतिक तथा अभौतिक संस्कृतिक वस्तुओं को रखा है अर्थात् व्यक्ति को चारों ओर से प्रभावित करने वाली जितनी वस्तुओं का निर्माण मनुष्य द्वारा किया गया व सभी संस्कृति के अंग है।

मजूमदार एवं मदाने ने तोड़ों के जीने के ढंग को ही संस्कृति माना है।

रॉबर्ट एच. लुवी (1936) ने संस्कृति कि व्याख्या करते हुए कहते हैं कि “समाज में से खुद की मूल्य प्रारूप से नहीं बल्कि आधुनिक व आधुनिक शिक्षा द्वारा, विभिन्न काल से विरासत में भाग लिए गए रीतिय-रिवाजों का कुल जोड़ ही संस्कृति है।” लुवी ने संपूर्ण सामाजिक परंपरा को ही संस्कृति कहा है।

क्लूस्टरिन (1952) ने सांस्कृतिक तत्वों को दो भागों में विभाजित करने का प्रयास किया है- प्रकट तथा अप्रकट। प्रकट संस्कृतिक तत्वों का अवलोकन भाषा द्वारा भी कर सकते हैं, जबकि संस्कृति के अप्रकट तत्वों का अवलोकन के द्वारा मानवशास्त्री ही कर सकते हैं। संस्पर्श में क्लूस्टरिन ने संस्कृति को विचारों, अनुभव करने एवं क्रिया करने की एक विधि माना है।

राल्फ लांचर्च ने “संस्कृति ज्ञान, अभिव्यक्ति एवं आदतन व्यवहारों का कुल संग्रह है। इसे किसी समाज के सदस्य आपस में बांटते ह एवं संचालित करते हैं।”

रूथ बेनेडिक्ट ने “संस्कृति, व्यक्ति की भांति विचार और क्रिया का एक स्थायी प्रतिमान है।”

इसी प्रकार हावेल ने अपनी पुस्तक ‘मैन इन स्पेशाल वर्ल्ड’ (1958) में “संस्कृति को सीखे हुए व्यवहार प्रतिमान का कुल योग बताता है।” वे संस्कृति को जैविक, वंशावली नहीं मानते हैं, बल्कि वह संस्कृति को सामाजिक अविष्कार का परिणाम मानते हैं। संस्पर्श में हावेल ने “संस्कृति संबंधित सीखे हुए ‘व्यवहार प्रतिमानों’ का संपूर्ण योग है, जो एक समाज के सदस्यों की विशेषताओं को बतलाता है, अतः वह प्राणीशास्त्री विरासत का परिणाम नहीं है।”

पिडिंगटन ने अपनी पुस्तक ‘एन इंडेपेंडेंस न तो सोशल एंडोपोलॉजी’ (1952) में संस्कृति को भौतिक तथा बौद्धिक साधनों का संपूर्ण योग बतलाता है। इस प्रकार मैलिनोव्स्की, बीडेन तथा पिडिंगटन की परिभाषाओं में संस्कृति के अभौतिक तथा भौतिक पक्ष प्रकट होते हैं। भौतिक संस्कृति के अंतर्गत गांव, घर, घरेलू उपकरण, कृषि उपकरण, गुड्ड उपकरण, मनोरंजन उपकरण, भोजन, वस्त्र, आयुर्वेद इत्यादि आते हैं। जबकि अभौतिक संस्कृति के अंतर्गत ज्ञान, विश्लेष, मूल्य, प्रथा, कानून, कला, संस्थाहत्यादि आते हैं।
संस्कृति के यह दोनों पक्ष एक दूसरे से संबंधित एवं पूरक हैं। संक्षेप में पिडिंगन ने “संस्कृति उन भौतिक तथा बौद्धिक साधनों का समूह योग है, जिनके द्वारा मानव अपनी भारतीय साधने तथा सामाजिक आवश्यकताएं को पूरा करता है तथा अपने पर्यावरण से अनुकूलन करता है”

रेडफिल्ड (1941) के अनुसार “संस्कृति कला तथा कलात्मक वस्तुओं द्वारा प्रदर्शित परंपरागत ज्ञान का संगठित समूह है।” रॉबर्ट रेडफिल्ड ने संस्कृति को “अ बॉडी ऑफ शेयड अंडरटिडंग” कहकर संस्कृति की अवधारणा में वैचारिकता के पक्ष को महत्व प्रदान किया है। संक्षेप में रेडक्लिफ ब्राउन ने “परंपराओं के अधिग्रहण एवं उनके हस्तांतरण की प्रक्रिया जिनके परिणाम स्वरूप समाज का अस्तित्व सुनिश्चित होता है, संस्कृति है।”

इसी क्रम में अमेरिकी मानवशास्त्री लेस्टल वाइट ने संस्कृति के सांकेतिक दृष्टिकोण पर जोर दिया है। वाइट के अनुसार “संस्कृति एक सांकेतिक तथा निरंतर चयन के साथ जाने वाली गतिशील प्रक्रिया है” तथा “संस्कृति प्रतीकों एवं प्रतीकात्मक व्यवहारों की समस्ति होती है।”

डेविड विंडेन (दार्शनिक मानवशास्त्री) ने “संस्कृति कृषि-तथ्यों (Agrofacts) प्रारंभिक तथ्यों (Artifacts) सामाजिक तथ्य (Sociofacts) तथा मानसिक तथ्यों (Mentifacts) की उपज है।” इन्होंने अपनी पुस्तक ‘थ्योरेटिकल ऐंचोपोलोजी’ (1952) में संस्कृति को कृषि तथ्यों, मानसिक तथ्यों, प्रारंभिक तथ्यों तथा सामाजिक तथ्यों की उपज मानते हैं। संस्कृति की परिभाषा को और प्रस्तुत करते हुए बाइडेन ने कहा है कि “संस्कृति के अंतर्गत व्यक्ति के व्यवहार तथा विचार के साथ-साथ बौद्धिक, कलात्मक और सामाजिक संस्थाएं आती हैं। इन संस्थाओं के माध्यम से मानव अपनी जैविक तथा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तथा अपने पर्यावरण के साथ अनुकूलन करने का प्रयास करता है।

एम. सी. डुबे के अनुसार “हम उसे (संस्कृति को) मानसिक, नैतिक, भौतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, राजकीय, कलात्मक अथवा सारांश में मानव जीवन के प्रत्यक्ष पक्ष में सीखे हुए व्यवहार प्रकारों की समग्रता कह सकते हैं।”

इस प्रकार परंपरागत मानववादियों ने समय-समय पर अपने शोधों एवं खोजों के आधार पर अपने विचार प्रस्तुत कर संस्कृति को परिभाषित किया है। इसके साथ ही साथ उन्होंने संस्कृति को कभी भौतिक, कभी अभौतिक तो कभी प्रकृत या अप्रूढ़ इत्यादि भागों में बाटा है। उपरोक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि “संस्कृति एक समग्र है, जो मानव निर्मित है और उसे मानव सीखने के साथ-साथ अगली पीढ़ी में हस्तांतरित भी करता रहता है।” संस्कृति के अंतर्गत ज्ञान, कला, विधास, लोकाचार, प्रथाएं, रीति-रिवाज, सामाजिक मूल्य, नियम-कानून इत्यादि मानवीय व्यवहार तथा इन व्यवहारों को करने के लिए मानवनिर्मित भौतिक उपकरण जैसे- घरेलू उपकरण, वस्त्र, आभूषण, बाल्य-वंश, आधुनिक उपकरण, कृषि उपकरण, औद्योगिक उपकरण, शिक्षा-विद्या इत्यादि समीक्षित हैं।
2.1.5 सारांश (Summary)

इस इकाई में आप ने पढ़ा कितिपुत्र की संकृति की विभिन्न परिभाषाओं, अवधारणाओं और दृष्टिकोणों के बावजूद, यह माना जाता है कि संकृति जीवन का एक तरीका है और नैतिकता संकृति का एक हिस्सा है। व्यावहारिक रूप से सभी आधुनिक परिभाषाएं प्रमुख विशेषताओं को साझा करती हैं। सारांश में संकृति एक सीखा हुआ व्यवहार है जिसे प्रत्येक व्यक्ति उस संकृति का सदस्य बन कर सीखता है, संकृति को साझा किया जाता है क्योंकि यह सभी लोगों को व्यवहार के बोरे में विचार प्रदान करती है, यह प्रतीकात्मक है, क्योंकि यह प्रतीकों के हर-फेर पर आधारित है और यह प्रणालीगत और एकीकृत है चूंकि संकृति के अंग एक एकीकृत संपूर्ण में एक साथ काम करते हैं। निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि “संकृति एक समूह है, जो मानव निर्मित है और उसे मानव सीखने के साथ-साथ अगली पीढ़ी में हस्तान्तरित भी करता रहता है।” संकृति के अंतर्गत जान, कला, विश्वास, लोकार्थ, रीति-रिवाज, सामाजिक मूल्य, नियम-कानून इत्यादि मानवीय जीवन तथा इन जीवनों को करने के लिए मानवनिर्मित भौतिक उपकरण जैसे- धार्मिक, आधुनिक उपकरण, कृषि उपकरण, आधुनिक उपकरण, शिल्प उपकरण इत्यादि समिलित हैं।

2.1.5 बोध प्रश्न

वहुविकल्पीय प्रश्न

1. पुस्तक द इवोल्यूशन ऑफ कचर के लेखक कौन है?
   (क) विलियम हैट (ख) सेन्सर (ग) लेविस स्ट्रॉस (घ) मार्गन
   उत्तर - (क)

2. निम्नलिखित में से संकृति का लक्षण कौन नहीं है?
   (क) संकृति सीखा हुआ व्यवहार है (ख) संकृति मानव निर्मित नहीं है (ग) संकृति मानव आवश्यकता की पूर्ति करती है (घ) संकृति समूह के लिए आदर्श है
   उत्तर – (ग)

3. अधिवैतिक संकृति के रूप का उल्लेख किस तरह किया है?
   (क) क्रोबर (ख) सेन्सर (ग) लिपर्ट (घ) क्लूकहौन
   उत्तर - 1. क्रोबर, 2. संकृति मानव निर्मित नहीं है, 3. क्रोबर, 4. हर्षकोविट, 5. क्रोबर
दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

6. संस्कृति के अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट कीजिए।
7. संस्कृति की प्रकृति की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
8. संस्कृति को परिभाषित करते हुए संस्कृति की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
9. संस्कृति के मानवशास्त्रीय अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
10. संस्कृति के प्रमुख लक्षणों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मानव अपनी किन-किन विशेषताओं के कारण वह संस्कृति का निर्माण करता है?
2. संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
3. मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण से संस्कृति का क्या अर्थ है?
4. संस्कृति के प्रमुख लक्षणों को स्पष्ट कीजिए।
5. संस्कृति को अपने नाम में परिभाषित कीजिए।

2.1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची


2.2.0 उद्देश्य
2.2.1 प्रस्तावना (Introduction)
2.2.2 संस्कृति के उपादान (Components of Culture)
   2.2.2.1 सांस्कृतिक तत्त्व या विशेषक (Cultural Trait)
   2.2.2.2 सांस्कृतिक संकुल (Cultural Complex)
   2.2.2.3 सांस्कृतिक प्रतिमान (Cultural Pattern)
   2.2.2.4 सांस्कृतिक क्षेत्र (Culture Area)
2.2.3 संस्कृति की महत्वपूर्ण अवधारणाएँ
   2.2.3.1 मूल्य (Values)
   2.2.3.2 मानदंड (Norms)
   2.2.3.3 प्रतिबंध (Sanction)
   2.2.3.5 आदर्श संस्कृति और वास्तविक संस्कृति (Ideal and Real Culture)
   2.2.3.6 प्रकट और अप्रकट संस्कृति (Overt and Covert Culture)
   2.2.3.7 स्पष्ट और निहित संस्कृति (Explicit and implicit Culture)
   2.2.3.8 तत्वज्ञानी और जीवनज्ञानी (Ethos and Edos)
   2.2.3.9 साम्प्रदाय और संस्कृति (Civilization and Culture)
   2.2.3.10 सांस्कृतिक सापेक्षवाद (Cultural Relativism)
2.2.4 संस्कृति के सिद्धांत
   2.2.4.1 संस्कृति का उद्देश्यसाधन सिद्धांत
   2.2.4.2 संस्कृति का प्रसारकार सिद्धांत
   2.2.4.3 संस्कृति का प्रकारकार सिद्धांत
   2.2.4.4 संस्कृति का संरचना-प्रकारकार सिद्धांत
   2.2.4.5 संस्कृति का संरचनात्मक सिद्धांत
   2.2.4.6 संस्कृति का “संस्कृति और व्यक्तिवश” सिद्धांत
2.2.5 सारांश (Summary)
2.2.6 बोध प्रश्न
2.2.7 संदर्भ स्रोत सूची
2.2.0 उद्देश्य
इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी निम्नलिखित में सक्षम हो सकेंगे:

- संस्कृति के उपादान को समझने में सक्षम होंगे।
- सांस्कृतिक तत्व, संकुल, प्रतिमान और क्षेत्र को समझने तथा लिखने में सक्षम होंगे।
- संस्कृति की महत्वपूर्ण अवधारणाओं को समझने तथा संस्कृति से संबंधित विभिन्न सिद्धांतों को जानने में सक्षम होंगे।

2.2.1 प्रस्तावना (Introduction)

सभी समाजों में संस्कृति होती है, अर्थात् एक प्रतिमान समग्र जिसमें भौतिक और अभौतिक तत्व होते हैं। सभी संस्कृतियों का मूल संगठन एक ही है, हालांकि समाजों द्वारा विकसित संस्कृतियाँ दूसरे से भिन्न होती हैं। इस इकाई में हमलोग इन्हीं विभिन्नताओं की संस्कृति के उपादानों तथा महत्वपूर्ण अवधारणाओं को समझेंगे। इसके साथ-साथ हम संस्कृति के विभिन्न सिद्धांतों जैसे उद्विक्ष, प्रसारण, प्रकार्यवाद आदि को भी समझेंगे।

2.2.2 संस्कृति उपादान

सभी समाजों में संस्कृति होती है, अर्थात् एक प्रतिमान समग्र जिसमें भौतिक और अभौतिक तत्व होते हैं। सभी संस्कृतियों का मूल संगठन एक ही है, हालांकि समाजों द्वारा विकसित संस्कृतियाँ दूसरे से भिन्न होती हैं। संस्कृति के विभिन्न उपादानों को, जिनसे उसके समपूर्ण ढांचे का निर्माण होता है वे निम्नलिखित हैं।

2.2.2.1 सांस्कृतिक तत्व या विशेषक (Cultural Trait)

सांस्कृतिक तत्व एक संस्कृति के एकल तत्व या सबसे छोटी इकाई है। वे "अबलोकन की इकाइयाँ" हैं जो एक साथ मिलकर संस्कृति का निर्माण करती हैं। होबेल के अनुसार सांस्कृतिक तत्व "सीखे हुए व्यवहार प्रतिमान की अप्रतिमता इकाई है।" किसी भी संस्कृति को ऐसी हजार इकाइयों को शामिल करने के रूप में देखा जा सकता है।

इस प्रकार हाथ मिलाना, पैर छूना, दोपी पहनना, सन्न एक इकाई के रूप में गालों पर चुबन, महिलाओं को पहले सीट देना, एंड तो सलामी देना, शोक में सफेद ‘साड़ी’ पहनना, शाकाहारी भोजन लेना, झंडे को चलाना, मूर्तियाँ, 'किर्पण' ले जाना, दाढ़ी और बाल बढ़ाना, पीतल के बर्तनों में खाना आदि सांस्कृतिक तत्व हैं।

इस प्रकार तत्व एक संस्कृति की मौलिक इकाइयाँ हैं। यह ये लक्षण हैं जो एक संस्कृति को दूसरे से अलग
करते हैं। एक संस्कृति में पाए गए गुण का अन्य संस्कृति में कोई महत्व नहीं हो सकता है। इस प्रकार, सूर्य को जल अर्पित करने का हिंदू संस्कृति में महत्व हो सकता है लेकिन पश्चिमी संस्कृति में कोई नहीं।

2.2.2.2 सांस्कृतिक संकुल (Cultural Complex)

होबेल के अनुसार, "सांस्कृतिक संकुल कुछ मुख्य बिंदुओं के संदर्भ में व्यवस्थित किए गए सांस्कृतिक तत्वों के बड़े समूहों के अलावा कुछ भी नहीं है।" सांस्कृतिक तत्व, जैसा कि हम जानते हैं, आमतौर पर अकेले या स्वतंत्र रूप से प्रकट नहीं होते हैं। वे सांस्कृतिक संकुल से अन्य विश्लेषित तत्वों के साथ पारंपरिक रूप से जुड़े हुए हैं। किसी एकल विशेषता के महत्व को तब इंगित किया जाता है जब वह पहली बार तत्वों के समूह में जाता है, जिनमें से प्रत्येक सांस्कृतिक संकुल में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार, मूर्ति के सामने पुजने टेकना, उस पर पवित्र जल छिड़कना, उसके मुंह में कुछ खाना डालना, हाथ जोड़कर पुजारी से 'प्रसाद' लेना और 'आरती' गाना धार्मिक संकुल बनता है।

2.2.2.3. सांस्कृतिक प्रतिमान (Cultural Pattern)

एक सांस्कृतिक प्रतिमान तब बनता है जब तत्व और संकुल प्रायात्मक भूमिकाओं में एक दूसरे से संबंधित हो जाती हैं। प्रत्येक सांस्कृतिक संकुल की समाज में भूमिका होती है। इसे इसके भीतर विशिष्ट स्थान मिला है। एक समाज के सांस्कृतिक प्रतिमान में कई सांस्कृतिक संकुल होते हैं। इस प्रकार भारतीय सांस्कृतिक पद्धति में गांधीवाद, अध्यात्मवाद, संयुक्त परिवार, जाति व्यवस्था और यज्ञवाद शामिल हैं। इसलिए एक सांस्कृतिक संकुल में कई सांस्कृतिक तत्व शामिल हैं। क्लासिक विश्लेषण के अनुसार नौ बूंदवादी सांस्कृतिक तत्व हैं जो सांस्कृतिक प्रतिमान को जन्म देते हैं। ये हैं;  
1. भाषण और भाषा।
2. भौतिक तत्व।
   (a) भोजन की आदत
   (b) आवास
   (c) परिवहन
   (d) पोशाक
   (e) बांधन, औजार आदि।
   (f) हथियार
   (g) व्यवसाय और उद्योग।
3. कला।
4. पौराणिक कथा और वैज्ञानिक ज्ञान।
5. धार्मिक प्रथाओं।
6. परिवार और सामाजिक व्यवस्था।
7. संपत्ति।
8. सरकार।
9. युद्ध।

2.2.2.4. सांस्कृतिक क्षेत्र (Culture Area)

सांस्कृतिक क्षेत्र की अवधारणा को 1900 के दशक की शुरुआत में विकसित किया गया था, ऐसे समय में जब अमेरिकी मानवविज्ञान अपनी प्रारंभिक अवस्था में था। फ्रांज बोस और उनके छात्र उत्तरी अमेरिका की "लुप हो रहीं " मूल संस्कृतियों के बारे में भारी मात्रा में आंकड़े उत्पन्न कर रहे थे। हालाँकि, इस आंकड़े को व्यवस्थित करने के लिए कोई रूपरेखा नहीं थी। सांस्कृतिक क्षेत्र की अवधारणा पहली बार नृवंशविज्ञानी क्लार्क विस्टर द्वारा प्रतिपादित की गई थी ताकि उत्पत्ति जानकारी के लिए एक सैद्धांतिक ढांचा प्रदान किया जा सके। एक सांस्कृतिक क्षेत्र को एक ऐसे भौगोलिक/सांस्कृतिक क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया गया था, जिसकी जनसंख्या और समूह भाषा, उपकरण और भौतिक संस्कृति, नास्तेदारी, सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक इतिहास जैसे महत्वपूर्ण सामान्य पहचान योग्य सांस्कृतिक तत्त्व साझा करते हैं। इसलिए भौगोलिक क्षेत्र में समान लक्षण दाङ्छनेवाले समूहों को एकल सांस्कृतिक क्षेत्र में वर्गीकृत किया गया। एक सांस्कृतिक क्षेत्र का विचार निश्चित रूप से लोगों के पर्याप्त समूहों के बीच बातचीत को दिखाता है। संस्कृतिक क्षेत्रों के भीतर और बीच के समूहों की तुलना मानवविज्ञानी उन सामान्य वातावरण और ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का परीक्षण करते हैं जो समूहों को जोड़ सकते हैं या उनके बीच समानताएं और अंतर पैदा कर सकते हैं। संस्कृति क्षेत्र की अवधारणा भी किसी विशेष क्षेत्र में काम कर रहे मानवविज्ञानी के लिए एक सामान्य भाषा प्रदान करती है। अतः ऐसा होता है कि अध्ययन क्षेत्र द्वारा केंद्रित होते हैं जो साहित्य को भी समान रूप से केंद्रित करता है। इसके अलावा, अनुसंधान प्रश्न और सैद्धांतिक मूर्त एक विशेष सांस्कृतिक क्षेत्र में काम कर रहे मानवविज्ञानी को जोड़ने का कार्य करते हैं।
2.2.3 संस्कृति की महत्वपूर्ण अवधारणाएँ

मानवविज्ञान में संस्कृति की चयन्त्रांग और अध्ययन में, मानवविज्ञानी ने संस्कृति की कई विश्लेषणों की पहचान की है जो संस्कृति के गुणों को दर्शाते हैं और विभिन्न अर्थों को व्यक्त करते हैं, जिन्होंने संस्कृति के सिद्धांतों को और समृद्ध किया है। एक संस्कृति अपने भागों के योग से अधिक है। मानवविषय और उनके साथ जुड़े भौतिक वस्तुओं की एक सूची संस्कृति का सही चित्र नहीं दे सकती है। विद्याधर्मों के लाभ इनमें से कुछ महत्वपूर्ण अवधारणाएँ नीचे दी गई हैं।

2.2.3.1 मूल्य (Values)

एक संस्कृति में अच्छे, उचित और वांछनीय, या बुरे, अनुचित या अवांछनीय के रूप में क्या माना जाता है, उसे मूल्य कहा जा सकता है। यह लोगों के व्यवहार को प्रभावित करता है और दूसरों के कार्यों के मूल्यांकन के लिए एक मानदंड के रूप में कार्य करता है। संस्कृति के मूल्यों, मानवविषयों और प्रतिबंधों के बीच अक्सर एक सीधा संबंध होता है।

2.2.3.2 मानदंड (Norms)

मानदंड व्यवहार के एक मानक प्रतिमान को संदर्भित करता है जिसे समाज द्वारा स्वीकार किया जाता है। मानदंड समाज से समाज में भिन्न हो सकते हैं। आमँ तौर पर दो तरह के मानदंड होते हैं औपचारिक मानदंड और अनौपचारिक मानदंड। जो नियम लिखे गए हैं और जिनके उल्लंघन से सजा दी जा सकती है जिसे औपचारिक मानदंड कहा जाता है। इसके विपरीत, अनौपचारिक मानवविषयों को आमतौर पर एक समाज द्वारा समझा जाता है और वे अलिखित होते हैं।

2.2.3.4 प्रतिबंध (Sanction)

प्रतिबंधों में पुरस्कार और दंड दोनों शामिल हैं। इसमें संबंधित सामाजिक मानवविषयों को ध्यान देते के लिए निर्धारित दंड या समाज के मानदंडों का पालन करने के लिए पुरस्कार शामिल हैं। एक आदर्श का पालन करने से सकारात्मक प्रतिबंध जैसे कि पदक, आभार पुरस्कार या पीठ पर थपथपान हो सकता है। नकारात्मक प्रतिबंधों में जुर्माना, धमकी, कारावास, और यहां तक तक कि अनमोल भी शामिल हैं।

2.2.3.5 आदर्श संस्कृति और वास्तविक संस्कृति (Ideal and Real Culture)

संस्कृति की आदर्शता से तात्पर्य है कि लोगों को कैसा व्यवहार करना चाहिए, या किस तरह से जीना चाहिए। संस्कृति की वास्तविकता से तात्पर्य है वह वास्तविक तरीका है जिस तरह से लोग व्यवहार करते हैं। आमतौर पर आदर्श और वास्तविकता के बीच एक विविधता है। आदर्श संस्कृति और वास्तविक
संस्कृति के बीच अंतर है। नियम क्या कहते हैं और लोग क्या करते हैं, यह अलग हो सकता है; सांस्कृतिक आदर्श हमें बताते हैं कि क्या करना है और कैसे करना है, लेकिन हम हमेशा ऐसा नहीं करते हैं जो आदर्श तय करते हैं। हम संस्कृति का रचनात्मक उपयोग करते हैं।

2.2.3.6 प्रकट और अप्रकट संस्कृति (Overt and Covert Culture)

एक मानवविज्ञानी, या एक समाज का सदस्य जो संस्कृति के कुछ हिस्सों से अपरिचित है। Overt का मतलब है आसानी से आसानी से एक संस्कृति का पता लगाने योग्य गुण। इनमें कलाकृतियां, क्रियाएं, उच्चारण शामिल हैं, जिन्हें सीधे जाना जा सकता है। कलाकृतियों में घर, कपड़े, किताबें, उपकरण आदि क्रियाएं शामिल हैं; क्रियाओं में प्रथाओं का पालन, खेल, समायोजन के बाहरी लक्षण शामिल हैं, उच्चारण में गीत, कहावतें, अदी शामिल हैं। एक मानवविज्ञानी आसानी से इन बातों का पता लगाना आवश्यक है क्योंकि यह बहुत सारे हैं। उन्हें देखने, उन्हें अनुभव करने और उनका प्रलेखन करने के कई अवसर मिलते हैं। दूसरी ओर अप्रकट संस्कृति में उन गुणों का पता लगाना है जो किसी बाहरी व्यक्ति द्वारा आसानी से नहीं पहचाने जाते हैं। वाक्य, विश्वास, भय और मूल्य कुछ ऐसे सांस्कृतिक तत्व हैं, जिन्हें आसानी से पहचाना नहीं जा सकता है, जो बाहरी व्यक्ति द्वारा उन्हें बताना आसानी से नहीं है। इन अप्रकट संस्कृति के तत्वों का पता लगाना आम तौर पर मुश्किल होता है।

2.2.3.7 स्पष्ट और निहित संस्कृति (Explicit and implicit Culture)

क्लुकोहोने के अनुसार स्पष्ट संस्कृति का अर्थ है लोगों के सांस्कृतिक वस्तुओं के अर्थ के बारे में जागरूकता। निहित संस्कृति का तात्पर्य लोगों की आज्ञात्मक है कुछ सांस्कृतिक वस्तुओं की अनेकत्व से है स्पष्ट और निहित संस्कृति लोगों को संस्कृति के अनुभव के बारे में बताती है, जबकि प्रकट और अप्रकट संस्कृति पर्यवेक्षक के दृष्टिकोण को संदर्भित करती है।

2.2.3.8 तत्वोद्धृति और जीवनदृष्टि (Ethos and Edos)

क्रोबर ने संस्कृतिक के दो पहलूओं की चर्चा की है जिसे तत्वोद्धृति ethos तथा जीवनदृष्टि edos कहते हैं। तत्वोद्धृति वास्तव में किसी संस्कृति का औपचारिक प्रकटकरण है जिसमें उसके गुण तथा उससे जुड़ी विचारधाराएं समाहित हैं। तत्वोद्धृति आदर्श है जो जीवन के विभिन्न घटनाओं को समझने में दार्शनिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। सामाजिक परतत्व, एवं जीवन दृष्टि को समझने के लिए तीन प्राणियों अनुग्रही गई हैं। पहली के अंतर्गत जनजातियों द्वारा स्वयं की उत्तम एवं विशेषताओं का वर्णन उनके स्वयं के द्वारा की गयी है जिसका वर्णन आदिवासी समुदाय के शोधकर्ताओं में प्रस्तुत किया गया है। दूसरी के अंतर्गत गैर-आदिवासी विद्वानों का जनजातियों की तत्त्व दृष्टि एवं जीवन दृष्टि के बारे में क्या कहना है इसे रेखांकित किया जाता है,
तथा तीसरी श्रेणी के अंतर्गत उन अध्ययनों को खरा जा सकता है जिसके अंतर्गत विभिन्न संगीतों,
कविताओं, लोकनृत्यों, कहावतों, कहानियों, नायों, मुहावरों इत्यादि का विच्छेदण कर जनजातियों की तत्त
दृष्टि एवं जीवन दृष्टि को समझने का प्रयास किया है (Sahay, 1977).

2.2.3.9 सम्बन्ध और संस्कृति (Civilization and Culture)

सम्बन्ध एक विशेष प्रकार की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। "सम्बन्ध" शब्द का उपयोग
लगभग संस्कृति के साथ पर्यावरणीय रूप से किया गया है। ऐसा इसलिए है क्योंकि सम्बन्ध और संस्कृति एक
एकल इकाई के विभिन्न पहलू हैं। सम्बन्ध को बाद अभिव्यक्ति और संस्कृति को समाज के अंतर्गत चरित्र
के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रकार, सम्बन्ध वैकल्पिक विशेषांकों में व्यक्त की जाती है, जैसे कि उपकरण
संक्रमण, भौतिक, भवन, पौरीयों, शहरी रूपों, मूर्तियों, पौराणिक, धार्मिक नीतियों और
प्रथाओं को संदर्भित करती है जो समाज के सदस्यों द्वारा आधार पर निर्विवाद की जाती है। संस्कृति और
सम्बन्ध दोनों का एक ही मानवीय प्रक्रियाओं द्वारा विकसित किया गया है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।
संस्कृति को आगे बढ़ने के लिए एक सम्बन्ध की आवश्यकता है। सम्बन्ध को अपने महत्वपूर्ण बल और
अस्तित्व के लिए संस्कृति की आवश्यकता होती है। इसलिए दोनों अन्योन्याधिक हैं।

2.2.3.10 सांस्कृतिक सापेक्षवाद (Cultural Relativism)

सांस्कृतिक सापेक्षवाद वह दृष्टिकोण है जो यह मानता है कि सभी मान्यताएं, रीति-रिवाज और
नीतिका व्यक्ति के अपने सामाजिक संदर्भ के सापेक्ष होती है। दूसरे शब्दों में, "सही" और "गलत" संस्कृति-
विविध हैं; जिसे एक समाज में नैतिक माना जाता है, उसे दूसरे में अनैतिक माना जा सकता है। चूंकि नीतिका
का कोई सार्वभौमिक मानक मौजूद नहीं है, इसलिए किसी को दूसरे समाज के रीति-रिवाजों को अंकन का
अधिकार नहीं है। आधुनिक मानवविज्ञान में सांस्कृतिक सापेक्षवाद को व्यावसाय रूप से स्वीकार किया
जाता है। सांस्कृतिक सापेक्षवाद का मानना है कि सभी संस्कृतियां अपने आप में योग्य हैं और समान मूल्य की
हैं। संस्कृतियों की विविधता, यहां तक कि परस्पर विरोधी नैतिक विश्वास वाले लोगों को भी सही और गलत
या अच्छे और धने के संदर्भ में नहीं माना जाता है। आज का मानवविज्ञानी सभी संस्कृतियों को मानव
अंतिम की समान रूप से वैध अभिव्यक्ति मानता है, जिसका विश्लेषण तत्त्व दृष्टिकोण से अध्ययन किया
जाता है। सांस्कृतिक सापेक्षवाद का संबंध नैतिक सापेक्षवाद से है, जो सत्य को परिवर्तनशील मानता है और
निर्णय नहीं। सही और गलत का गठन केवल व्यक्ति या समाज द्वारा निर्धारित किया जाता है। चूंकि सत्य
वस्तुविश्लेष नहीं है, इसलिए कोई वस्तुविश्लेष मानक नहीं हो सकता है जो सभी संस्कृतियों पर लागू हो। कोई यह
नहीं कह सकता कि कोई सही है या गलत; यह व्यक्तिगत राय का विषय है, कोई भी समाज दूसरे समाज पर
निर्णय पार्ट नहीं कर सकता है। संस्कृति का साधन सामग्री जिसी भी संस्कृति के अभिव्यक्ति के साथ कुछ भी गलत नहीं है (स्वाभाविक रूप से कुछ भी अच्छा नहीं है) तो, आत्म-उत्तरित्व का और मानव बलिदान की प्राचीन मय प्रथाएं न तो अच्छी हैं और न ही बुरी; वे केवल संस्कृति के विशिष्टताएं।

2.2.4 संस्कृति के सिद्धांत

टाइलर द्वारा संस्कृति की शास्त्रीय परिभाषा, संस्कृति की सैद्धांतिक व्याख्या में एक महत्वपूर्ण मोड थी, जिसने दुनिया भर के विभिन्न विद्वानों के ध्यान आकर्षित किया। टाइलर ने मानव संस्कृति के अस्पति विकास, सिद्धांत, बर्बरता से लेकर समस्या तक के सिद्धांत को रेखा किया, इस एकतरफा विकास की भावना ने समाज विचारधारा बाले विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया, जिन्होंने उद्घाटनवादी समझौता का गठन किया। संस्कृति के अध्ययन ने ट्रीबिंडे आइलैंड्स के बीच मैलिनोव्स्की के फील्डवर्क के बाद एक महत्वपूर्ण मोड ले लिया। मैलिनोव्स्की की संस्कृति की परिभाषा ने संस्कृति के जैविक पहलू पर जोर दिया और मानव व्यवहार की जैविक विशेषताओं को समझाया। उन्होंने "आवश्यकता"(need) और "लालसा"(impulse) के बीच अंतर किया और आवश्यकता की संतुलित पर जोर दिया, जिससे कई कार्य होते हैं, मैलिनोव्स्की की संस्कृति की व्याख्या उनके कुछ समकालीनों द्वारा स्वीकार नहीं की गई थी। उदाहरण के लिए रेडक्लिफ-ब्राउन संस्कृति की जैविक व्याख्या में मैलिनोव्स्की से पूरी तरह असहमत थे। रेडक्लिफ-ब्राउन सामाजिक संस्था का अध्ययन करते हैं "संस्कृति" शब्द के उपयोग से सहमत नहीं थे, लेकिन "सामाजिक संरचना" के बारे में उनका विश्लेषण संस्कृति के व्यापक परिप्रेक्ष्य में है। फिर, सामाजिक संरचना में सामाजिक व्यवस्था पर चर्चा करते हुए उन्होंने व्यक्तियों की व्यवस्था पर अधिक जोर दिया। जबकि उपरोक्त ब्रिटिश मानवविज्ञानी संस्कृति और सामाजिक प्रणालियों की अलग-अलग व्याख्या कर रहे थे, अमेरिका में उनके समकालीनों ने संस्कृति के अभिव्यक्ति और मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर अधिक जोर दिया, जिससे उन्हें संस्कृति के विभिन्न अंशों और व्याख्याओं को विचार करने में मदद मिली, जिससे "प्रतिमान" का विकास हुआ और "संस्कृति और व्यक्तिवाद" विचार के समझौता का जन्म हुआ।

2.2.4.1 संस्कृति के उद्घाटनवाद का सिद्धांत

आधुनिक विज्ञान के रूप में मानवविज्ञान तब पैदा हुआ था जब उद्घाटन का सिद्धांत चमक रहा था। उद्घाटनवादी सिद्धांतकारों के प्रभाव में, टेलर और मोर्गन जैसे अग्रणियों ने मानव समाज और संस्कृति के विकास के अध्ययन के लिए खुला को समर्पित किया। ऐसी धारणा थी कि मानविक बनावट के दृष्टिकोण से मूल्य हर जगह समान था। यह मानव जाति की मानविक एकता के एक चरण में अभिव्यक्ति दी गई थी। नतीजतन यह माना जाता था कि एक जैसे समस्याओं को देखते हुए मूल्य एक ही तरह के समाधान सोचता है। इस प्रकार, संस्कृति को सरल से जटिल और विभिन्न प्रकारों के माध्यम से उद्घाटित होना का कारण
संस्कृति समानता एवं मानव जाति की मानसिक एकता बताया गया। प्रत्येक संस्था, स्थानीय संस्कृति के भीतर स्वतंत्र रूप से उदरविकसित होती है। यदि दो संस्कृतियों ने समान लक्षण या संस्थाओं का प्रदर्शन किया तो उन्हें अभिसरण उदरकास के मामलों के रूप में संदर्भित किया गया।

यह मानते हैं कि मानव समाज मन्न दे उच्च प्रक्राफों में विकसित हुआ है, मॉगन ने तीन चरणों को प्रतिपादित किया- मनुष्य शुरु में अरण्यावस्था से बर्बरावस्था और अंत में लिपि के आविष्कार के बाद सम्बन्धित में रहने लगा। मिश्री के बर्बरों के आविष्कार के साथ, मनुष्य ने अरण्यावस्था के पुराने दौर में प्रवेश किया। बर्बरता के मध्य काल में सिंचाई द्वारा पशुओं के पीठों का संवर्धन और पीठों की खेती। लौह अवसर और लोहे के आवरणों को गलियों की प्रक्रिया ने देखा कि मनुष्य बर्बरावस्था के बाद के दौर में रहता था। तब वर्णमाता और लेखन के आविष्कार से सम्बन्धित का अग्रमन हुआ। टायलर ने धर्म के उदरकास का अर्थ किया। उनका मानना था कि पूर्वी पूजा धर्म का सबसे सरल रूप है जिसके पारस्परिक धार्मिक बहुदेवावर तथा अंत में एकत्रिकर का विकास हुआ। इन सभी अनुमानों के लिए साहित्य संस्कृतिक संदर्भ के महत्व के बारे में बहुत अधिक श्रम किया बिना एक समय और स्थान पर है जिनके बिन्धु में संकृति की संक्रमण एवं विषयक विभिन्न स्थानों से एकत्र किए गए थे। विभिन्न लेखकों ने उदरकासवाद की आलोचना की है। इन विवादों का मत था कि संस्कृति का उदरकास एक सीधी रेखा म नहीं होता है, बल्कि एक परवलयिक चक्र जैसे होते हैं।

2.2.4.2 संस्कृति का प्रसारावर दिशानंत्र

मानवशास्त्र में प्रसारावरथी संदय दे अंतर्गत विभिन्न मानववशास्त्रियों ने संस्कृति को आधार बनाकर अपने शोधों एवं लेखों का विस्तृत वर्णन किया है। परंतु इसके लेखों में संस्कृति की व्याख्या प्राप्त ऐतिहासिक दृष्टि से देखने का विलास है। जहां तक जर्मन प्रसारावर की बात है, जर्मन प्रसारावर में संस्कृतिक तत्त्व एवं संस्कृति के विभिन्न कारों का वैज्ञानिक दंग में संस्थापन किया गया है। उन्होंने बताया कि संस्कृतिक तत्त्व एवं संस्कृति के विभिन्न प्रतिभा त्त्व संसार में विभिन्न स्थानों पर प्रसारित हुए हैं। इन्होंने इसके लिए ‘संस्कृतितिक चक्र’ की अवधारणा प्रस्तुत की है। उनके अनुसार प्रत्येक समाज में संस्कृतिक वस्तुओं का एक श्रेणी होता है, जिसमें उस विशेष वास्तविक तत्त्व या संस्कृति का रूप मिलता है, जैसे-जैसे यह संस्कृतिक तत्त्व आगे बढ़ता है, उन्हें पारस्थितिक द्वारा अधार पर परिवर्तन होता है और वह दूसरे समाज में बौद्धिक रूप में प्रदर्शित होता है। ग्रेबनर ने अपनी पुस्तक ‘मेथडसर एथनोलॉजी’ (1911) में विभिन्न संस्कृतिक तत्त्वों की व्याख्या की है। इन्होंने छः क्रमिक संस्कृतिक स्तरों की व्याख्या की है, जिसमें तत्समायिन संस्कृति को सबसे प्राचीन बताया, जबकि पोलिनेशियन पिनोहीकी संस्कृति को सबसे प्राचीन बताया। इसके बाद ही साथ उन्होंने संस्कृति के प्रसार का प्रारम्भिक तथा द्वितीय प्रसार के अंतर्गत विभाजित भी किया है। अमेरिका के सबसे प्रसिद्ध मानववशास्त्र क्रांति बोआस ने समाज एवं संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य किया।
इसी तरह क्रोबर विद्वान ने भी संस्कृति को अपना आधार बनाकर अपने शोध कार्य का गठन किया और पुस्तकों की रचना की और संस्कृति क्षेत्र की अवधारणा विकसित की। उनके अनुसार “संस्कृति सीखी जाती है। अतः

इसका कोई भी तत्व किसी व्यक्ति या समूह द्वारा प्रचार किया जा सकता है, इससे यह भी स्पष्ट होता है कि समीपवर्ती समूह द्वारा बनाया गया अंतरराष्ट्रीय तथा हिंदी विवालय एम.ए. समाजशास्त्र

इसी तरह क्रोबर ने हड्डन द्वारा प्रतिपादित कला के उद्देश्य क्रम को गलत ठहराया। हड्डन के अनुसार कला का उद्देश्य क्रम व्याख्यावधारी, सांकेतिकवादी तथा रेखाग्रहणी था, जबकि क्रोबर ने अपनी शोध पुस्तिका में यह दर्शाया कि आराधनातेरी हजारों जनजातियों के मध्य अलंकारिक तथा संस्कृतिक कला के स्वरूपों का विकास साथ-साथ हुआ है। क्रोबर ने कैनिकालीन विवालय में ‘तत्व-सूची दृष्टिकोण’ पर प्रकाश डालते हुए कहा था कि संस्कृति अध्ययन में सिद्धांत का निर्माण तथा संरचना के आधार पर किया जाना चाहिए तथा उनके शिष्यों में विश्वसनीय सूचना का भंडार स्थापित किया था। क्रोबर का यह अवलोकन था कि विभिन्न जाति-रंग के बावजूद संस्कृतिक व्यवस्थाओं में हिकूत प्रकार की समानता पाई जाती है। अतः: उन्होंने सातवीं सहसंबंध पर विशेष बल दिया, ताकि विशेष सांस्कृतिक तत्वों की समानता का पता लगाया जा सके तथा संस्कृति क्षेत्र को पढ़ किया जा सके। उनके अनुसार तत्व सबसे कम पर भाषण का भंडार था लेकिन सबसे कम किसे परिभाषित किया जाए? इस प्रश्न का जवाब कहीं था। जैसे नौका एक तत्व है, लेकिन इसके सभी अंग, सजावट, दृष्टि प्रयोग तथा बनावट की विधि को तत्व के रूप में देखा जाना चाहिए। क्रोबर ने ‘संस्कृति को अधितवैयिनी तथा अधिवैयिनी कहा है। क्रोबर ने संकृति को अधिवैयिनी कहा है। क्रोबर ने संकृति को अधिवैयिनी कहा है। क्रोबर ने संकृति को अधिवैयिनी कहा है। क्रोबर ने संकृति को अधिवैयिनी कहा है।
2.2.4.3 संस्कृति का प्रकारणवाद सिद्धांत

प्रकारणवादी मैलीनोवस्की का विचार था कि मनुष्य की आवश्यकताएं, अनेक प्रकार की हैं, जैसे- सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, जैविक, भौतिक तथा मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मानव ने भौतिक तथा अभौतिक संस्कृति तत्वों का विकास किया। भाषा, साहित्य, कला, शिल्पकला आदि का आवश्यक मानव ने अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए किया। मानव की सभी आवश्यकताएं एक-दूसरे से अंतर संबंधित हैं, क़ोण कि ये मानव की समग्रता से संबंधित हैं। संस्कृति के एक पहलू में परिवर्तन से संपूर्ण संस्कृति में परिवर्तन हो जाता है। मैलीनोवस्की ने प्राथमिक, द्वितीय तथा तृतीय इकार की आवश्यकताओं का वर्णन किया है। प्राथमिक या मौलिकता का अर्थ जैविक आवश्यकता, जैसे- भूख, सुखद, योग इत्यादि संतुलित है। द्वितीय या सहायक या व्युत्पन्न आवश्यकता का संबंध उन संस्थाओं से है, जो मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होती हैं, जैसे- आर्थिक तथा कानून संबंधी। तृतीय आवश्यकता अथवा समाजनामक आवश्यकता का संबंध उन संस्थाओं से है, जो समाज को एक-जुट बनाने हेतु जरूरी होती हैं, जैसे- जादू, धर्म, खेल, कला, इत्यादि। सन 1931 में संस्कृति को परिभाषित करते हुए मैलीनोवस्की ने कहा कि “संस्कृति निवास आवश्यकता पूर्ति का एक साधन है, जिसे सांस्कृतिक विकाससत्ता कहते हैं।” अपनी पुस्तक “साइंटिफिक थलोपी ऑफ कल्चर” (1944) में संस्कृति को परिभाषित करते हुए कहा है कि ‘संस्कृति संपूर्ण सम्प्रदाय है, जिसका संबंध उपकरण, उपभोग, विभिन्न समूहों के संविधान अधिकार, मानव विचार, विश्वशाख, स्पष्ट विवाह एवं रीति-रिवाज़ से है। हम चाहें अतिव सत्ता या आदिम संस्कृति की चर्चा करें या अधिक जानिए संस्कृति की, लेकिन हमें समस्या विशाल भौतिक, मानव, धार्मिक सामग्री रहती है, जिसके आधार पर मानव प्रत्यक्ष के साथ संबंध स्थापित करता है। यह समस्या इसलिए खड़ी होती है, क्योंकि मानव के पास एक शरीर नीति है जिसके लिए जैविक आवश्यकता की पूर्ति करनी पड़ती है। दूसरी बात यह है कि मानव जिस पर्यावरण में रहता है, उसका मित्र बन जाता है। इस पारिस्थितिकी में पर्यावरण मानव को दस्तकारी के लिए आवश्यक सामग्री प्रदान करती है। इस आधार पर मैलीनोवस्की ने संस्कृति को परिभाषित करते हुए कहा है कि संस्कृति आवश्यकता पूर्ति का एक साधन है। इस प्रकार संस्कृति का विश्लेषण प्रकारणात्मक एवं संस्थात्मक अध्ययन द्वारा अधिक स्पष्ट तथा विस्तृत रूप से किया जा सकता है। मैलीनोवस्की के जादू, धर्म, विश्व, कला तथा मधुर के अध्ययन के लिए प्रकारणात्मक वृत्तिकल्प प्रस्तुत किया है। उनका मानना था कि संस्कृति मानव को जीवित रहने के लिए आवश्यक साधन देता है। मैलीनोवस्की ने संकलनात्मक आवश्यकता के अंतर्गत उस संस्थाओं की चर्चा की है जिसका कार्य समाज के सभी लोगों को एक जुट रखना था। इसके साथ ही साथ उनका कार्य समाज का अर्थत्व एवं परिवार बनाने रखना था, जिसके आंतर्गत परिपारा, मूर्चन, धर्म, मधुर, कला, उल्लेख, खेल, संस्कृत, भाषा इत्यादि आते हैं। मैलीनोवस्की ने ट्रेशरियां दोस्तवालियों की संपूर्ण संस्कृति का अध्ययन किया, जिसमें दोस्तवालियों की कला संस्कृति का अध्ययन महत्वपूर्ण था।
2.2.4.4 संस्कृति का संरचना-प्रकारबादी सिद्धांत

रेडिलफ़ ब्राउ ऐसे मानवशासी थे, जो काल्पनिक या अनुमानित अथवान के प्रति रचि नहीं रखते थे, लेकिन उन्होंने कर्त्तव्य और निश्चित के साथ अंडमान निवासियों की पौराणिक कथाओं, संस्कार, उत्सव, रीति-रिवाजों को लिखित किया। अंडमान नीपासियों के ऊपर लिखित उनका शोध प्रबंध करीब 15 साल तक अप्रकाशित रहा। इस लंबी अवधि में उन्होंने दूर्ख म तथा मायने माप के लेखन एवं सिद्धांत का अध्ययन किया। कुछ दिनों के पश्चात वे इस निष्क्रिय पर पहुँचे कि अर्थ एवं प्रकार का अध्ययन ऐतिहासिक पुनर्निर्माण की तुलना में ज्यादा महत्वपूर्ण है। जब अंडमान नीपासियों के ऊपर लिखित उनकी पुस्तक सन 1922 में प्रकाशित हुई, तब उसमें अर्थ एवं प्रकार की झलक दिखाई दी। उनकी पुस्तक में अंडमान नीपासियों की पौराणिक कथाओं तथा रीति-रिवाजों का केवल विवरण नहीं था, वरन विश्वेषण भी प्रस्तुत किया गया था।

रेडिलफ़ ब्राउन के अनुसार सामाजिक संरचना व्यक्तियों की संयुक्तता भूमिका तथा संबंधों की व्यवस्था है।

2.2.4.5 संस्कृति का संरचनावादी सिद्धांत

लाउड लेवो स्ट्रॉस ने भाषा को मायम बनाकर संस्कृति को संरचना के रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया। इनके अनुसार-

1. भाषा एवं संस्कृति समृद्ध है।
2. भाषा एवं संस्कृति औपचारिक रूप से समान है।
3. भाषा एवं संस्कृति अनुप है।
4. भाषा एवं संस्कृति सह-संबंधित हैं।

इस विचार के पूर्व आधार यह है कि ‘दोनों सांस्कृतिक व्यवहार को स्वीकार करते हैं तथा दोनों क्रियाओं की देन है। अतः दोनों मूल रूप से समान हैं।’ इस संबंध निष्क्रिय मुख्यतः दो प्रकार के हैं, प्रथम-उनके कार्य करने के सिद्धांत को अचेतन स्तर पर दशाना चहिहए द्वितीय- प्रस्तुत का नियंत्रण सार्वभौमिक नियम द्वारा होता है। संपूर्ण तर्क का सामान्य कारण यह है कि भाषा के समान नातेदारी, कला तथा संस्कृति के
अनेक तत्व संचारण व्यवस्था है। इस संबंध में लेशी स्ट्रॉस का कहना है कि समाज व संस्कृति को भाषा तक पहुंचाए बना हम समाज संस्कृति को संचारण सिद्धांत के अंतर्गत प्रस्तुत नहीं कर सकते हैं। यह तीन स्तर पर संभव है, प्रथम- नातेदारी तथा विवाह नियम समूहों के बीच नारी का वितरण दर्शाता है। द्वितीय- ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार नियम संचारण संस्कृति का वितरण दर्शाता है। तृतीय- भाषा विषयक नियम सूचनाओं का वितरण दर्शाता है। अतः कला, धर्म, पौराणिक कथा, धार्मिक कृत्य आदि भाषा के उदाहरण हैं। लेशी स्ट्रॉस अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क के स्तर भाषा के अंतरराष्ट्रीय परिवार ज्ञान अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क का वितरण दर्शाता है। उन्होंने आदिम मस्तिष्क के अंतरराष्ट्रीय परिवार भाषा के अंतरराष्ट्रीय परिवार ज्ञान अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क का वितरण दर्शाता है। उन्होंने आदिम मस्तिष्क की पौराणिक कथाओं, गीतों, व्यवहारों, मिथकों इत्यादि को भाषा का एक माध्यम मानकर अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क को समझने का प्रयास था। उन्होंने आदिम मस्तिष्क की पौराणिक कथाओं, गीतों, व्यवहारों, मिथकों इत्यादि को भाषा का एक माध्यम मानकर अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क को समझने का प्रयास था। उन्होंने आदिम मस्तिष्क की पौराणिक कथाओं, गीतों, व्यवहारों, मिथकों इत्यादि को भाषा का एक माध्यम मानकर अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क को समझने का प्रयास था। उन्होंने आदिम मस्तिष्क की पौराणिक कथाओं, गीतों, व्यवहारों, मिथकों इत्यादि को भाषा का एक माध्यम मानकर अंतरराष्ट्रीय मस्तिष्क को समझने का प्रयास था।

2.2.4.5 संस्कृति का “संस्कृति और व्यक्तिवृत्त” सिद्धांत

इस क्रम में 1920 के दशक के प्रारंभ बोआस तथा ब्रोबर के कुछ शिष्य माइंड मीड, रूथ बेनेडिक्ट तथा कोरादु-बोआस आदि उद्धववाद, प्रसारवाद, प्रकाशवाद, संरचना-प्रकाशवाद तथा अन्य परिप्रेक्ष्य सिद्धांतों के आलोचक बन गए। इन विद्वानों का मत था कि संस्कृति तथा समाज के संबंध में आधार पर स्थापित परिप्रेक्ष्य मानववादी सिद्धांत सांस्कृतिक आचरण और व्यवहार की मूल व्याख्या नहीं करते हैं। इन विद्वानों के समय की मांग सांस्कृतिक व्यवहार के विश्लेषण था। सांस्कृतिक व्यवहार का अर्थ, उन विद्वानों के अनुसार एक सांकृतिक समूह के सदस्यों के आचरण का चर्चा था। सांस्कृतिक व्यवहार का अर्थ, उन विद्वानों के अनुसार एक सांस्कृतिक समूह के सदस्यों का आचरण का चर्चा था। इन विद्वानों के कुछ मूल प्रश्नों का समाधान करना चाहिए। इन प्रश्नों का मत कि एक सांस्कृतिक समूह के सदस्यों का आचरण का प्रश्न था कि किसी सांस्कृतिक समूह के सदस्यों के व्यक्तिव्यक्ति में समानता क्यों होती है? हालाँकि अपवाद स्वरुप व्यक्तिगत अंतर भी था। इनका दूसरा प्रश्न था कि किसी सांस्कृतिक समूह के सदस्यों का व्यक्तिव्यक्ति कैसे अंतर करती है? इन प्रश्नों के
समाधान हेतु इन विद्वानों ने संस्कृति की ओर अपना ध्यान केंद्रित किया। इन विद्वानों ने पाया कि किसी एक संस्कृति संघ के सदस्यों के व्यक्तित्व में समानता है, क्योंकि उन सभी सदस्यों के समाजीकरण की प्रक्रिया समान संस्कृतिक वातावरण में संपन्न होती है। एक समूह की संस्कृति दूसरे समूह की संस्कृति से भिन्न होती है। अतः एक समूह के सदस्यों का व्यक्तित्व, आचरण, व्यवहार आदि दूसरे समूह के सदस्यों के व्यक्तित्व, आचरण, व्यवहार आदि से भिन्न होता है। इन विद्वानों ने संस्कृति एवं व्यक्तित्व के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन मनोविश्लेषण के आधार पर करने का प्रयास किया। इन विद्वानों के अनुसार संस्कृति एवं व्यक्तित्व एक ही दृष्टि के उद्देश्य का एक योग है तथा एक संस्कृति से संबंधित है।

इन विद्वानों का मानना था कि संस्कृति के पारम्परिक संबंध का अध्ययन परंपरा संदर्भ में किया जाना चाहिए। इसके अनुसार संस्कृति एवं व्यक्तित्व एक सामाजिक-सांस्कृतिक पक्ष के अंतर्गत अमानविज्ञान, समाजविज्ञान, जीवविज्ञान इत्यादि से हैं। उनके अनुसार संस्कृति एवं व्यक्तित्व एक ऐसा संगठित योग है, जो बाह्य से शिक्षा एवं सामाजिक स्थिति तथा भौमिका के रुप में संगठित रहता है तथा आंतरिक संघ से उसकी आत्मा चेतना एवं स्वयं की अवधारणा, पहचान, मूल्य विचार तथा विचार का एक ऐसा संगठित योग है, जो बाह्य से शिक्षा एवं सामाजिक स्थिति तथा भौमिका के रुप में संगठित रहता है।

इनके अनुसार संस्कृति एवं व्यक्तित्व एवं संस्कृति संकुल मिलकर संकृति का निर्माण करते हैं। संकृति तत्त्व, संस्कृति की सबसे लघु इकाई है। जब कई संस्कृति तत्त्व मिल जाते हैं, तब संस्कृति संकुल का निर्माण होता है। जब संस्कृति तत्त्व एवं संस्कृति संकुल का समक्लस्त प्रकारात्मक सम्बन्ध में होता है, तब संस्कृति प्रतिमान का निर्माण होता है। अतः स्पष्ट है कि संस्कृति प्रतिमान कई संस्कृति तत्त्व तथा संस्कृति संकुलों से बना होता है।
2.2.4.6 संस्कृति का नव-उद्दिष्टकासवादी सिद्धांत

जूलियन एच. स्टीवर्ड (1955) ने अपनी पुस्तक ‘थ्योरी ऑफ कल्चरल चेंज’ में संस्कृति उद्दिष्टक की बात की है। उन्होंने संस्कृति उद्दिष्टक का तीन श्रेणी में बाटा है- एकरेखीय उद्दिष्टक, सार्वभीमक उद्दिष्टक एवं बहरेखीय उद्दिष्टक। स्टीवर्ड ने विषय की विभिन्न संस्कृतियों को इन उद्दिष्टकीय श्रेणियों में रखा है। इसके साथ ही साथ उन्होंने संस्कृति पारिस्थितिकी की भी चर्चा की है। उनका मानना था कि विषय की जितनी भी संस्कृतियाँ हैं, उनका स्थानीय पारिस्थितिकी से विषय संबंध होता है। स्थानीय पारिस्थितिकी के आधार पर विभिन्न संस्कृतियों में विभिन्न भीतिक उपकरणों का समावेश होता है। इसके लिए उन्होंने मानव एवं उनके आवास के बीच के अंतसंबंध को दर्शाया है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है। उनका मानना था कि मनुष्य अपने आवास का मनमाना सांकृति पारिशिक के अंतर्गत है।
2.2.5 सारांश (Summary)

मानवविज्ञान में संस्कृति की चर्चा और अध्ययन में, मानवविज्ञानी ने संस्कृति की कई विशेषताओं की पहचान की है जो संस्कृति के गुणों को दर्शाते हैं और भिन्न अर्थों को व्यक्त करते हैं, जिन्होंने संस्कृति के सिद्धांतों को और समृद्ध किया है। इस इकाई में हमने इन्हीं अवधारणाओं और उपादान को वर्णन और विश्लेषण किया गया है। संस्कृति के संबंध में भिन्न अर्थों के मत भिन्न-भिन्न थे और इस कारण इन्होंने संस्कृति के भिन्न-भिन्न सिद्धांत प्रतिपादित किए जिसका उल्लेख इस इकाई में किया गया है।

2.2.6 बोध प्रश्न

बहुविक्ष्पीय प्रश्न

1. एक संस्कृति की एकल तत्त्व या अद्वैत इकाई है
   (क) तत्त्व या विशेष (ख) संस्कृति संकुल (ग) सांस्कृतिक प्रतिमान (घ) सांस्कृतिक मूल्य

2. संस्कृति के दो पहलू तत्व (ethos) तथा जीवनदृष्टि (edos) का उल्लेख किया
   (क) हर्षकोविट (ख) मार्गन (ग) टायलर (घ) क्रोबर

3. सांस्कृतिक सापेक्षवाद की अवधारणा है
   (क) पेन्सर (ख) हर्षकोविट (ग) गिडीस (घ) हेनरी मेन

4. स्थान ‘ट्रॉजन्यांट्स’ का अध्ययन किया
   (क) क्लूक्हीन (ख) टायलर (ग) मैलिनोवस्की (घ) मार्गन

5. किसने संस्कृति के उद्दिक्षाय के तीन चरण, अर्थव्यवस्था, वर्तमान स्थर, अनुवादक एवं सम्बन्धवाद स्तर में बाटा?
   (क) मैलिनोवस्की (ख) टायलर (ग) क्लूक्हीन (घ) मार्गन

उत्तर- 1. तत्त्व या विशेष, 2. क्रोबर, 3. हर्षकोविट, 4. मैलिनोवस्की, 5. मार्गन

दूसरा उत्तर: प्रश्न

1. संस्कृति के विभिन्न साधनों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

2. संस्कृति के उद्दिक्षाय सिद्धांत की व्याख्या कीजिए।

3. संस्कृति के प्रसारवाद एवं प्रकाशवाद सिद्धांत की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

4. संस्कृति के ‘संस्कृति और विकल्प’ सिद्धांत को स्पष्ट कीजिए।

5. संस्कृति संकुल, प्रतिमान एवं क्षेत्र की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
लघु उत्तरीय प्रश्न

1. संस्कृति के बिभिन्न उपादानों का वर्णन कीजिए।
2. संस्कृति और सम्बन्ध में अंतर समंदर कीजिए।
3. संस्कृति के नव-उद्देश्यसाधारण सिद्धांत की विवेचना कीजिए।
4. मूल्य की व्याख्या कीजिए।
5. प्रकट एवं अप्रकट संस्कृति की व्याख्या कीजिए।

2.2.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

- Kumar, Shiv (2018) Ph.D. Thesis “अभिज्ञान, निरंतरता एवं सांस्कृतिक परिवर्तन: धोबी की परम्परागत लोक कला पर एक मानवशास्त्रीय अध्ययन”. submitted in MGAHV Wardha


इकाई 3  परिवार: अर्थ, परिभाषा, प्रकार एवं उत्पत्ति के सिद्धांत
(Family: Meaning, Definition, Type and Theories of Origin)

इकाई की रूपरेखा

2.3.0  उद्देश्य

2.3.1 प्रस्तावना (Introduction)

2.3.2 परिवार: एक प्रस्तावना (Family: An Introduction)

2.3.3 परिवार का अर्थ और परिभाषाएं (Meaning and Definition of Family)

2.3.3.1 परिवार की विभिन्न परिभाषाएं हैं (Various Definition of Family)

2.3.4 परिवार: एक पार-सांस्कृतिक परिवेश (Family: A Cross-Cultural Perspective)

2.3.5 परिवार के अध्ययन का एक मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण (Anthropological Perspective On the Study of Family)

2.3.5.1 घरेलू समूह (Domestic Group)

2.3.6 परिवार के प्रकार (Types of Family)

2.3.6.1 विवाह प्रथा के आधार पर (On the basis of Marriage Practices)

2.3.6.2 निवास के नियम के आधार पर (On the Basis of Rule of Residence)

2.3.6.3 वंश के आधार पर (On the Basis of Descent or Ancestry)

2.3.6.4 रक्त संबंधों की प्रकृति के आधार पर (On the Basis of Nature of Blood Relations)

2.3.6.5 सत्ता के आधार पर (On the Basis of Authority)

2.3.6.6 आकार, संरचना और संरचना के आधार पर (On the Basis of Size, Structure and Composition)

2.3.7 परिवारिक रूपों में बदलाव (Variations in family forms)

2.3.8 परिवार की उत्पत्ति के सिद्धांत (Theories of the Origin of Family)

2.3.8.1 यौन साम्प्रदाय का सिद्धांत (Theory of Sex Communism)

2.3.8.2 पितृसाम्राज्य परिवार का सिद्धांत (Patriarchal Family Theory)

2.3.8.3 मातृसाम्राज्य परिवार का सिद्धांत (Matriarchal Family Theory)

2.3.8.4 उद्विकास वादी सिद्धांत (Evolutionary Theory)

2.3.8.5 एकविवाही (मोनोगैमी) का सिद्धांत (Theory of Monogamy)

2.3.8.6 बहुविवाही सिद्धांत (Multi Factor Theory)
2.3.9 सारांश (Summary)

2.3.10 बोध प्रश्न

2.3.11 संरचना ग्रंथ सूची

2.3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे:

- परिवार का अर्थ और परिभाषाएँ समझने में सक्षम होंगे।
- परिवार के अध्ययन के लिए एक मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण को समझने में सक्षम होंगे।
- परिवार के प्रकार और इसके आधार को समझने में सक्षम होंगे।
- परिवार के उत्पत्ति के सिद्धांतों को समझने में सक्षम होंगे।

2.3.1 प्रस्तावना

जब एक बच्चा पैदा होता है, तो वह एक परिवार में पैदा होता है जिसे समाज का सबसे छोटी सामाजिक इकाई है। परिवार वह सामाजिक इकाई है जो बच्चे को सामाजिक मानदंडों, मूर्तियों, नियमों और विनियमों से अवगत करती है। उनका समाजीकरण करती है। अंग्रेजी शब्द फैब्ली को हिंदी भाषा में विभिन्न शब्दों जैसे कुटुंब, गृह, कुल और परिवार के नाम से जाना जाता है। इस इकाई में हम परिवार की विभिन्न परिभाषाएँ, परिवार के प्रकार और एक सामाजिक संस्था के रूप में परिवार की उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धांत समझेंगे। इसके अतिरिक्त हम परिवार का पार-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य, परिवार के अध्ययन का मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण और घरेलू समूह के बारे में भी जानेंगे।

2.3.2 परिवार: एक प्रस्तावना

परिवार, समाज की एक मुख्य अभिव्यक्ति है जो विचारों और मान्यताओं के समुच्चय को सम्मिलित करता है। जो मूर्तियों को दर्शाने के साथ-साथ व्यक्तिगत स्तर और समूह स्तर पर समाज को समझने में मदद करता है। कुटुंब (household) उन सामाजिक समूहों को संदर्भित करता है जो नातेदारी तथा गैर-नातेदारी संबंधों पर आधारित हो सकते हैं। एक कुटुंब (household) के सदस्य जुड़ी नहीं की केवल रूप से या वेतनाक्षर संबंधी हों, यह सहपाठी, दोस्त, या विवाहित संबंध के भी हो सकता है। घरेलू समूह (Domestic Group) संसाधन स्वचालित वाले समूहों को संदर्भित करता है। समाज के परिवर्तन, विकास और उन्नति को समझने के लिए परिवार, कुटुंब, और घरेलू समूह का अध्ययन करने की आवश्यकता है। कई विद्वानों ने परिवार को नातेदारी और परिवारों के विशिष्ट रूपों में विनियमित किया गया है। उदाहरण के लिए, आप कोई कहता है, "पिछले हमें पूरा परिवार अतिम संस्कार में शामिल हुआ था"; यह सा पॉडियमों से परिवार में रहा है; मैं अपनी पत्नी के साथ यहां अपार्टमेंट में रहता हूँ लेकिन मेरा परिवार लंदन में है। जब
किसी को बेटी की शादी के रिसेप्शन के लिए उसके दोस्त द्वारा आमंत्रित किया जाता है, तो प्राथमिक विचार यह आता है कि वह किसके साथ जाना चाहिए या वे कौन लोग हैं, जो उसके साथ जा सकते हैं, क्या वह निम्नलिखित पति और पत्नी या पति, पत्नी और अविभाजित बच्चे या पति, पत्नी, अविभाजित बच्चे और पति के माता-पिता या पति, पत्नी और विभाजित बच्चे अपने बच्चों के साथ ये सोचने के लिए हैं कि जब कोई देश का उपयोग कर रहा है तो परिवार को कैसे परिभाषित किया जाए। ऐसे कई दृष्टिकोण हैं जिनके द्वारा कोई भी परिवार की धारणा को परिभाषित कर सकता है। परिवार की परिभाषा कुंदु के घरेलू समूह के साथ होती है। जब पिता, माता और पिता और पिता के बच्चे अपने बच्चे के साथ। ये सोचने के तरीके हैं कि किसी की की जाती है जब कोई परिवार का उपयोग कर रहा है तो परिवार का अर्थ और परिभाषा कर सकते हैं।

जॉर्ज पीटर मॉडॉक कहते हैं कि परिवार एक सामाजिक समूह है जिसकी विशेषता आम निवास, आर्थिक सहयोग और प्रजनन है। इसमें दोनों लिंग, जिनमें से कम से कम दो सदस्य के मध्य सामाजिक संबंध हो, एक या अधिक बच्चे होंगे या यीशुसंबंधी सहयोग करने वाले हों। उन्होंने कहा कि परिवार के कई महत्वपूर्ण कार्य हैं: यह प्रजनन, भोजन और आश्रय प्रदान करता है, यह आर्थिक गतिविधि और उपाधि की इकाइयों है, यह उपभोक्ता की इकाइयों है, सदस्यों के बीच सहयोग दर्शाता है, इसमें श्रम के विभाजन होता है, यह प्राथमिक सामाजिक जीवन, मूल्य और व्यक्तिगत निर्माण में महत्वपूर्ण कार्य करता है। जैविक और सामाजिक कारकों की अंतरिक्ष एक परिवार को सामाजिक ता देता है। किसी भी घटना में हम मानव परिवार के सामाजिक और जैविक-कारकों का निरीक्षण कर सकते हैं।

2.3.3 परिवार का अर्थ और परिभाषाएँ

समकालीन संदर्भ में, पूरे मानव इतिहास में पारिवारिक संबंधों के किसी न किसी रूप में व्याप्तता और निरंतरता के बावजूद, एक परिवार की परिभाषा पर कोई एक समान सहमति नहीं है। पश्चिम में, 1960 के दशक के आसपास, पारिवारिक मुद्दों के संबंध में सामाजिक विचार में क्रांति ने "परिवार" की एककृत अवधारणा को तोड़कर परिवारों पर समकालीन चर्चाओं को प्रभावित करना जारी रखा है। जैसा कि यह वैचारिक समय बनी हुई है, सामाजिक वैज्ञानिक और नीति निर्माता इस वात पर बहस कर रहे हैं कि कैसे व्यक्तियों का समूह परिवार बनता है और उसका मायने रखता है। संपूर्ण मानव इतिहास में पारिवारिक संबंधों के किसी न किसी रूप की व्याप्तता और निरंतरता के बारे में एकमत होने के बावजूद, वर्तमान संदर्भ में, एक परिवार क्या है, इसकी परिभाषा पर एक समान सहमति नहीं है। पश्चिम में पारिवारिक मुद्दों के संबंध में सामाजिक विचार में क्रांति, जो कि 1960 के दशक की उपल-पुथल से हुई थी, ने "परिवार" की एककृत अवधारणाओं को तोड़कर परिवारों पर समकालीन चर्चाओं पर प्रभाव डालना जारी रहा है। इमिल दुरुबस्टी ने अपने काम में जोर दिया कि परिवारों के कई रूपों को अपनाया और फिर भी एक प्रमुख सामाजिक संस्था बनी है।
रही। इस अवधारणा को जॉज मडॉक (1949) द्वारा और विस्तृत किया गया था। अपने आधार के रूप में पश्चिमी और गैर-पश्चिमी दोनों समाजों के डेटा का उपयोग करते हुए, मडॉक ने निष्कर्ष निकाला कि हर समाज को परिवार की इकाईयाँ की विशेषता थी जो आर्थिक सहयोग, यौन प्रजनन और आम निवास के आसपास आवश्यक की जाती है। उनकी परिभाषा (जो अभी भी उपयोग में है) की कार्यान्वयन प्रकृति के कारण व्यापक रूप से आलोचना की गई है। समकालीन सिद्धांतकार बताते हैं कि परिवार की अवधारणा वास्तव में नैतिक प्रभाव के साथ एक वैचारिक निर्माण है। परिवार की परिभाषा पर बहस भी परिवार के अधिकारों के बजाय व्यक्तिगत अधिकारों के लिए तरीके के साथ खोल हो गई है, और कुछ का यह भी कहना है कि केवल कुछ प्रकार के परिवारों को सामाजिक लाभ के प्राप्तकर्ता के रूप में माना जाना चाहिए। किर्मी, बोजन, ब्राउन और ओक्सले (2004) का सुझाव है कि "परिवार की कोई एकल परिभाषा संभव नहीं हो सकती है। परिवार की मौजूदा परिभाषा को दो तरीकों से वर्गीकृत किया जा सकता है:

> संरचनात्मक (Structural) परिभाषाएं: जो कुछ रूप विशेषताओं, कानूनी संबंधों या निवास के कुछ विशेषताओं के अनुसार परिवारिक सदस्यता निर्देश करती हैं; तथा

> प्रकार्यात्मक (Functional) परिभाषाएं: जो उन व्यवहारों को निर्देश करती हैं जो परिवार के सदस्य प्रदर्शन करते हैं, जैसे कि आर्थिक संसाधन साझा करना और युवा, बुजुर्ग, बीमार और विकलांगों की देखभाल करना।

2.3.3.1 परिवार की विभिन्न परिभाषाएं

ऑक्सले शाब्दकोष के अनुसार एक रुप या विवाह से संबंधित लोगों का एक समूह जिसमें माता-पिता और उनके अतिवारित बच्चे एक इकाई के रूप में एक साथ रहते हैं।

परिवार एक सामाजिक समूह है जिसकी विशेषता आम निवास, आर्थिक सहयोग और प्रजनन है। इसमें दोनों लिंगों के वयस्क शामिल हैं, जिनमें से कम से कम दो एक सामाजिक रूप से स्वीकृत यौन संबंध बनाए रखते हैं, और एक या एक से अधिक बच्चे, स्वयं या गोद लिए हुए, यौन रूप से सहायता करने वाले युगल (मडॉक, 1949 स्टील, किड, और ब्राउन, 2012, में उद्धृत)

ऑस्ट्रेलियाई सांख्यिकीय व्यूहों के अनुसार दो या अधिक व्यक्ति, जिनमें से एक की उम्र कम से कम 15 वर्ष है और जो रहते, विवाह (पंजीकृत या डी फैक्टो), गोद लेने से संबंधित हैं और जो आमतौर पर एक ही घर में रहते हैं।
अमेरिकी जनगणना ब्यूरो के अनुसार एक परिवार दो लोगों या अधिक (जिनमें से एक गूहस्थ है) का एक समूह है जो जनन, विवाह या गोद लेने और एक साथ रहने से संबंधित है; ऐसे सभी लोगों (संबंधित उप-सदस्यीय सदस्यों सहित) को एक परिवार का सदस्य माना जाता है।

व्यक्तियों के एक समूह जो सीधे परिजनों द्वारा जोड़ा जाता है, जिनमें से व्यस्क सदस्य बच्चों की देखभाल की जिम्मेदारी लेते हैं (गिडेस 1993)।

संबंधित परिजनों का एक संजाल (Goldthorpe, 1987)

परिवार "औपचारिक, रूढ़ या विवाह संबंधों के बजाय अंतरंग स्नेहन के व्यक्तिपर कर अर्थ को दर्शाता है "(सिल्वा एण्ड स्मार्ट, 1999)।

एक परिवार व्यक्तियों का एक समूह होता है जिसमें एक पीढ़ीगण संबंध मौजूद होता है (यानी, माता-पिता और उनके बच्चे) इसके अतिरिक्त, परिवार के सदस्य घनिष्ठ अंतरंग संपर्क प्रदान करते हैं (आमतौर पर गहरी प्रतिवेदना, विधायक, समाज, समान और लंबे समय तक दायित्व की भावना की विशेषता है)। यह माना जाता है कि यौन अंतरंगता माता-पिता के बीच संबंध का एक तत्त्व है। संसाधनों को प्राप्त करने, आवंटित करने और वितरित करने (जैसे, समय, पैसा, स्थान, और करीबी व्यक्तिगत संपर्क) में सहायता प्रदान करता है (डे, 2010)।

एक परिवार "कम से कम एक व्यस्क सदस्य और एक या एक से अधिक लोगों द्वारा गठित एक मनोसामाजिक समूह है, जो एक समूह के रूप में पारस्परिक आवश्यकता पूर्ति, पोषण, और विकास के लिए काम करते हैं (फिस्टपैट्रिक और वायबोल्ट, 1990)।

2.3.4 परिवार: एक पार-सामाजिक परिपथ

परिवार दुनिया भर में एक मुख्य सामाजिक संस्था के रूप में मिलते हैं। कई उत्तरी यूरोपीय देशों और कनाडा में, परिवारिक अनुपालनों में अब समानार्थी सेक्स विवाह शामिल है, जो कानूनी हो गया, जिसकी शुरुआत डेनमार्क में 1989 में आधिकारिक तौर पर पंजीकृत कानून के साथ हुई, जिसके बाद नॉवे (1993) में पंजीकृत समान लिंग लेने वालों के लिए कानूनी अधिकारों का विस्तार हुआ। स्वीडन (1994), नीदरलैंड (2001), बेल्जियम (2003), स्पेन (2005), ब्रिटेन (2005), और कनाडा (2005) एक व्यक्ति मानवविज्ञान साहित्य में प्रलग्न सेक्स समूहों और परिवारों का जो उल्लेख मिलता है वह इसने मौलिक रूप से भिन्न है। वैश्वीकरण और परिवारों के बीच संबंधों पर व्यक्ति परिपथ को समझने के लिए, गैर-पश्चिमी समाजों में परिवार की अवधारणा की जांच करने का सुझाव दिया गया है। कई गैर-पश्चिमी समाजों में, एक व्यक्ति के लिए संभव समूह अभी भी, उसके परिजनों से होता है, ऐसे रिष्टे जो नाबिक (न्यूनतम) परिवार के संबंधों से बहुत आगे तक फैले हुए हैं जो संयुक्त राज्य और यूरोप में इतने सारे लोगों के लिए आदर्श हैं। इन समाजों में, परिवारों को अक्सर निर्णय लेने की प्रक्रिया में खींचा जाता है, जो उन मुद्दों पर व्यक्तिगत जीवन को
प्रभावित करता है। हालांकि, कई गैर-परिवारी स्थानों में परिवर्तनों के लिए दावतव और सामाजिक समूह की देखभाल से कोई विचलन किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को बराबर कर सकता है। पारिवारिक जिम्मेदारियाँ, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों के बावजूद भी महत्वपूर्ण बनी हुई हैं।

2.3.5. परिवार के अध्ययन का एक मानववैज्ञानिक दृष्टिकोण

इस प्रकार के दृष्टिकोण संस्कृति और व्यक्तित्व के क्षेत्र में समस्याओं के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं। इसमें दो कार्यगणनात्मक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है अर्थात् किसी दिए गए समाज के सांस्कृतिक प्रतिमाओं के अधिक विवरणीय और व्यक्तित्व विवरण पर कैसे पहुंचें और संस्कृति और व्यक्ति के बीच संबन्धों की बेहतर समझ कैसे प्राप्त करें। परिवार के अध्ययन परिवार में अवसाद, परिवार में समाज, परिवार की अस्थिरता पर केंद्रित है; जिसका उपयोग सामाजिक कार्यकर्ता, सामाजकात्मक, मनोवैज्ञानिक, मनोविक्षिप्तक और अन्य लोगों द्वारा किया गया है। इस प्रकार अध्ययन के रूप में चित्रित किया जा सकता है जिसमें पारिवारिक जीवन के विशेष पहलू पर विचार किया जाता है। किसी व्यक्ति और उसके सांस्कृतिक प्रतीतियों के अध्ययन की समस्या का समझने के लिए मानवविज्ञान में विभिन्न पद्धति का उपयोग किया जाता है, लेकिन व्यवहारिक और सामाजिक पक्ष, दोनों ही इसकी सीमा होती है। हालांकि, अधिकांश मानवविज्ञानीय अध्ययनों में, परिवार को एक स्ट्रीटरोडाइप के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जहां मुख्य और वास्तविक पारिवारिक जीवन की समस्याएं और विविधता के बजाय परिवार के संचालन और औपचारिक पहलूओं की प्रतिकूल पर होता है। एक ध्रुव पर संस्कृति के वैचारिक चरम और दूसरे पर व्यक्ति के बीच की खाई को पाटने के लिए गहरा मामलों के अध्ययन को उपयोग किया जाता है। पारिवारिक मामलों के अध्ययन हमें उन कारकों के बीच अंतर करने में सक्षम बनाते हैं जो सांस्कृतिक हैं और जो स्थितिजन्य हैं। विशिष्ट पारिवारिक अध्ययन के अध्ययन करने के लिए, एक संस्कृति का अध्ययन करने का लाभ यह है कि इससे हमें कई व्यक्ति किस प्रकार संस्था का अर्थ प्राप्त करता है वह समझने में मदद मिलती है। मेयर फोवर्स ने परिवार की व्याख्या एक घरेलू समूह के रूप में की है।

2.3.5.1 घरेलू समूह

किसी भी सामाजिक संस्था का समग्र रूप से अध्ययन करने के लिए, इसे पारिसंधितिक, आर्थिक, जनसाध्यक्षी, मनोवैज्ञानिक और शारीरिक रूप से विचार करना महत्वपूर्ण है जो इसके आवाज और संरचना को प्रभावित करता है। घरेलू समूह परिवार, जैविक, मनोवैज्ञानिक घटनाओं में निहित है। घरेलू समूह संसाधन स्वामित्व वाले समूहों को सम्बन्धित करता है। एक घरेलू समूह के सदस्य श्रम के अपने हिस्से का योगदान करते हैं और विशेष रूप से श्रम विभाजन के आधार पर विभिन्न प्रकार की उपादन गतिविधियाँ करते हैं, विशेष रूप से उम्र, लिंग और प्रस्तिथितके आधार पर। उनके पास राजनीतिक कार्य भी होते हैं, वे व्यक्तिगत रूप से पूरी
तरह से इस कार्य में प्रशिक्षण लेते हैं तथा व्यक्ति राजनीतिक-यूरल डोमेन में प्रवेश कर सकते। चूंकि वे संसाधन के मालिक समूह हैं, इसलिए घरेलू समूह उत्पादन इकाई के रूप में कार्य करता है। घरेलू समूह के सदस्य उन संसाधनों का उपयोग करने में लगे रहते हैं जो समूह के पास हैं और आर्थिक उत्पादन में शामिल हैं।

यही कारण है कि परिवार की परिभाषा घरेलू समूह के साथ ओवरलैप होती है। एक घरेलू समूह में श्रम और आर्थिक उत्पादन शामिल थे, एक बार इन संसाधनों का संकलन हो जाने के बाद, इसे विभिन्न खपत इकाई के बीच विभाजित किया जाता है। इन इकाइयों में अलग अलग स्थान, अलग आवासीय इकाइयों और भिन्न उपभोग इकाइयों हो सकती हैं।

उदाहरण: बहुविवाहित समाज में उत्पादन की खपत इकाई प्रजनन की एक इकाई के रूप में कार्य करती है। पति और पत्नी संबंधी भी युवा हैं और संतान को जन्म दे रहे हैं, लेकिन जब पत्नी रजोनिवृत्त प्राम कर लेती है या पति वृद्ध हो जाता है, प्रजनन में अधिक हो जाता है तो वे उपभोग इकाइयों में समर्पित हो जाते हैं।

मेयर फोर्ट्स ने कहा कि घरेलू समूह अनिवार्य रूप से हाउसहोलिंग और हाउसकिपिंग मूड हैं जो सामग्री संसाधन और सांस्कृतिक संसाधन प्रदान करने के लिए संगठित करते हैं जिन्हें अपने सदस्यों को बनाए रखने और बढ़ाने के लिए आवश्यक है। वे चर्चात्मक विकास से जुड़े हैं। यह विशेष रूप से घरेलू समूह के विकास चरण के रूप में जाना जाता है। उन्होंने आगे कहा कि ग्रामिन घरेलू समूह, घरेलू समूह के विकास चरण में तीन चरणों से जुड़ते हैं:

1) विस्तार का चरण- यह शादी से शुरू होता है और पहले बच्चे के जन्म तक फैलता है और अंतिम बच्चे के जन्म तक इसका विस्तार होता रहता है। यह चरण पत्नी/महिला की प्रजनन क्षमता और पत्नी के रजोनिवृत्ति और पति की असमंदक्तता जैसे शारीरिक कारकों पर निर्भर है। यह विस्तार, अवधि की लंबाई निर्धारित करता है।

2) फैलाव का चरण- यह पहले सबसे बड़े बच्चे के विवाह से शुरू होता है और यह अंतिम सबसे छोटे बच्चे के विवाह तक जारी है। पितृवंशीय प्रणाली में, बेटे आम तौर पर अपने घरेलू समूह की एक नई गृहात्मक उपभोग की नई इकाई स्थापित करते हैं। कुछ घरेलू समूहों में, सबसे छोटे बेटे या पिता के साथ रहते हैं।

3) प्रतिस्थापन का चरण- यह माता-पिता की उम्र बढ़ने के साथ शुरू होता है और समय बीतने के साथ उनकी मृत्यु तक जारी रहता है। माता-पिता बड़े हो जाते हैं और किसी भी शारीरिक गतिविधि को करने के लिए कोई सहनशक्ति नहीं होती है। वे अपने बच्चों पर भरोसा करते हैं वे उनसे अनुशासन करते हैं जो वे अपने कार्य का प्रतिनिधित्व करें। इस प्रक्रिया में माता-पिता अब आर्थिक इकाई में भाग नहीं लेते हैं, इस प्रकार उनका अधिकार/शक्ति धीरे-धीरे कम हो जाती है।
बच्चे स्वायत्त तरीके से बढ़ते हैं और निर्माण लेते हैं। बच्चे माता-पिता परिवार के मुखिया की जगह लेते हैं और फिर विस्तार के चरण से गुजरते हैं।

ये 3 चरण जहाँ नहीं कि चरणों के समान अनुक्रम का पालन करने के कुछ समूह विस्तार के चरण को छोड़ सकते हैं। घरेलू समूह मानव जीवन कार्यान्वयन की तरह है जो बच्चे/व्यक्ति का पोषण करता है। एक व्यक्ति का जीवन, जीवन के चार चरणों से गुजरता है।

• मातृकृत्व सेल- माता-पिता युग्म, तब शुरू होता है जब बच्चा मां के गर्भ में होता है।
• पितृकृत्व सेल- जब बच्चा रूपान्तर शुरू करता है, तो पिता बच्चे के करीब आता है और उसकी जिम्मेदारी लेता है। बच्चा माता-पिता से बुनियादी कौशल प्राप्त करता है और उनके करीब आता है।
• घरेलू समूह में प्रवेश करना- बच्चा चलना शुरू कर देता है, घर से बाहर निकलने की अनुमति नहीं, माता-पिता / बड़ों / भाई-बहनों के मार्गदर्शन में लगातार बच्चा अपने माता-पिता के अलावा अन्य लोगों से कौशल सीखता है।
• पालिटिको-न्यूरल डोमेन में प्रवेश करना- बच्चा घरेलू डोमेन के बाहर सार्वजनिक ज्ञानक्षेत्र में प्रवेश करता है और कार्यालयों में जिम्मेदारियों, पदों को प्राप्त करता है।

2.3.6 परिवार के प्रकार

विभिन्न मानवविज्ञानों ने परिवार को वर्गीकृत करने का प्रयास किया। परिवार का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया गया है। परिवार एक सार्वभौमिक सामाजिक समूह है, इसके चार, रूप, संरचना या प्रकार समाज से समाज में भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिए, भारत में संयुक्त परिवार का अन्य तरह से अध्ययन कर सकते हैं और विकसित देशों में नाभिक परिवार के विभिन्न रूपों में। इसमें कोई संदेह नहीं है की कई कारक, संस्कृति और सामाजिक मूल्यों में भिन्नता मौजूद है, इस प्रकार विभिन्न प्रकार के परिवार पाए जाते हैं। इसलिए परिवार का सार्वभौमिक वर्गीकरण प्राप्त करना एक कठिन कार्य है।

2.3.6.1 विवाह प्रथा के आधार पर

परिवार को चार प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:

a) एकविवाही परिवार- परिवार में एक पति, एक पत्नी और बच्चे शामिल होते हैं। उन दोनों को एक से अधिक पति की जीवनसाथी रखने की मनाही है। इस रूप को आदर्श रूप माना जाता है।

b) बहुविवाही परिवार- एक व्यक्ति के एक से अधिक पतियों से शादी करता है या एक पत्नी एक से अधिक पतियों से विवाह करती है। बहुविवाह परिवार दो प्रकार के होते हैं, अर्थात् बहुपति परिवार और बहुपति परिवार।
• बहुपति परिवार- एक समय में एक महिला के कई पति होते हैं। यदि पत्नी के पति एक दूसरे से संबंधित नहीं हैं, तो इसे गैर-भ्रतवादी के बहुपति परिवार के रूप में जाना जाता है। उदाहरण: केरल के नायर। यदि महिला के पति भाई के रिश्ते में एक-दूसरे से संबंधित हैं, तो इसे भ्रतवादी बहुपति परिवार के रूप में जाना जाता है। उदाहरण: नीलगिर पहाड़ियों की टोड़ा और उत्तराखंड के जीनसार और बावर क्षेत्र की खास। इसमें सभी बाबा भाई की पत्नी अपनी पत्नी का अंतर नहीं हैं, और सभी छोटे भाई उसके साथ यौन संबंध रखते हैं। यदि पत्नी और छोटे भाई के बीच उम्र का अंतर है, तो वह धार्मिक रूप से एक पत्नी लाता है, पिता से सभी भाइयों की पत्नी के रूप में वह रहता है।

• बहुपत्नी परिवार- एक पुरुष को एक से अधिक महिलाओं से विवाह करने की अनुमति है। इस प्रकार इस परिवार में एक पति और कई पत्नियाँ हैं। उदाहरण: अणाचल देश में इममी के बीच पाई जाती है। सभी पत्नियां पति के साथ नहीं रह सकती हैं, पत्नियों के पास एक समान अन्न भंडार है, लेकिन वे अलग-अलग गृह में रहती हैं।

2.3.6.2 निवास के नियम के आधार पर

परिवार को छह प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:

a) मातृस्थानी परिवार- वह परिवार जिसमें एक यि अपनी पत्नी के मातृ निवास में विवाह उपरांत रहता है। यह किस्म मियाच, मेघालय के खासी, केरल के नायर के बीच पाई जाती है।

ख) पितृस्थानी परिवार- वह परिवार जिसमें विवाह के बाद बेटी अपने पिता के पास रहती है और अपने पिता के पिता के निवास के साथ रहती है। यह प्रकार आमतौर पर उत्तरी और मध्य भारत के अधिकांश थानों में पाया जाता है।

ग) हृदस्थानी परिवार- इस प्रकार में, शादी के बाद विवाहित जोड़े अपने निवास को वैकिपका रूप से बदलते रहते हैं। पति के पैतृक और पत्नी के मातृक दोनों परिवारों को महत्व दिया जाता है। सभी अनुशासनों, पदों और रीति-रिवाजों का अभ्यास किया जाता है।

d) मातृस्थानी परिवार- पति निवास बदलता है, जहाँ नहीं कि पत्नी के मातृ स्थान पर रहे बच्चे पत्नी के मातृ रिस्तेदारों के पास रहते हैं। उदाहरण: केरल के नायर, मुख्य रूप से अपनी पत्नी की संपत्ति की देखभाल करने के लिए, पति पास के स्थान पर चले जाते हैं।

ई) पितृस्थानी परिवार- इस प्रकार में, महिला अपने पति के साथ पति के रिस्तेदारों के पास रहती है।

f) नवस्थानी परिवार- जब पति और पत्नी अपने माता-पिता से दूर एक नया स्थान पर बस जाते हैं। उदाहरण: यदि पति का परिवार चेनई में रहता है और पत्नी का परिवार दिल्ली में रहता है, और पति और पत्नी दोनों लंदन में एक नए स्थान पर बस जाते हैं।
4) मातृमामास्थानी परिवार- इस प्रकार का परिवार मातृमामास्थानक समाजों में पाया जाता है। संपत्ति की देखभाल के लिए बहन के बेटे को पत्नी लाने और अपनी माँ के भाई मामा के परिवार में शामिल होने की आवश्यकता होती है। इसका मतलब है कि शादी के बाद नवविवाहिता जोड़ा पत्नी के मामा के घर रहता है। "अंबुं" का अर्थ है मामा। उदाहरण: केरल के मातृमामास्थानक समाज।

2.3.6.3 वंश के आधार पर

परिवार को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:

a) पितृवंशीय परिवार- यह किस्म आमतौर पर पूरी दुनिया में प्रचलित है। इस प्रकार में वंश की पिता रेखा के माध्यम से निर्धारित किया जाता है और पिता से पुत्र और पीतृ तक जारी रहता है। संपत्ति और परिवार का नाम या जाति बेटों को विरासत में मिलती है। उदाहरण: हिरयाणा के जात। इस प्रकार में पुरुष पुत्र पुत्र पुत्र पुत्र तक जारी है और महिलाएं या तो जात पर हैं या निम्न रंग की हैं। पितृमामास्थानक परिवारों को अगे चलकर अंत पितृमामास्थानक परिवारों और मामागत पितृमामास्थानक परिवारों में विभाजित किया जाता है।

b) मातृवंशीय परिवार- वंश माता के माध्यम से विरासत में मिला है। यह मां के माध्यम से अपनी बेटी को उसकी पोती बंद रहे के लिए जारी रहता है। संपत्ति और परिवार का नाम या जाति मातृमामास्थानक रेखा के माध्यम से विरासत में मिलती है। इस प्रकार में महिलाओं का दबदबा है और उनका दर्जा ऊंचा है। उदाहरण: केरल के नायर।

c) वंशीय परिवार- वंश को माता और पिता दोनों के माध्यम से पहचान या निर्धारित किया जाता है। उदाहरण: नेलज वंशीय परिवार।

2.3.6.4 रूप संबंधों की प्रकृति के आधार पर

परिवार को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:

a) दापितक परिवार- इस प्रकार के परिवार में विविध लिंगों के दो वयस्क व्यक्ति विवाह से पितृ दूसरे से संबंधित होते हैं, एक विवशम जोड़ी, जिनके बचे हो सकते हैं/ नहीं हो सकते हैं। उदाहरण: संयुक्त राज्य अमेरिका का नामिक परिवार।

b) समर परिवार- इस प्रकार में पति और पत्नी दूसरे से रूप संबंधित होते हैं, वे या तो ज्योतिष- चचेरे भाई या समानांतर चचेरे भाई होते हैं। पति और पत्नी का संबंध रूप से होता है। उदाहरण: आंध्र प्रदेश के मुसलम या रेड्डी के कुछ समूह या केरल के कुछ गैर-क्षात्रिय गैरप्रेमण के बीच।
2.3.6.5 सत्ता के आधार पर

इस आधार पर परिवार को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:

a) धीमुखस्तात्त्विक परिवार- इसमें सारी शक्ति पिता पृथ्वी यानी पिता के हाथों में है। सत्ता का हक परिवार के सबसे बड़े पृथ्वी सदस्य को दिया जाता है जो परिवार के अन्य सदस्यों पर पूर्ण शक्ति / अधिकार रखता है। यह मुख्य निर्णय लेने वाला होता है। उनकी मृत्यु के बाद, परिवार के सबसे बड़े बेटे को शक्ति प्रदान की जाती है। यह प्रकार भारत में हिंदुओं के संयुक्त परिवारों में सबसे अधिक पाया जाता है।

b) मातृस्तात्त्विक परिवार- इसमें शक्ति / अधिकार परिवार की सबसे बड़ी महिला सदस्य के हाथ में होता है। नारी को उच्च स्थिति और स्वतंत्रता प्राप्त होती है। वह सारी संपत्ति की मालिक है। वंश का माता रेखा के माध्यम से जाना जाता है। वह मुख्य निर्णय निर्माण होती है। शक्ति / अधिकार पत्नी या बड़ी बेटी को सौंप दिया जाता है। यह किस्म मुख्य रूप से खासी, जैनियां, मेयालय के गारो जनजातियों और केरल के नयारों में पाई जाती है।

c) समतावादी परिवार- इस प्रकार में की शक्ति / अधिकार समान रूप से पति / पत्नी के बीच साझा / वितरत किए जाते हैं। ये दोनों संयुक्त निर्णय लेते हैं और एक दूसरे की जिम्मेदारियों को साझा करते हैं। बेटे और बेटी दोनों को समान अनुपात में विभाजित / संपत्ति मिलती है।

2.3.6.6 आकार, संरचना और संरचना के आधार पर

परिवार दो प्रकारों में विभाजित हैं:

क) एकाँकी/नामिक परिवार- यह प्रकार दुनिया भर में पाया जाने वाला सबसे प्रामुख्य और आदर्श रूप है। नामिक परिवार में एक पति, पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे होते हैं। इससे परिवार की एक व्युनियादी इकाई का गठन होता है, परिवार का आकार छोटा होता है। यह एक स्वतंत्र स्वाभाविक इकाई है। इस प्रामुख्य परिवार के रूप में भी जाना जाता है।

ग) संयुक्त परिवार- इस परिवार का आकार बड़ा है जो एक नामिक परिवार से पहले है। दो से अधिक नामिक परिवार हो सकते हैं। यह प्रकार आमतौर पर हिंदू संयुक्त परिवार के बीच पाया जाता है। इस परिवार में पिता, माता, उनके बेटे और उनकी पत्नियां, अविवाहित बेटियाँ, पोते, बाबा, चाचा, चाची, उनके बच्चे, पिता के समानांतर चचेरों भाई और उनके बच्चे शामिल हैं। पहले संयुक्त परिवार एक प्रकार के व्यवसाय में लगे हुए थे और अगली पीढ़ी उस व्यवसाय का अनुसरण करती थी। लेकिन अब वैज्ञानिक, आधुनिकिकण और पश्चिमीकरण के साथ प्रत्येक परिवार के सदस्य अलग नौकरी में लगे हुए हैं। संयुक्त परिवार में ज्यादातर तीन से चार पीढ़ियों के सदस्य शामिल होते हैं। यह माता-पिता-बच्चे के संबंध का विस्तार करता है।
2.3.7 पारिवारिक रूपों में बदलाव

नामिक और संयुक्त परिवार के अलावा परिवार के कई और रूप हैं। ये विविधताएं भारत में विशेष रूप से देखी जाती हैं। निम्नलिखित विभिन्न पारिवारिक रूप हैं:

a) नामिक परिवार- जिसमें अविवाहित बच्चों के साथ या बिना अविवाहित जोड़े, पति और पत्नी शामिल हैं। नामिक परिवार (Nuclear Family) शब्द का प्रयोग पहली बार जी.पी. मर्डॉक, अमेरिकी मानवविज्ञानी, अपनी पुस्तक 'सोशल स्ट्रक्चर' में किया था। उन्होंने परिवार का अध्ययन करने के लिए शाखीय दृष्टिकोण दिया।

b) संयुक्त परिवार- नामिक परिवार की एक और भिन्नता जो तब पाई जाती है जब नामिक परिवार क्षैतिज रूप से फैलता है यानी बहुविवाहित के कारण। उदाहरण:- एक परिवार जिसमें पति और पत्नी अपने बच्चों के साथ होते हैं, पति दो और पत्नियाँ लाता है और उनके साथ बच्चे हो सकते हैं; बहुपत्नी परिवार।

c) विस्तारित परिवार- जिसमें नामिक परिवार की तुलना में व्यापक समूह शामिल हैं। सदस्य विवाह, रक्त और यहां तक कि गोद लेने के माध्यम से एक दूसरे से संबंधित हैं। विस्तारित परिवार में दोनों प्रकार के वंश संबंधी और संपादित संबंधी (पूर्वज एक लेकिन वंश अलग) प्रकार के सदस्य हैं, जिसका अर्थ है पिता, पुत्र, माता-पिता, अपने बेटे की पत्नी के साथ रहता है उदाहरण:- भारत में पश्चिमी राज्य के कई संयुक्त परिवार विस्तारित परिवार से मिलते जुलते हैं, जैसे पंजाबी परिवार में वंश और संपादित दोनों सदस्य हैं।

d) संयुक्त परिवार- आमतौर पर भारत, चीन, जापान में पाए जाते हैं। ये देश कृषि मंत्रालयों से अधिक जुड़े हुए हैं। संयुक्त परिवार में पिता, उनके विवाहित पुत्र होते हैं, सभी अपनी पत्नियाँ और अविवाहित बच्चों के साथ रहते हैं। उदाहरण:- भारत के उत्तर क्षेत्र में पाया जाता है।

e) स्टेम परिवार- इस प्रकार का परिवार आदर्श संयुक्त परिवार के साथ आता है जो विचित्र या विचित्रित हो जाता है, इसके कुछ सदस्य बाहर चले जाते हैं। स्टेम परिवार वे परिवार हैं जो कभी संयुक्त परिवार का हिस्सा थे। उदाहरण:- मेयालय में खासी जनजाति, मातृसंबंधी समुदाय जहां सबसे छोटी बेटी पति लाती है, उसे संपत्ति, जमीन में सब कुछ मिलता है और अविवाहित बच्चों के साथ रहती है। यहां बड़ी बहनें को बाहर जाना पड़ता है और एक नया गृहस्थ पति और बच्चों को स्थापित करना पड़ता है। ये स्टेम परिवार हैं जो एक समय में संयुक्त परिवार का हिस्सा थे।

f) अनुपूरक नामिक परिवार- यह वास्तव में एक नामिक परिवार या एक से अधिक अविवाहित / विवाह / अलग-अलग परिवार है। उदाहरण:- पति, पत्नी, उनके अविवाहित बच्चे और पति की अविवाहित बहन उनके साथ रहते हैं।
g) उप-नामिक परिवार- यह परिवार एक पूर्व नामिक परिवार का एक टुकड़ा है जिसमें एक
विवधान, और उसके अविविधित बचने होते हैं।

h) अनुपूरक उप-नामिक परिवार- रिसेप्टिवों का एक समूह जो पूर्व में पूर्व नामिक परिवार के
सदस्य हैं और कुछ अन्य अविविधित/अलग/ विवधान हैं जो नामिक परिवार के सदस्य नहीं थे।
उदाहरण:- एक परिवार जिसमें पति, पत्नी, उनके बच्चे रहते थे और फिर पति की मृत्यु हो जाती है,
पत्नी की सास उससे जुड़ जाती है।

i) एकल व्यक्ति गृहधरी- ऐसा गृह जिसमें केवल एक ही सदस्य हो।

j) संपादिक नामिक परिवार- इस प्रकार के दो या दो से अधिक विविधित जोड़ों में जिनके बीच
एक भाई-बहन का बंधन होता है और जो भाई-बहन के रिते और उनके अविविधित बच्चों में भाई-
बहन का रिता हो सकता है।

k) पूरक संपादिक नामिक परिवार- इस परिवार में संपादिक नामिक परिवार और अविविधित /
विवधान / तलाकशुदा रिसेप्टिव शामिल होते हैं।

l) रेखीय नामिक परिवार- जोड़े जिनके बीच में रेखीय सम्बन्ध (वर्टिकल) होता है। रेखीय सम्बन्ध
आमतौर पर माता-पिता और विविधित पुत्रों के बीच होता है। उदाहरण:- रिता, माता अपने
विविधित पुत्रों और पत्नियों के साथ रहते हैं।

m) अनुपूरक रेखीय नामिक परिवार- रेखीय नामिक परिवार के साथ-साथ अविविधित /
तलाकशुदा / विवधान जो रेखीय संबंध नहीं रखते थे। उदाहरण:- पिता, माता, उनके
विविधित पुत्र और पत्नी और पत्नी के अविविधित भाई उनके साथ रहते हैं।

n) रेखीय संपादिक नामिक परिवार- तीन या अधिक जोड़े रेखीय (पिता-विविधित बेटे) और
सम्बंधी (उनकी पत्नियों के साथ विविधित भाई) साथ में रहते हैं। उदाहरण:- माता-पिता के साथ दो
या अधिक विविधित बेटे (या विविधित भाई) और उनकी पत्नियां और उनके अविविधित बच्चों।

o) पूरक संश्लील संपादिक नामिक परिवार- इस प्रकार में, संश्लील संपादिक नामिक परिवार के
साथ अविविधित/तलाकशुदा/पृथक/विवधान रिसेप्टिव जो परिवार से संबंधित नहीं हैं रहते हैं।
उदाहरण:- माता-पिता दो या अधिक विविधित भाइयों और उनके अविविधित बच्चों के साथ-साथ
पत्नी के बच्चे की बनन या अविविधित भतीजे/भतीजी।

p) अन्य प्रकार- इस प्रकार में वे परिवार शामिल हैं जिन्हें एक शब्द के तहत वर्गीकृत नहीं किया जा
सकता है, परिवार के इस रूप में, विवधान भतीजे के साथ रहती है। उदाहरण:- विवधान बच्चे के
बेटे के परिवार के साथ रहती है।
2.3.8 परिवार की उत्पत्ति के सिद्दांत

परिवार एक सामाजिक संस्था है जिसे आदित्व समाजों की बहुत शुरुआती रूप में जाना जाता है। इसका अर्थ है कि परिवार सदा से था क्योंकि इसका स्वरूप अलग था। MacIver के अनुसार, “इतिहास में ऐसा कोई चरण नहीं था जिसमें परिवार जैसी सामाजिक संस्था अनुपस्थित थी।”

परिवार की उत्पत्ति के बारे में विवाद है लेकिन परिवार की उत्पत्ति के बारे में उद्धरण के कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांत निम्नलिखित हैं।
1. यौन साम्यवाद का सिद्धांत
2. पितृस्तुतत्त्वक सिद्धांत
3. मातृस्तुतत्त्वक सिद्धांत
4. एकविवाही (मोनोगैमी) का सिद्धांत
5. उद्धरणकालीन सिद्धांत
6. बहुकारक सिद्धांत

2.3.8.1 यौन साम्यवाद का सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार, “प्राचीन समाजों में स्थायी यौन विनियमन पर कोई नियंत्रण नहीं था। कोई भी पुष्चि वा महिला अन्य पुष्चि या महिला के साथ यौन संबंध स्थापित कर सकती / सकता था और यौन संबंध पर कोई प्रतिबंध नहीं था। एक महिला को आतिथ्य के संकेत के रूप में मेहमानों के लिए प्रस्तुत किया जाता था। मुक्त पुष्चि और महिला के बीच के इस तरह के मुम्ब पुष्चि संबंध के चरण को यौन साम्यवाद कहा जाता है। इस प्रकार का परिवार मनुष्य की भावना या उसकी ईर्ष्या का उत्पाद था। जब अपनी पत्नियों की जहरत महसूस हुई, तब परिवारिक जीवन शुरू हुआ था।

2.3.8.2 पितृस्तुतत्त्वक परिवार का सिद्धांत

यह सिद्धांत प्लेटो और अस्टू द्वारा दिया गया था और सर हेनरी मेन द्वारा विस्तृत किया गया था। इस सिद्धांत के अनुसार पुष्चि का बच्चा और पत्नी पर प्रस्तुत अधिकार माना जाता था। रोम में आदमी को अपनी पत्नी और बेटों को मारने का अधिकार दिया गया था। तो, उस आदमी को परिवार का मुख्य कहा जाता था। इस सिद्धांत के अनुसार पहले परिवार की उत्पत्ति हुई जो पितृस्तुतत्त्वक था। यह सिद्धांत दोषपूर्ण है क्योंकि अधिकांश अन्य प्राचीन समाजों में मां को अधिकार और नियंत्रण की शक्ति थी।
2.3.8.3 मातृसतात्मक परवार का सिद्धांत

कुछ लोग परवार की उपत्यि के मातृसतात्मक सिद्धांत का प्रतिनिधित्व करते हैं ब्रिजेडोटिस के अनुसार प्राचीन समाजों में लोगों को पितृत्व के साथ बच्चे के संबंध के बारे में पता नहीं था। प्राचीन समाजों के लोग स्वतंत्र व्यवहार करते हैं एक दूसरे के साथ संभोग करते हैं, जो यह नहीं जानते थे कि पिता कौन है। निक्षिपत रूप से माँ को बच्चे के जन्म देने और उसके पालन-पोषण के लिए जाना जाता था। इस सिद्धांत से ऐसा लगता है कि परवार की उपत्यि मातृसतात्मक थी, बाद में पिता के महत्व पर सम्बन्ध की प्रगति और कृष्ण के विकास के साथ वृद्धि हुई थी।

2.3.8.4 उद्विकासवादी सिद्धांत

अमेरिकी समाजशास्त्री मॉर्गन ने परवार की उपत्यि के उद्विकासवादी सिद्धांत को सामने रखा है। उनके अनुसार उद्विकासवाद का यह सिद्धांत निम्न चरणों से गुजरा है।
1) समर परवार: इस प्रकार के परवार में, रूट संबंधियों के बीच विवाह की मनाही नहीं थी।
2) समूह परवार: इस प्रकार के परवार में, एक परवार के भाई दूसरे परवार की बहनों के साथ विवाह कर सकते हैं, लेकिन इस तरह के यौन पर धार्मिक नहीं था। यौन संबंधों के नियम निर्धारित नहीं थे।
3) सिण्डेमियन परवार: इस अवस्था में एक पुरुष एक समय में एक महिला के साथ शादी कर सकता है लेकिन परवार में विवाहित महिला के यौन संबंधों को परिभाषित नहीं किया गया था।
4) पितृसतात्मक परवार: इस प्रकार के परवार में पुरुष की श्रेष्ठता थी, और वह एक समय में कई महिलाओं के साथ यौन संबंध रखता था।
5) एक-विवाही परवार: यह परवार प्रणाली का वर्तमान चरण है। इस प्रकार में एक पुरुष एक समय में एक महिला के साथ विवाह कर सकता है।

2.3.8.5 एकविवाही (मोनोगैमी) का सिद्धांत

यह सिद्धांत वेस्टनमार्क ने प्रस्तुत किया था जो उनकी पुस्तक "हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन मैरिज" में है। यह डावर्न, जुकर्मैन और मालिएव्स्की द्वारा समर्थित था। डावर्न के अनुसार परवार एक पुरुष की आवश्यकता और एक महिला के मालिक होने की इच्छा से उत्पन्न हुआ। यह सिद्धांत व्यक्ति की स्वामित्व और ईश्वर की भावना पर आधारित है। मैन पॉवर और अधिकार के कारण, वह एक महिला को अपने पास रखना चाहता था और उसके साथ यौन संबंध बनाता था। बाद में इस प्रथा को आमतौर पर समाज द्वारा स्वीकार कर लिया गया।
2.3.8.6 बहुकारक सिद्धांत
कई सामाजिकशास्त्री/मानवविज्ञानियों का मानना है कि राज्य लिंटन के अनुसार परिवार के विकास के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं, “समाज ने अपने उद्धीक्रम के एक ही रेखा का पालन नहीं किया है अनुत्तर यह उद्धीक्रम बहुरूपीय रहा है। ऐसे बहुत से कारक हैं जो इसके उद्धीक्रम को प्रभावित करते हैं।” इस तरह से यह सिद्धांत आधुनिक सामाजिकशास्त्री/मानवविज्ञानियों के लिए स्वीकार्य है।

MacIver के अनुसार, परिवार के मूल में कारक निम्नानुसार हैं।

1. यौन संबंध: यह परिवार की उपलब्धि का मूल कारक है। परिवार के सदस्यों की संपुष्टि के लिए यौन आवश्यक है। यह प्रजनन के लिए आवश्यक है।

2. प्रजनन: परिवार का मुख्य वकार बच्चों के प्रजनन और उनके पालन-पोषण करना है। यह पुष्प और महिलाओं के बीच बच्चे पैदा करने की इच्छा है।

3. आर्थिक संगठन: बुनियादी जनता की पूर्णता में परिवार महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पुष्प पत्नी और परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं के लिए अर्थव्यवस्था का सोता है।

परिवार के अनुसार, परिवार के मूल कारक निम्नानुसार है।

1. यौन संबंध: यह परिवार की उपलब्धि का मूल कारक है। परिवार के सदस्यों की संपुष्टि के लिए यौन आवश्यक है। यह प्रजनन के लिए आवश्यक है।

2. प्रजनन: परिवार का मुख्य वकार बच्चों के प्रजनन और उनके पालन-पोषण करना है। यह पुष्प और महिलाओं के बीच बच्चे पैदा करने की इच्छा है।

3. आर्थिक संगठन: बुनियादी जनता की पूर्णता में परिवार महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पुष्प पत्नी और परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं के लिए अर्थव्यवस्था का सोता है।

चर्चा से हम यह निश्चय करते हैं कि, परिवार के उद्धीक्रम और उत्पत्ति का कोई विशिष्ट सिद्धांत नहीं है, लेकिन कई लोग ने मूल के बारे में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। अगर अगर हम देखें, तो बहु-कारक सिद्धांत सभी सामाजिकशास्त्रीयों द्वारा स्वीकार किया जाता है।

2.3.9 सारांश (Summary)
परिवार पर उपरोक्त चर्चा से हम संक्षेप में बता सकते हैं कि परिवार दो ऐसे लोगों को साथ लाने का एक तरीका है जो समाज द्वारा प्रस्तावित कार्यों को जारी रखने के लिए एक-दूसरे के साथ रहते हैं। सामाजिक संरचना के रूप में परिवार कब और कैसे आया, यह स्तवल अभी भी बहस का विषय बना हुआ है। अन्य संस्थाओं की तरह परिवार भी कई बदलावों से गुजरे हैं और हम पारंपरिक समाजों में परिवार प्रणाली में बहुत भिन्नताएं देखते हैं। लेकिन वर्तमान समय में बहुपति, बहुपत्री और संयुक्त परिवार व्यवस्था बाले अधिकांश पारंपरिक समाज नाभिक परिवारों में बदल रहे हैं। इस इकाई के अध्ययन उपरांत हमने ये समझा कि परिवार सार्वभौमिक प्राथमिक समूह है हालाँकि इसकी कोई सार्वभौमिक परिभाषा नहीं है। परिवार का कोई विकल्प नहीं है। यह एक अद्वितीय सामाजिक संस्था है और इसके सामाजिक संगठन हैं। परिवार के बिना कोई भी समाज या सम्पत्ति मौजूद नहीं है। समाज एक सार है जो परिवार की नींव को दर्शाता है। दोनों, जैविक और सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों ने इस सार्वभौमिक समूह के गठन का कार्य किया है। परिवार और घरेलू समूहों के बीच अंतर करना मुख्त है, क्योंकि दोनों की इकाईयाँ अर्थात आर्थिक इकाई, उपभोग इकाई, मनोवैज्ञानिक इकाई और सामाजिक-सांस्कृतिक इकाई एक समान है।
2.3.10 विषय प्रश्न
बहुविकल्पीय प्रश्न

1. गैर-प्रातृवादी बहुपति परिवार पाया जाता है- (क)मिश्री, (ख) कोच्चिक, (ग) केरल के नर्मंड, (घ) नागा में।
2. पितृ-सत्तात्मक परिवार का सिद्धांत दिया- (क)हेनरी मेन, (ख) स्ट्रीफाल्ट, (ग) मार्गन, (घ) मार्डक।
3. नारिंद्र परिवार का सार्वप्रथम उल्लेख किसने किया- (क)टायलर, (ख) मार्गन, (ग) मार्डक, (घ) हर्षकोविट।
4. परिवार की उत्पत्ति के संबंध में उद्देश्यकारवादी सिद्धांत दिया- (क)हेनरी मेन, (ख) स्ट्रीफाल्ट, (ग) मार्गन, (घ) मार्डक।
5. परिवार के उद्देश्य में सिद्देदियन परिवार का उल्लेख किसने किया है- (क)टायलर, (ख) मार्गन, (ग) मार्डक, (घ) हर्षकोविट।

उत्तर- 1. केरल के नर्मंड, 2. हेनरी मेन, 3. मार्डक, 4. मार्गन, 5. मार्गन।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

11. 'परिवार एक पार-सांस्कृतिक अवधारणा की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
12. परिवार के प्रकारों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
13. परिवार के उत्पत्ति के यौन साम्यवाद एवं पितृ-सत्तात्मक सिद्धांत की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
14. परिवार के मातृसत्तात्मक एवं एकत्रित सिद्धांत का स्पष्ट कीजिए।
15. परिवार आकार, एवं संरचना के आधार पर परिवार की व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. परिवार को परिभाषित कीजिए।
2. परिवार के वर्तमान को स्पष्ट कीजिए।
3. समकालीन समाज में परिवार के बदलते आयामों पर चर्चा कीजिए।
4. परिवार के अध्ययन के मनोवैज्ञानिक उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।
5. विवाह के आधार पर परिवार के प्रकार को स्पष्ट कीजिए।

Page 110
2.3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

इकाई 4 नातेदारी: परिभाषा एवं प्रकार
(Kinship: Definition and Types)

इकाई की रूपरेखा
2.4.0 उद्देश्य
2.4.1 प्रस्तावना (Introduction)
2.4.2 नातेदारी अध्ययन का इतिहास (History of Kinship Study)
2.4.3 नातेदारी: अर्थ और परिभाषा (Kinship: Meaning and Definition)
2.4.4 नातेदारी शब्दावली (Kinship Terminology)
2.4.5 नातेदारी दृष्टिकोण (Kinship Approaches)
  2.4.5.1 नातेदारी भूमिका की संरचना (Structure of Kinship Roles)
2.4.6 नातेदारी संबंध दशनि हेतु मानवशास्त्रीय चिन्ह (Anthropological Symbols for Kinship)
2.4.7 नातेदारी का उपयोग (Kinship Usages)
2.4.8 वंशानुमार के नियम (Rules of Descent)
2.4.9 मानवविज्ञान में नातेदारी अध्ययन की अद्वितीयता (Uniqueness Of Kinship In Anthropology)
2.4.10 सारांश (Summary)
2.4.11 बोध प्रश्न
2.4.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.4.0 उद्देश्य
इस इकाई के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी निम्नलिखित में सक्षम होंगे-

- आप नातेदारी प्रणाली का इतिहास और संरचना को समझने में सक्षम होंगे।
- आप नातेदारी की प्रकृति और समाज के वंशावली के आधार को सीखेंगे।
- आप नातेदारी, नातेदारी शब्दावली, नातेदारी के विभिन्न उपयोग, वंश के नियम, आदि के बारे में जानेंगे।

इस इकाई का प्राथमिक उद्देश्य विद्वानों को नातेदारी, उसकी उपस्थिति के इतिहास और विषय के बारे में एक बुद्धिमान समझ देना है। अलग-अलग नातेदारी दृष्टिकोणों के बारे में एक वृद्धि अथवा प्रदान करने का भी प्रयास इस इकाई में किया गया है।
2.4.1 प्रस्तावना

वास्तव में शब्द "नातेदारी" का इस्तेमाल कई अर्थों में किया जाता है। स्थिति इतनी जटिल है कि इसका अध्ययन करने के लिए इसे सरल बनाना आवश्यक है। "नातेदारी संबंध" में कई संदर्भ हैं, जिन्हें विश्वेषणात्मक रूप से अलग रखा जाना चाहिए, जैसे जैविक संबंध, व्यवहारिक संबंध और भाषाई संबंध हैं। शब्दकोश के अनुसार नातेदारी को रक्त द्वारा या विवाह द्वारा स्थापित रिश्तों के संबंध कहा जाता है। सभी संस्कृतियों विभिन्न श्रेणियों के परिणामों में भेद करती हैं, ये श्रेणियां अपने अधिकांश और दायित्वों के संबंध स्वरुप के साथ बनती हैं, जिसे सामाजिक मानवविज्ञानी नातेदारी प्रणाली कहते हैं। कुछ समाजों में प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के रक्तसंबंधी या विवाह संबंधी होते हैं तथा उनका अधिक जीवन इन्हीं लोगों के इर्द-गिर्द ही पूरा होता है, जबकि सभी अधिकांश समाजों में एक व्यक्ति के रक्तसंबंधी या विवाह संबंधी कुछ व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उपयोग किए जाते हैं। जैविक रूप से न केवल मनुष्य बल्कि सभी जानवरों के पास "नातेदारी" है। लेकिन महत्त्वपूर्ण बिना यह है कि अन्य जानवरों के विपरीत, मानव सामाजिक संबंधों को परिभाषित करने के लिए जानबूझकर और स्पष्ट रूप से नातेदारी की श्रेणियों का उपयोग करता है।

2.4.2. नातेदारी अध्ययन का इतिहास

नातेदारी प्रणालियों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल एक शताब्दी पुराना है, लेकिन उस संख्यात्मक अवधि में इसने मानव समाज के अधिकांश पहलुओं की तुलना में सैद्धांतिक रूप से क्षणिक प्रदान की है। प्रारंभिक अध्ययनों के अधिकांशतः नातेदारी शब्दकोश प्रणालियों पर ध्यान केंद्रित किया और समाज आधारित संक्रामण और सामूहिक विवाह के पहले के चरणों के अनुसार सामाजिक संबंध के रूप में उपयोग किया। मानवविज्ञानी लूईस हेनरी मॉगन नातेदारी प्रणाली पर यान किया और समाज संरचना के पहले के चरण के साथ के प्रमाणों का उपयोग किया। यह मानवविज्ञानी का उद्देश्य नातेदारी प्रणाली के वैज्ञानिक अध्ययन को सामाजिक पहलुओं की तुलना में दिखावा करना था। उन्होंने उत्तरी पूर्वी संस्कृत राज्य अमेरिका में एक बहुत अमेरिकी समुद्री Iroquois को देखा। वह ज्यादातर समाजों को एक साथ रखने में सक्षम रहते थे और उनकी पुस्तक में विभिन्न प्रकार के नातेदारी प्रणालियों का वर्णन करने वाले पहले व्यक्ति थे, उनकी पुस्तक का नाम 'सिस्टेम ऑफ़ नातेदारी एएण्ड एफिनिटी ऑफ़ द ह्यूमन कैमिली' है। अंग्रेजी विधान रेडक्लिफ ब्राउन ने तुलनात्मक पहले को शामिल करने नए तृष्णकोण से नातेदारी का अध्ययन किया। इतालवी अल्चिक, ने नूर के अपने अध्ययन के माध्यम से राजनीतिक संगठन में इसके महत्त्व को बताया। यहाँ के ताइलिस्मी के बीच "नातेदारी का गतिशीलता " के माध्यम से फोरेस्ट ने बंध समूहों पर चर्चा की। जी.पी. मूर्डक की "सामाजिक संरचना" और लेवी-स्ट्रॉस की "नातेदारी का प्राथमिक संरचना" नातेदारी साहित्य में अन्य उल्लेख कृतियां हैं।
2.4.3. नातेदारी: अर्थ और परिभाषा

नातेदारी एक सिद्धांत को संदर्भित करता है जिसके द्वारा व्यक्ति या व्यक्तियों के समूहों को नातेदारी शब्दावली के माध्यम से सामाजिक समूहों, भूमिकाओं, अंतरराष्ट्रीय और वंशावली में व्यक्तित्व किया जाता है। नातेदारी प्रथा को जोड़ने का तरीका है। किसी भी समाज में, प्रत्येक सामाजिक व्यक्ति अलग-अलग नामित परिवारों से संबंधित होता है। जिस परिवार में उसके पिता और उसका पालन-पोषण हुआ, उसे वार्ता ने "जन्म-मूलक परिवार" कहा तथा दूसरा परिवार जिसमें वह विवाह के माध्यम से संबंधित करता है, उसे "प्रजनन-मूलक परिवार" कहते हैं। दो नामित परिवारों में व्यक्तिगत सदस्यता का सार्वभौमिक तथा नातेदारी प्रणाली को जन्म देता है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि यह अलग-अलग परिवारों के प्रणाली का एक प्रणाली है जहां व्यक्ति जितने अंत: पाते और शाखाओं द्वारा एक साथ बंधे होते हैं।

क्लाउड लेवी-स्ट्रॉस के अनुसार, "नातेदारी और उससे संबंधित धारणाएं एक ही समय जैविक और सामाजिक संबंधों को (जिनमें दो वर्गों में हम नातेदारी को सीमित करते हैं) बाहरी और भितरी रूप से प्रदर्शित करते हैं।" आपके अनुसार, सदस्यों को नातेदारी प्रणाली में नातेदारी समूह में सदस्यता जानता है, जैसे कि महिला बच्चे और बुजुर्ग के रूप में देखा जा सकता है, पुरुष को पति या दामाद के रूप में देखा जाता है।

एल.एच. मॉगन नातेदारी को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि, "नातेदारी, विवाह के रूपों और परिवार की बनावट में परिलक्षित होती है। मॉगन ने उसे Gens (Clans) कहा।

रेडक्लिफ-फ्राउन (1952) इस बात पर सहमत हुए कि "नातेदारी शब्द अंतर्वेयक का वाक्य के ब्रम्हशास्त्र की तरह है, जिनमें पारस्परिक अधिकार, कर्तव्य, विशेषधिकार और विशेष निहितार्थ है। आपने नातेदारी प्रणाली के अध्ययन को अधिकारों और दायित्वों के क्षेत्र के रूप में नामित किया और इसे सामाजिक संरचना के एक हिस्से के रूप में देखा।

मैकलेनन इस बात से सहमत थे कि नातेदारी रातों के केवल समाधान के रूप है और वास्तविक रूप से बिल्कुल संबंधित नहीं है।

बीटी (Beattie) के अनुसार, "नातेदारी वंशावली संबंधों का समुच्चय ना होकर सामाजिक संबंधों का समुच्चय है।" उनके अनुसार सामाजिक संबंध की पहचान और व्यक्तित्व नातेदारी प्रणाली का आधार है और लोगों के बीच अंतर भी प्रदान करता है।

इवांस-प्रिचार्ड के दक्षिण सुदान (1951) के नुयर के अध्ययन ने पुरुष वंश समूहों पर आधारित नातेदारी समूहों पर ध्यान केंद्रित किया। मेयर फोर्टस की तरह, उन्होंने मुख्य रूप से नातेदारी प्रणाली में व्यक्तियों और समूहों के बीच पारस्परिक संबंधों पर जोर दिया। अंततः सुजनव देता है कि वे समूह को समग्र रूप से देखने चाहिए जो यह पता लगाने में मदद करता है कि यह कैसे काम करता है।

रॉबिन फॉक्स (1967) लिखते हैं, "नातेदारी का अध्ययन वह (मनुष्य) क्षेत्र करता है और क्यों करता है तथा एक की बजाए दूसरे विकल्प को अपनाने के परिणामों का अध्ययन है।" फॉक्स आगे कहते हैं,
"नातेदारी का अध्ययन इस बात का अध्ययन है कि आदमी जीवन के इन बुनियादी तथ्यों जैसे कि संबोध, गर्भधारण, पितृत्व, समाजीकरण, भाई-बहन, आदि के साथ कार्य करता है।"

नातेदारी के बारे में फॉक्स द्वारा स्पष्ट स्वरूप चार बुनियादी तथ्यां सिद्धांत इस प्रकार हैं:
1. महिलाएं ही बचे को जम दे सकती हैं।
2. पुरुष महिलाओं का गर्भधारण करते हैं।
3. पुरुष आत्मतौर पर नियंत्रण करते हैं।
4. प्राथमिक परिवर्तन एक दूसरे के साथ संबंध नहीं करते हैं अथात अनाचार वर्जित है।

फॉक्स के अनुसार, नातेदारी को, 'किन्न', अर्थात् वास्तविक या काल्पनिक आधार से संबंधित व्यक्तियों के बीच संबंध के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। वास्तविक समर्थन को परिभाषित करने में कठिनाई उत्पन्न होती है। इसे समाज के अनुसार वास्तविक या कथित रूप संबंध में संबंधित व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। लेकिन, अनुवांशिक रूप से, यह ऐसा प्रतीत नहीं होता है।

ऐसे कई मामलों हैं जहां इस परिभाषा को नकारा जा सकता है। उदाहरण के लिए, गोद लेने के मामलों में, एक बचे को समरक बाल जा सकता है। एक महिला शादी के बाद विवाह-सम्बन्ध से अपने बचे के जन्म लेते समरक संबंध में बंध जाती है। इस प्रकार, नातेदारी श्रेणियों, आर्थिक श्रेणियों की तुलना में अधिक सामाजिक हैं। सामाजिक व्यवस्था कई अलग-अलग तरीकों से होती है। इस समाजिक रिश्तों के पक्ष में लागू किया जा सकता है अर्थात् उनके सामाजिक व्यवहार और अपेक्षाओं, विश्वासों और मूल्यों के विशेष स्तर है। साथ ही, यह आर्थिक सहयोग, चर्चा सहयोग, अनुभव या आर्थिक पृष्ठ के अधिकार और विवाह के आधार पर व्यक्त किया जा सकता है।

भारतीय गांव में नातेदारी जाति, उप-जातियों, कबीलों और यहां तक कि वंशावली के पत्राचार में 'पुत्र' (Faction) शब्द से मिलती-जुलती है। यह उत्तराधिकार, संपत्ति का उत्तराधिकार, द्विभाजन, उनकी तकनीकी और औद्योगिक नियुक्तियों के स्तर पर विकास होता है।

इसलिए, किसी भी समाज की नातेदारी प्रणाली को समझने के लिए, हमें लोगों की भाषा, व्यवहार और मूल्यों को हांगिंग चाहिए। मालिनोव्स्की (1954) के अनुसार, नातेदारी प्रणाली को एक जटिल और विस्तृत रूप में संदर्भित किया जा सकता है; और उन्होंने इसे 'Kinship Algebra' के रूप में संदर्भित किया।

2.4.4 नातेदारी शाब्दिक लि

I. मर्डोक (1949) नातेदारी शाब्दिक लिंग और नातेदारी व्यवहार के बीच के अंतर संबंध का विश्लेषण करते हुए; दो श्रेणियाँ प्रदान करता है

| संबंध की शाब्दिक लि (भाषाई प्रणाली जिसमें दो प्रस्थतियों में से एक को दर्शाती है) |
| सम्प्रभु की शाब्दिक लि (रिश्तेदारों के बीच सांस्कृतिक रूप से संबंध का एक अभिन्न अंग) |
दोनों के बीच अंतर है क्योंकि एकल विशिष्ट शब्दों का उपयोग अलग रिस्टेडरों के लिए अलग है।

उदाहरण के लिए, कुछ समाज में पिता की सभी पत्नियों को 'माँ' कहते हैं। इसके अलावा, 'अंकल' और 'आंटी' हमें उचित संबंध नहीं प्रदान करते हैं।

लुसी मेयर की शब्दावली (1984)

Kinderd: वंशावली रूप से आम दावित्यों वाले लोग किस प्रकार "ईगो" से जुड़ते हैं।

Cognates: किसी व्यक्ति द्वारा रूत से संबंधित लोग।

Affines: विवाह के माध्यम से एक व्यक्ति से संबंधित व्यक्ति।

कोर्पोरेट सकल: निरंतर संपत्ति रखने वाले पारिवारिक सदस्यों का समूह जो पितृवंशीय या मातृवंशीय हो सकता है।

Lineage: कोर्पोरेट समूह वंश द्वारा सदस्य बनाया हुआ।

Lateral: यह वंशावली में नातेदारी की पारंपरिक रेखा को दर्शाता है।

Lineal: यह वंशावली में नातेदारी की 'लाम्बवत' रेखा को दर्शाता है।

2.4.5. नातेदारी दृष्टिकोण

नातेदारी प्रणाली पर एक व्यापक दृष्टिकोण प्राप्त करने के लिए, दो प्रकार के दृष्टिकोणों की आवश्यकता होती है। सबसे पहले, किसी को नातेदारी भूमिकाओं की संरचना को चित्रित करना होगा। दूसरी बात, उसे संरचना का कार्यान्वयन उपयोगिता को जानने के लिए प्रत्येक संरचना और भूमिका से जुड़े व्यवहार का पता लगाना होगा।

2.4.5.1 नातेदारी भूमिका की संरचना

नातेदारी का बंधन लोगों की एक बड़ी श्रृंखला को गले लगाता है जिसके लिए संबंधित व्यक्तियों का एक पूरा समूह एक इकाई के रूप में जुड़ा रहता है। हालांकि यह एक सामाजिक समूह नहीं है, लेकिन समूह के साथ-साथ संस्था के चरित्र को दर्शाता है। नातेदारी भूमिकाओं की संरचना से न केवल रिस्टेडर के प्रकार, बल्कि समाज में विशिष्ट नातेदारी की शाखावली भी पता चलती है। नातेदारी के कारण, परिवारों की मुल्की रूप से दो समूहों में विभाजित किया जाता है। वास्तविक परिवार और कृषिम परिवार, कृषिम परिवार शब्द को परिवारों और सामाजिक परिवारों पर लागू किया जाता है, यानी, जिन रिस्टेडरों को औपचारिक सामाजिक संबंधों के परिणामस्वरूप औपचारिक रूप से स्थापित और गठित किया गया है। दूसरी ओर वास्तविक परिवार रूप से विवाह के माध्यम से बने सूचीबद्ध संबंध है। उनके बीच एक संबंध रखने वाले परिवारों को रूप सर्वाधिक कहा जाता है। लेकिन जिन परिवारों के संबंध विवाह के कारण विकसित होते हैं उन्हें विवाह संबंधी कहा जाता है। उदाहरण के लिए, एक परिवार में पत्न-पत्नी के बीच संबंध, विवाह संबंधी
नातेदारी के तहत आते हैं, जहां माता-पिता और बच्चे के बीच संबंध को रक्षसंबंधी नातेदारी के तहत चिह्नित किया जा सकता है। एक दसक बच्चे को एक जैविक रूप से जन्मी संतान के रूप में माना जाता है। इसलिए इसे रक्षसंबंधी के रूप में भी माना जाता है। नातेदारी आम तौर पर एक ‘ईगो’ से पता लगाया जाता है। ‘ईगो’ से संबंध रखने वाले सभी व्यक्तियों को नातेदारी की स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है। एक पिता अपने बच्चों के लिए एक प्राथमिक संरक्षक के रूप में खड़ा होता है और मां पिता के लिए प्राथमिक संपन्न परिजन होती है। जब कोई व्यक्ति प्राथमिक परिजनों के माध्यम से ‘ईगो’ से संबंधित होता है, तो उसे द्वितीय परिजन कहा जाता है। पिता के पिता, पिता की बहन, माँ की माँ, पत्नी की माँ, भाई की पत्नी, बहन के बेटे आदि, ‘ईगो’ के लिए सबसे बड़े परिजन हैं। माध्यमिक परिजनों को उनकी प्रकृति के आधार पर द्वितीय संगणकीय परिजन और माध्यमिक परिजनों में वर्गीकृत किया जा सकता है। इसी तरह, माध्यमिक परिजनों के प्राथमिक रिस्तेदार ‘ईगो’ के तृतीय परिजन हैं। उदाहरण के लिए, पिता की बहन की पति, पत्नी के भाई का बेटा, बेटी के पति की बहन आदि, तृतीय परिजनों के समूह से संबंधित है। तृतीय नातेदार से अधिक दूरस्थ संबंध दूर के परिजनों के रूप में निर्धारित है। दोनों रक्षसंबंधी और विवाह संबंधित रिस्तेदारों को समीपता के अंश को देखते हुए प्राथमिक परिजनों, माध्यमिक परिजनों, तृतीय परिजनों और दूर के परिजनों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

2.4.6 नातेदारी संबंध दर्शन हेतु मानवशास्त्रीय चिन्ह

नातेदारी के अध्ययन में ‘ईगो’ एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ‘ईगो’ प्रतिवादी है जिसके माध्यम से एक नातेदारी का पता लगाया जाता है। उदाहरण के लिए यह पुष्प या महिला हो सकता है यदि ‘ईगो’ किसी व्यक्ति (A) का बेटा है (B) तो इस मामले में सभी संबंधों को (C) के माध्यम से पता लगाया जाएगा। बेहतर समझ के लिए कृपया नीचे दिए गए चिन्हों को देखें और ‘ईगो’ (C) परिवार वंशावली को भी देखें।
जैसा कि ऊपर चित्र में बताया गया है कि ईगो C है। यह देखा जा सकता है का अगर हम ईगो से शुरू करते हैं तो इस स्थिति में केसे संबंधों का पता लगाया जाएगा। ईगो A का बेटा है और B उसकी मां है जबकि D उसकी मृत बहन है। E, ईगो की तलाकशुदा पत्नी है, और F और D उसके दो पुत्र हैं।

2.4.7 नातेदारी शब्दावली

नातेदारी शब्द सम्बन्धित के शब्द हैं, जो विभिन्न प्रकार के नातेदारों को नामित करने के लिए एक समाज के नातेदारों के बीच उपयोग की जाती हैं। व्यक्तिगत नाम तो होते ही हैं लेकिन सभी समाज नातेदारों के बीच कुछ विशिष्ट नातेदारी शब्द का उपयोग करते हैं, जो बड़े पैमाने पर उपयोग किए जाते हैं। एक मध्यवर्ती रूप व्यक्तिगत नाम और नातेदारी शब्द के बीच भी पाया जाता है। इसे तेज़ोमनी कहा जाता है।

उदाहरण के लिए, एक बेटे या बेटी वाले व्यक्ति को अक्सर "रामू/सीता के पिता (बच्चे का नाम)" या रामू/सीता की माँ (बच्चे का नाम) कहा जाता है। यह पैतृक शब्द और बच्चे के नाम का संयोजन है। व्यक्तिगत नाम या विशेष नातेदारी शब्द का संदर्भ देने के बजाय ऐसे शब्द बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे कभी-कभी सामाजिक पदार्थों को दर्शाते हैं। नातेदारी नामकरण का अध्ययन अभी भी समाज अध्ययन का एक महत्वपूर्ण तरीका है, जो दुनिया के विभिन्न हिस्सों से नातेदारी की शर्तों को पूरा करने के बाद मॉडल्ड द्वारा पहली बार किया गया था। उन्होंने नातेदारी शब्द को 2 प्रमुख प्रभागों में विभाजित किया और उन्हें वर्गीकृत नातेदारी श्रेणियां और वर्णनात्मक नातेदारी श्रेणियां के रूप में नामित किया।

• वर्गीकृत नातेदारी श्रेणियां: शास्त्रीय प्रश्नोत्तरी में सभी नातेदारों को एक सहज तरीके द्वारा बाद लेगें में वर्गीकृत किया गया था। सभी को एक ही पदनाम द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है जैसे पिता के पीढ़ी के सभी पुत्रों को अंकल कहना।

• वर्णनात्मक नातेदारी श्रेणियां: वर्णनात्मक प्रश्नोत्तरी में, प्रत्येक परिसंहार के लिए एक अलग शब्द होता है, जिसमें प्रत्येक ऐसा शब्द में परिसंहार के साथ ईगो के सटीक संबंध का वर्णन किया जाता है जैसे पिता के छोटे भाई को चाचा और बड़े भाई को ताऊ कहना।

हकीकत में, "शास्त्रीय" और "वर्णनात्मक" शब्द शब्दों के संदर्भ करते हैं, जी.पी. मर्दक ने वैश्विक आधार पर शब्दावली की छह प्रमुख प्रश्नोत्तरियों की पहचान की थी। वे इस प्रकार हैं:

1. ओमाहा- समानांतर चचेरे भाई को 'भाई' या 'बहान' कहा जाता है। माँ के भाई के बच्चों को 'माँ' या 'अंकल' कहा जाता है। पिता की बहन के बच्चों को 'भतीजा' या 'भतीजी' कहा जाता है।
2. पिता के भाई के बच्चे या माँ की बहन के बच्चे को ‘भाई’ या ‘बहन’ कहा जाता है। माँ के भाई के बच्चे को ‘बेटा’ या ‘बेटी’ कहा जाता है। पिता की बहन के बच्चों का ‘पिता’ या ‘आंटी’ कहा जाता है।

3. हवाईन- सभी चचेरे भाई या भाई कहलाते हैं।
3. इरोक्युस- पिता के भाई के बच्चे या माँ की बहन के बच्चे को 'भाई' या 'बहन' कहा जाता है। माँ के भाई के या पिता की बहन के बच्चे को 'Cousins' कहा जाता है।

5. एसिक्मो- सभी 'Cousins' को 'Cousins' कहा जाता है चाहे वो बुआ, चाचा, मामा या मौसी के बच्चे हों।

6. सुडानी- मातृ और पैतृक समानांतर 'Cousins' (अर्थात पिता के भाई के बच्चे या माँ की बहन के बच्चे) अलग-अलग शब्दों से बुलाए जाते हैं, इसी प्रकार Cross 'Cousins' (अर्थात माँ के भाई के या पिता की बहन के बच्चे) को अलग-अलग शब्दों से बुलाया जाता है।
* इन चित्रों में सामान रंग और डिजाइन वाले व्यक्तियों के लिए समान नातेदारी शब्द के उपयोग किया जाता है। यह सभी चित्र Ember & Ember (2015) की Cultural Anthropology पुस्तक से लिए गए हैं।

मडॉक ने नातेदारी के अपने विस्तृत विश्लेषण में नातेदारी शब्दावली को समझने के लिए एक विस्तृत योजना प्रस्तुत की है। उनके अनुसार नातेदारी की शाति को तकनीकी रूप से 3 अलग-अलग तरीकों से वर्गीकृत किया गया है:

1) उपयोग के चलन से; नातेदारी के शब्दों का उपयोग के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। कुछ शब्द प्रत्यक्ष संबंधित के लिए हैं और अन्य अप्रौं प्रत्यक्ष संबंध के लिए हैं। एक "संबंधित शब्द" का उपयोग एक रिस्टेदार को पुकारने के लिए किया जाता है, जहां "संबंध के शब्द" का उपयोग किसी तीसरे व्यक्ति के बारे में बोलने के लिए एक रिस्टेदार को नामित करने के लिए किया जाता है।

2) भाषाई संरचना द्वारा; जब भाषाई संरचना के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है, तो नातेदारी शब्द प्राथमिक, व्युपन्न और वर्णनात्मक के रूप में प्रतिविद्यमान होते हैं। एक प्राथमिक शब्द हिन्दी में "पिता" और "भतीजा" जैसे एक अप्रौं सर्वात्मक शब्द है, जिसे नातेदारी अर्थ वाले घटकों में विश्लेषण नहीं किया जा सकता है। इसलिए "प्राथमिक शब्द" कहा जाता है एक व्युपन्न शब्द वह है जो एक विशिष्ट रिस्टेदार को निरुपित करने के लिए दो या अधिक प्राथमिक शब्दों को जोड़ता है। व्युपन्न शब्द दादा, पिता-जैसे, सौतेली बेटी, आदि की तरह है।

3) अनुप्रयोग की सीमा; यह नातेदारी शब्द को दो समूहों में विभाजित किया जाता है- वाधक शब्द और शास्त्रीय शब्द। पीढ़ी, लिंग और वंशावली संबंध द्वारा परिभाषित एकल नातेदारी श्रेणी के रिस्टेदारों के लिए अनुप्रयोग किए गए शब्दों का वाधक शब्द कहते हैं। उदाहरण के लिए हिंदी शब्द, भाई, बहन, बेटी, दादा आदि, एक ही पदनाम के साथ कई व्यक्तियों को दशाते हैं। इसके विपरीत, शास्त्रीय शब्द वह शब्द है जो दो या दो से अधिक नातेदारी श्रेणियों के व्यक्तियों पर लागू होता है। उदाहरण के लिए, अँग्रेजी में Grandmother, माँ की माँ और पिता की माँ दोनों
के लिए है, Uncle माता-पिता में से किसी का भाई हो सकता है या पिता की बहन या माँ की बहन का पति हो सकता है।

2.4.7 नातेदारी का उपयोग

नातेदारी का अध्ययन केवल उनके वर्गावरण या सामान्य व्यवहार के नातेदारी के आधार या रिसेप्टर्स के विवरण के बाद ही सीमित नहीं है। कुछ विशेष नातेदारी उपयोग हैं, जो गैर-साक्ष्य समाजों के संबंध में विशेष महत्व रखते हैं।

• मातुलेय (Avanculate)

यह माँ के भाई और उसकी बहन के बच्चों के बीच पाया जाने वाला एक अनूठा उपयोग है। कुछ मातृसत्तात्मक समाजों में, मामा, पिता के रूप में कई कर्मचारियों को स्वीकार किया जाता है। उसका भतीजा और भतीजी उसके अधिकार में रहते हैं। उन्हें मामा की संपत्ति भी विवाह में मिलती। मेलानेशिया के ट्रोपिक्षन आइलैंड्स, फिजियन, अफ्रीकी जनजाति और दक्षिण भारत के नायर के बीच ऐसा संबंध मौजूद है।

• पितृशवेय (Amitate)

इस तरह का उपयोग कमोडबेश पितृसत्तात्मक लोगों के बीच मिलते हैं। यहाँ, पिता की बहन को बहुत सम्मान और प्रमुख महत्व मिलता है। वह अपने भतीजे के लिए माँ से अधिक है और जीवन की कई घटनाओं में उस पर अपना अधिकार जताती है। वास्तव में, यह एक सामाजिक तंत्र है, जो पिता की बहनों को उपेक्षा में पड़े से बचाता है, काफी उन परिस्थितियों में जब वे अपने समुदाय से बाहर कर दी जाती हैं। पोलिनेशियन टोभा, दक्षिण भारत के टोडा आदि, समुदाय इस प्रकार के नातेदारी उपयोग को प्रदर्शित करते हैं।

• सहसिवता (Couvade)

पति और उनकी पत्नी के बीच नातेदारी का एक और अजीब उपयोग है। भारत के टोडा और खासी समुदाय को उदाहरण के रूप में उद्देश्य किया जा सकता है। जब भी उसकी पत्नी गर्भ धारण करती है, तो पति को उसी प्रकार का जीवन जीना पड़ता है। उसे एक सीमित आहार खाना पड़ता है और पत्नी के साथ कई वर्जनों का पालन करना है। मानवविद्वानी बच्चे पर पितृत्व को स्थापित करने के प्रतीकात्मक प्रतिचित्रण के रूप में इस नातेदारी उपयोग को मानते हैं। कुछ साल पहले तक, यह विशेष उपयोग दक्षिण भारत के नायर, जापान के ऐनस और चीन के कुछ समुदायों के बीच लोकप्रिय था।

• दीर्घाराहार

अधिकांश समाजों में, दीर्घाराहार का निषेध एक अनाचार निषेध के रूप में कार्य करता है। एक सर्व पारंपरिक सामाजिक आदर्श के अनुसार अपनी बहू से बचता है। इस प्रकार का समान संबंध सास-दामाद के
बीच और पति के बड़े भाई और छोटे भाई की पत्नी के बीच रहता है। यह वास्तव में करीबी परिवारों के बीच अनाजार यौन संबंध के खिलाफ एक सुशकात्मक उपाय है जो हर दिन संपर्क में आमने-सामने रहते हैं।

• परिहास

यह "परहार" के निर्माता परिवार के उपयोग का सिर्फ निर्माता प्रकार है। यह विशेष विशेषाधिकार प्राम संबंध विभिन्न प्रकार के चुटकुलों से जोड़े से परिष्कार में लिप्त है, जिसमें मैं अति बयान चुटकुले भी शामिल हैं। आमतौर पर ऐसे रिश्ते एक आदमी और उसकी पत्नी की छोटी बहनों के बीच या एक महिला और उसके पति के छोटे भाइयों के बीच, दादा दादी और पोती/पोतों के बीच मौजूद होते हैं। मज़कूर रिश्ते आदिवासी के साथ-साथ हिंदू समाज में भी पाए जाते हैं। मानवविज्ञानी समाज में परिवार की रूप से अंतर्निहित यौन संबंध के साथ संबंधित करते हैं जब तक परिवार के रूप में दोनों के साथ साथ रहते हैं। ये परिवार न केवल परिवारों को आलग करते हैं बल्कि परिवारों के रूप, नियम के नियमों, बंगा के नियमों और एक सामाजिक प्रणाली की कई अन्य महत्वपूर्ण विशेषताओं को भी इंगित करते हैं।

2.4.8 वंशानुमूड के नियम

लगभग सभी समाजों में परिवार बहुत महत्वपूर्ण हैं। एक व्यक्ति हमेशा अपने परिवारों के प्रति कुछ दायित्वों का पालन करता है और वह अपने परिवारों से भी यही उम्मीद करता है। नियम, जो प्रत्येक व्यक्ति को परिवार के एक विशेष और निशित समुक्ष से संबंध करते हैं, वंशानुमूड के नियम कहलाते हैं। इस तरह के नियम समाज से समाज में भिन्न होते हैं। उद्देश्य, वंशानुमूड के इस नियम से संबंधित है। शब्द "उद्देश्य" अधिकारों के प्रसार को दर्शाता है और शब्द "विरासत" वैदिक संस्कृति पर अधिकार को दर्शाता है। आमतौर पर दोनों अधिकार हाथ से चले जाते हैं। हालाँकि, बंगा के संबंध में पहचान जाने वाले तीन नियम इस प्रकार हैं:

एकवंशीय वंशानुमूड: वह सिद्धांत जिससे बंगा को या तो मातृ या पितृ रेखा के माध्यम से खोजा जाता है।

पितृवंशीय वंशानुमूड: इस प्रकार में, पुरुषों को एक श्रृंखला के माध्यम से पूर्वजों से वंशानुमूड नीचे आते हैं। उदाहरण के लिए- पूर्वज के पुत्र, उसके पुत्र, उसके पुत्र के पुत्र, उसके पुत्र के पुत्र के पुत्र के पुत्र के माध्यम से। पुरुष स्थिति, शक्ति और संस्कृति पर हावी है। पूर्वज और दक्षिण अमेरिका और अमेरिका पूर्व में पाया जाता है।

मातृवंशीय वंशानुमूड: इस प्रकार में, महिलाओं को एक श्रृंखला के माध्यम से पूर्वजों से वंशानुमूड नीचे आते हैं। उदाहरण के लिए- पूर्वज की बेटी के माध्यम से, बेटी की बेटी से, बेटी की बेटी तक। महिला स्थिति, शक्ति और संस्कृति पर हावी है।

डॉ-वंशानुमूड: एक ऐसी प्रणाली जिससे सामाजिक समूहों या श्रेणियों के दो समुक्ष छोटे हैं (विभिन्न उद्देश्यों के लिए) एक ही समाज में, एक पितृसतत्त्व कंपं एक अध्यात्मिक प्रणाल और दूसरा मातृसतत्त्व कंप पर। उदाहरण के लिए- नाइज़रिया के याकों के बीच।
संज्ञानात्मक वंशानुक्रम: वंशानुक्रम की एक श्रृंखला जिसमें पुरुष या महिला पूर्वज या दोनों में से किसी से भी संयोजन हो सकता है।

द्विपक्षीय वंशानुक्रम: वह सिद्धांत जिससे वंशानुक्रम पुरुष (यानी, पिता) और महिला (यानी, माँ) दोनों से होता है।

एंग्रिलिनल डिसेंट: वह सिद्धांत जिससे वंशानुक्रम बिना क्रम से पुरुष या महिला के माध्यम से प्रतिघटित होता है।

2.4.9 मानविविज्ञान में नातेदारी अध्ययन की अभिव्यक्ति

नृविज्ञान में, नातेदारी सामाजिक प्रियों का एक जाल है जो अधिकांश समाजों में अधिकांश मनुष्यों के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, हालांकि इस अनुशासन के भीतर भी इसके सटीक अर्थ पर अक्सर बहस होती है। मानवविज्ञानी रोबिन फॉक्स का कहना है कि "नातेदारी का अध्ययन इस बात का अध्ययन है कि मनुष्य जीवन के इन बुनियादी तथ्यों जैसे- संबंध, गर्भधारण, पितृत्व, समाजीकरण, सहोदर के साथ व्यवहार करता है। मानव समाज अभिव्यक्ति है, मानव तर्कशील है, जबकि मानवों के बीच दुनिया के सामान ही मानव के पास भी वही संबंध उपलब्ध हैं जो जनवरों के पास भी है, लेकिन (हम) सामाजिक ज़हरों के लिए इसको नियंत्रण कर सकते हैं। इन सामाजिक ज़हरों में बच्चों के समाजीकरण और बुनियादी आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक समूहों का गठन आत्मवादित है। मानवविज्ञानी, क्योंकि इसमें राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक फलन भी हैं नातेदारी के प्रिेटो के कारणों को मामला में उनके अंतर्दृष्टि के रूप में देखा जा सकता है। वे एक मॉडल और गतिशीलता और संबंधों की व्याख्या करते हैं। किसी दिन एक समाज में यह प्रत्येक सामाजिक इकाई के कारणों को परिभाषित करता है। इसके अलावा इसकी सामाजिक विधित्व समाज वातावरण में इसकी संरचना का पता लगाने के लिए रूर्ख रखती है। एक समाज की संरचना व्यक्ति को कई सिद्धांतों के अनुसार श्रेणियों या स्थितियों में बोटू तें है और सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत नातेदारी है। जैसा कि नेल्सन और ग्रबनर ने किंशिप और सामाजिक संरचना की रीढ़ कुक में उल्लेख किया है कि समाज के अध्ययन में नातेदारी का महत्व नीचे दिया गया है।

• नातेदारी प्रणालियाँ सार्वभौमिक हैं।
• सभी मानव समाजों की संरचना में अलग-अलग अंशों के माध्यम से नातेदारी प्रणाली हमेशा महत्वपूर्ण होती है।
• अधिकांश समाजों में पारंपरिक रूप से मानवविज्ञानी, नातेदारी का अध्ययन करने वाले प्रमुख सिद्धांतों को व्यवस्थित करता है।
• नातेदारी प्रणाली अधिशकृत सरल विशेषण करने में सहायता प्रदान करती है।
2.4.10 सारांश

नातेदारी प्रणालियों के वैज्ञानिक अध्ययन केवल एक सती पुनर्गठन है, लेकिन उस संक्षिप्त अवधि में इसने विवाद और सैद्धांतिक सूत्रीकरण से मानव समाज के यथार्थता पहलुओं की एक महान विविधता को प्रदर्शित किया है। प्रारंभिक अध्ययन के अधिकांश भाग में पारंपरिक प्रणाली पर ध्यान केंद्रित किया गया और उसके बाद ऐतिहासिक संबंधों के लिए या सामाजिक संबंधों के लिए या शादी के प्रकार के नियम को समझने के लिए उपयोग किया गया। यद्यपि यह एक सामाजिक समूह नहीं है, लेकिन एक साथ समूहों के चर्चा के लिए या संस्था को दर्शाता है। नातेदारी न केवल भूमिकाओं की सर्वत्र, संबंधों के प्रकार बताती है बल्कि यह समाज में विविधता नातेदारी शब्दों के बारे में भी बताती है। नृविज्ञान में, नातेदारी सामाजिक रिसों का जालपट है जो अधिकांश समाजों में अधिकांश मनुष्यों के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, हालांकि इस अनुशासन के भीतर भी इसके सटीक अथवा अक्सर बहस होती है। किसी इंतजार या समाज में यह प्रत्येक सामाजिक इकाई के बारे में भीतरीक अथवा अद्वितीय बहस होती है। इसके अलावा इसकी सच्चाई तथा मानवता की परंपरा में विविधता के अथवे विचारण का पता लगाने के लिए शिक्षा रखती है। एक समाज की संरचना व्यक्ति को कई सिद्धांतों के अनुसार श्रेणियों या स्थितियों में रहती है और सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत नातेदारी है।

2.4.11 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नातेदारी के अध्ययन के इतिहास की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. नातेदारी के अथवा अथवा परिभाषा को स्पष्ट कीजिए।
3. नातेदारी की शब्दावली एवं दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए।
4. मानवविज्ञान में नातेदारी की उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए।
5. वंशानुमार के नियम को स्पष्ट कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नातेदारी की स्पष्ट कीजिए।
2. नातेदारी और वंशानुमार के बीच क्या संबंध है? उदाहरण के साथ स्पष्ट कीजिए।
3. मातृसम्बन्धक वंश क्या है?
4. पितृसम्बन्धक वंश का उदाहरण दीजिए।
5. मौर्यन के वर्गीकृत और वर्गनिर्देश नातेदारी शब्दावली पर चर्चा करें।
बहुविकल्पीय प्रश्न

1. हेनरी मागन द्वारा इराव्य जनजाति का अध्ययन किया गया यह जनजाति किस देश में पायी जाती है?
   (क) भारत   (ख) स. राज्य अमेरिका   (ग) द. अफ्रीका   (घ) आस्ट्रेलिया

2. नातेदारी प्रणाली को वर्गीकृत नातेदारी प्रणाली एवं वर्णनात्मक नातेदारी प्रणाली में वर्गीकृत किया-
   (क) ब्रिक्सलट   (ख) हेनरी मेन   (ग) मार्गन   (घ) टायलर

3. देव-भाभी के बीच संबंध को किस प्रकार का संबंध कहा जाता है?
   (क) परिहास   (ख) परीहर   (ग) परिहास एवं परिहार दोनों   (घ) सहसंबंधवाच

4. मात्रेव्यवस्था में बच्चा किसकी संपत्ति का उत्तराधिकारी बनाता है?
   (क) पिता   (ख) बुआ   (ग) भान   (घ) मामा

5. वंशावली चित्र में पुष के लिए किस चिन्ह का उपयोग किया जाता है?
   (क) △   (ख) ○   (ग) =   (घ) □

उत्तर- 1. स. राज्य अमेरिका, 2. मार्गन, 3. परिहास, 4. मामा, 5. △

2.4.12 संदर्भ ग्रंथ सूची


खण्ड 3 आदिम समाज - I
इकाई 1 धर्म, जादू, विज्ञान एवं टोटेम
(Religion, Magic, Science and Totem)

इकाई की रूपरेखा
3.1.0 उद्देश्य
3.1.1 प्रस्तावना (Introduction)
3.1.2 धर्म
3.1.3 धर्म की परिभाषाएँ
3.1.4 धर्म की विशेषताएँ
3.1.5 धार्मिक क्रियाओं की विशेषताएँ
3.1.6 धर्म के आवश्यक तत्त्व
3.1.7 धार्मिक कार्यकर्ता
3.1.8 धर्म की उत्पत्ति के सिद्धांत
3.1.9 धर्म के प्रकार
3.1.10 वैश्विकता के युग में धर्म
3.1.11 जादू (Magic)
3.1.12 जादू की परिभाषाएँ
3.1.13 जादू के प्रकार
3.1.14 जादू की विशेषताएँ
3.1.15 जादू की क्रियाओं के तत्त्व
3.1.16 जादू-टोटम तथा अभीचार या इंजाल (Sorcery and Witchcraft)
3.1.17 विज्ञान
3.1.18 जादू एवं विज्ञान में समानताएँ
3.1.19 जादू एवं विज्ञान में अंतर
3.1.20 प्रेमाण के अनुसार जादू, विज्ञान और धर्म
3.1.21 जादू एवं धर्म में समानता
3.1.22 जादू एवं धर्म में अंतर
3.1.23 जादू, विज्ञान और धर्म का प्रकार
3.1.24 टोटम
3.1.25 टोटम की परिभाषाएँ
3.1.26 टोटम के प्रकार
3.1.27 सारांश (Summary)
3.1.28 बोध प्रश्न
3.1.29 संदभंग सूची

3.1.0 उद्देश्य
इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे:

- धर्म क्या है? इसकी विशेषताएं और आवश्यक तत्व क्या हैं? धर्म की उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धांत और धर्म के प्रकार को जानने में सक्षम होंगे।
- जादू क्या है? जादू के प्रकार, विशेषताएं और क्रियाओं के तत्वों को जानने में सक्षम होंगे।
- विज्ञान क्या है? जादू और विज्ञान में समानताएं एवं अंतर क्या हैं? जादू और धर्म में समानता एवं अंतर क्या है और जादू, विज्ञान और धर्म के प्रकार को समझने में सक्षम होंगे।
- टोटम क्या है, इसके प्रकार ज्ञात कितने हैं? यह जानने और लिखने में विद्यार्थी सक्षम होंगे।

3.1.1 प्रस्तावना (Introduction)
मानवीय आवश्यकता अनेक है जिनकी पूर्ति निर्णायक मानवीय प्रयत्नों द्वारा ही संभव है। यह सोच कर मानव अपने से श्रेष्ठ शक्तियों की ओर उन्मुख होता है। फलस्वरूप धर्म एवं जादू की उत्पत्ति होती है वस्तुतः मानव ने सच्चायत्न इन शक्तियों को नियंत्रित करने का प्रयास किया जिसके परिणाम स्वरूप जादू की उत्पत्ति हुई, परंतु जब मानव इन शक्तियों को नियंत्रित करने में विफल रहा, तो इन सब के सामने नतमस्तक हो गया और उनकी पूजा करने लगा यही से धर्म की उत्पत्ति हुई होगी। इस इकाई में हम इन्हीं विषयों पर चर्चा करेंगे और यह जानने का प्रयास करेंगे की धर्म, जादू और विज्ञान में क्या समानताएं और विभिन्नताएं हैं।

3.1.2 धर्म
धर्म शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के ‘धृ’ शब्द से हुई है जिसका अर्थ है धारण करना अर्थात सभी जीवों के प्रति में दया धारण करने से है। हिंदू धर्म में इसका अर्थ कवर्त्य पालन करने से है। धर्म को समझने में पहला कदम स्पष्ट रूप से यह तय करना है कि यह क्या है, लेकिन जैसा कि अक्सर होता है, इस मूल
वर्तमान के अनुसार धर्म, “पवित्र वस्तुओं से संबंधित विधासों और आचरण की संपूर्ण व्यवस्था है जो इन पर विधास करने वालों को एक नैतिक समुदाय में संयुक्त करती है”।

टाइलर ने प्रमितित कल्चर में धर्म की यह परिभाषा दी कि, “धर्म आध्यात्मिक रूप से विधास है”।

मलिनोव्स्की के अनुसार, “धर्म, ग्रिया की एक विधि है और साथ ही विधासों की एक व्यवस्था है। धर्म एक समाजशास्त्री घटना के साथ-साथ एक व्यक्तिगत अनुभव भी है”।

3.1.3 धर्म की परिभाषाएँ
गोवेल - “धर्म अलौकिक शक्ति पर विवास पर आधारित है जिसमें आत्मावाद और मानवाद दोनों सम्मिलित है”।

3.1.4 धर्म की विशेषताएं
3.1.5 धार्मिक क्रियाओं की विशेषताएं

3.1.6 धर्म के आवश्यक तत्त्व

बूम और सेलजिनक ने धर्म के सात आवश्यक तत्व की चर्चा की
3.1.7 धार्मिक कार्यरता
पुरोहित या धार्मिक कार्यरता जो विभिन्न अनुष्ठानों को संपन्न करता है तथा जिसे अपनी उपस्थिति व प्रतिष्ठा अनुवांशिक रूप से प्राप्त होती है।
ओझा या शामन—हम तुंगुस भाषा का शब्द है जिसका आशय ऐसे व्यक्ति से है जो आत्मा से अपरोक्ष रूप से बात कर सकता है।
वॉल्डेमर बोगोरस ने साइबेरिया की चुकची के अध्ययन के दौरान शामन का उल्लेख किया है या एक धार्मिक डॉक्टर होता है जो मुख्य रूप से विभिन्न बीमारियों का इलाज करता है।

3.1.8 धर्म की उत्पत्ति के सिद्धांत
आत्मावाद या जीववाद का सिद्धांत—टावलर ने अपनी पुस्तक प्रिमियल कल्चर में आत्मावाद का सिद्धांत प्रस्तुत किया। इसे उन्होंने दो भागों में बांटा है—
आत्मा का सिद्धांत—जीववाद का संबंध मनुष्य के जीवन से है जो की मृत्यु के बाद भी अपना अंतिम बनाए रखता है।
प्रेतों का सिद्धांत— दूसरा सिद्धांत जिसे अपने प्रेतों का सिद्धांत कहा यह वह आत्माएं है जो मनुष्य की आत्मा से पृथक देवीय आत्माएं हैं।
टावलर का सिद्धांत कहता है कि मनुष्य की आत्मा दो प्रकार की होती है स्वतंत्र आत्मा और शरीर आत्मा। स्वतंत्र आत्मा शरीर के बाहर, अंदर आ जा सकती है परंतु शरीर आत्मा एक बार शरीर छोड़ने के बाद वापस नहीं आ सकती और प्रेत बन जाती है। यह आत्मा अमर होती है क्योंकि यदि ऐसा ना होता तो मेरे हुए व्यक्ति सम्पन्न मे दिखाई नहीं देते। अपनी बात की पृथ्वी के लिए उन्होंने टोड़ा जनजाति में होने वाली दो प्रकार की अंतिम संस्कार का वर्णन किया है।
हरी अंत्येश्वरी—जो मृत्यु के तुंगुस बाद की जाती है।
सुखी अंत्येश्वरी—जो मृत्यु के कुछ समय बाद की जाती है। इसका उद्देश्य संबंधतः आत्मा का कुछ समय तक लौट आने का इंतजार किया जाना है।
टेलर के अनुसार अमूत्व एवं अभौतिक प्रेत आत्माओं के प्रति भय निक्षित आदिम धर्म का मूल है।
इस प्रकार पूर्ण जीवन ही मूल और आराधना का प्रारंभिक रूप तथा समाधि या क्रोध कई आरंभिक मंत्र हुआ करते थे।
जीवित सतावाद या मानसवाद का सिद्धांत—इस सिद्धांत की मान्यता है कि प्रत्येक वस्तु में सामी वह जड़ हो या चेतन हो एक जीवित अलीकंद्र सता होती है। इस सता में विश्वास और इसकी पूजा आराधना से ही धर्म की उत्पत्ति हुई। इस सिद्धांत को सर्वप्रथम मैकस मूलन ने प्रस्तुत किया एवं इसी से मिलती-जुलती अन्य
अवधारणा मानववाद का उल्लेख किया। इसमें मलेनेशिया की जनजातियों में यह विश्वास किया जाता है कि किसी भी कार्य की सफलता या असफलता माना पर निर्भर है। माना एक अलोकिक शक्ति है।

भारतीय जनजातियों में इसी से मिलती-जुलती अवधारणा को मुख्य ने सिंहभूम की ‘हो’ जनजाति में बोगवाद में दी। उत्तरी अमेरिका की जनजातियों में और ऑरेंडा की अवधारणा मानववाद में मिलती जुलती है।

मेरिट के अनुसार माना एक अलोकिक, अशरीरी और अलोकिक शक्ति है जो अच्छे और बुरे दोनों रूपों में मनुष्य को प्रभावित करती है। मनुष्य इस शक्ति के समक्ष नतमस्तक हुआ और इसकी पूजा एवं आराधना से ही धर्म की उत्पत्ति हुई।

प्रकृतिवाद का सिद्धांत- मैक्स मूलर ने धर्म की उत्पत्ति के लिए प्रकृति पूजा को उपस्थाप किया। आपके अनुसार मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों के सामने नतमस्तक हुआ। उसने प्रकृति की शक्ति को स्वीकार किया और वहीं से प्रकृति की पूजा शुरू हुई जो धर्म की उत्पत्ति का आधार बनी। यह निष्ठर्क भारत तथा सूरोपीय धार्मिक कथाओं पर आधारित था।

फ्रेजर के धर्म की उत्पत्ति का सिद्धांत- स्कॉटलैंड निवासी फ्रेजर, टेलर से प्रभावित थे और उन्हें अपनी पुस्तक द गोल्डन बो में लिखा कि जादू टोना की शक्तियों से सुपरनैचुरल पावर्स को नियंत्रित करने का प्रयास किया और जब वह अपने प्रयास में असफल हुआ तो इस सब के आगे मानव ने अपने आप को समर्पित कर दिया। असफल जादू टोना ने मनुष्य को धर्म की ओर अप्रयास किया।

धर्म का सामाजिक सिद्धांत- यह सिद्धांत इमाइल दुखम ने अपनी पुस्तक ‘द एलीमी फॉर्म्स ऑफ रिलीजियस लाइफ’ 1912 में प्रस्तुत किया। आप के अनुसार धर्म सामाजिक चेतना का प्रतीक है। धर्म का वास्तविक आधार स्वयं समाज है। दुखम कहते हैं “स्वयं का सामाजिक एक महिमा मंडित समाज है।” दुखम अपने गुरु फ्लेट डी कोलेज की पुस्तक द एसिंट पिस्टो से प्रभावित थे। जिसमें यह लिखा था कि रोमन धर्मों का जन-सामाजिक संगठनों के विकास के साथ हुआ। दुखम का अध्ययन अस्ट्राउस्ट्रिया की जनजाति पर आधारित था। दुखम ने पवित्र और अविवक्त को समझाने के लिए तो टोटमवाद का सहारा लिया। दुखम के अनुसार धर्म एक सामाजिक तथ्य है और उसकी उत्पत्ति में समाज का भी योगदान है। दुखम ने विवास तथा टोटम को धर्म के आवक कार तक के रूप में स्वीकार किया है तथा टोटम को धर्म का प्रारंभिक स्तर माना। इस प्रकार दुखम ने टोटम को ही धर्म की उत्पत्ति का आधार माना तथा सामूहिक प्रतिनिधित्व का प्रतीक माना।

प्रकार्यवादी सिद्धांत- मानवशासी मलिनोव्स्की एवं रेडिलफ़ ब्राउन ने धर्म की प्रकार्यवादी व्याख्या प्रस्तुत की। मलिनोव्स्की के अनुसार मनुष्य ने संस्कृति को जन्म दिया, संस्कृति का कोई तत्त्व बेकार नहीं है। व्यक्ति तथा समाज की किसी ना किसी आवश्यकता की पूर्ति अवश्य करता है। धर्म भी संस्कृति का एक अंग है और उसका अस्तित्व भी इसी कारण समाज में होता है। रेडिलफ़ ब्राउन के अनुसार धर्म का प्रकार मानव मस्तिष्क
को भय एवं संबंधों से मुक्ति दिलाना नहीं है। जैसा मलिनोव्स्की ने कहा बल्कि धर्म का प्रमुख प्रकार मनुष्य की समाज पर आश्रितता का प्रकार करता है तथा सामूहिक जीवन के अवस्थान को बनाए रखना है। मलिनोव्स्की के विकास के महत्व पर बताते ही जबकि रेडिलफ ब्राउन समाज के हालाँकि समाज के लिए व्यक्ति उतना ही महत्वपूर्ण है जितना व्यक्ति के लिए समाज। संस्कृत में मलिनोव्स्की ने धर्म के प्रकार की व्यक्ति के स्तर पर दर्शाया जबकि रेडिलफ ब्राउन ने समाज के स्तर पर लेवी स्ट्रास के अनुसार धर्म की अभिव्यक्ति प्रतीकात्मकता तथा पीरामिक पारदर्शिता द्वारा होती है।

3.1.9 धर्म के प्रकार

3.1.10 वैश्विकता के युग में धर्म

सभी सामाजिक संस्थाओं के तरह, औद्योगिक क्रांति और इसके द्वारा हुए वैश्विक बदलावों के परिणामस्वरूप धर्म में व्यापक परिवर्तन आया है। धर्म के समाजशाख के शुरुआत संस्थाओं में से कई ने धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया के रूप में इस प्रामाण्य परिवर्तन को अपेक्षाकृत सरल शब्दों में देखा, जिसमें पूर्वी धार्मिक विचारों और संस्थाओं का नए तरसंगत-वैज्ञानिक द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। वर्षों से, इस धर्मनिरपेक्षता थीसिस के अधिकार ने अपने दावों को केवल यह कहते हुए नियंत्रित किया कि समाज और सामाजिक जीवन पर धर्म के प्रभाव ने आधुनिकीकरण की इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप जीर्ण आई है (रोबर्ट्स 2004: 305–28). अभी हाल ही में, कई विद्वानों ने इस थीसिस को चुनौती दी है कि लोग उतने ही धार्मिक हैं जितने जिन्हें वे कभी थे और धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया में उहराव आया है (स्टार्क और वैनब्रिज
दूर िशा िनदे

महा मा गांधी अंतरराीय हिंदी विश्वविद्यालय
एम.ए. समाजशास्त्र

1985)। इस तरह के दवे एक शक्तिशाली पलटवार की तरह है, और यह धर्म के समाजशास्त्र में सबसे ज्यादा बहस वाले मुद्दों में से एक बना हुआ है (ब्रूस 1996)

मानवशास्त्रियों के बीच बहुत से अंतरधर्मिनिपेक्षता की पहसूस विरोधी परिभाषाओं पर टिका हुआ है। सबसे पहले, हालांकि यह प्रूवति परिधि की तुलना में कोर में अधिक चिह्नित करती है, दुनिया के सभी हिस्सों में समाज अधिक धर्मिनिपेक्ष बन रहे हैं, इसका मालक है कि पौष्ठिक और जादुई विचार कई सामाजिक जीवन के क्षेत्र में तर्कसंगत-वैज्ञानिक विचार द्वारा प्रतिस्थापित किया जा रहे हैं (लेकिन निश्चित रूप से सभी में नहीं)। दूसरा, यूरोपीय समाज में संगठित धर्म के राजनीतिक और सामाजिक उद्योगता में तीव्र गिरावट आई है क्योंकि वे आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से गुजर चुके हैं। यह प्रूवति, हालांकि, दुनिया के अन्य हिस्सों में बहुत कम स्पष्ट है। उन समाजों में जहां एक्सराइस ने कभी जड़ नहीं ली, धर्म ने शुरू से ही बहुत कमजोर राजनीतिक भूमिका निभाई। अिल्ग-अिल्ग धार्मिक संस्थाओं के रास्ते में धर्म ज्यादा नहीं हैं, और एशियाई समाज हमेशा से ही लोकतंत्र की तुलना में अधिकारवाद की ओर अधिक आसार रहे हैं।

उदाहरण के लिए, माओ लस-टुंग के तहत चीनी सरकार ने आधुनिकीकरण की किसी भी महत्वपूर्ण प्रक्रिया से पहले संगठित धार्मिक गतिविधियों का कठोर दमन शुरू किया था, और अब वह धीरे-धीरे अपनी पकड़ ढीली कर रहा है क्योंकि औद्योगीकरण आगे बढ़ गया है। हाल के वर्षों में, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया और उपभोक्ता पूंजीवाद के वैश्विक प्रसार के कारण होने वाले विरोधाभासों और अवयवस्थाओं के खिलाफ प्रतिक्रिया देने वाले विभिन्न आंदोलनों के लिए धर्म भी साधन बन गया है। इस्लामी कठरपंथी आंदोलन, इस्लामिक संस्कृतियों के पुनर्मूल्यांकन के लिए एक राजनीतिक/धार्मिक प्रतिक्रिया है जो विविध व्यवस्था में एक परिधीय स्थिति के साथ विदेशी वर्चस्व में निहित है और पश्चिमी उपभोक्ता मूत्रों के प्रसार कर रही है। दिलचस्प बात यह है कि इस्लामी कठरवाद को एक अन्य राजनीतिक/धर्म आंदोलन की सफलता से महत्वपूर्ण प्रक्रिया में प्रदर्शित किया गया, जो पूर्व में इस्लाम शासित प्रदेशों पर नियंत्रण रखता था। इस्लामिक कठरवाद के बढ़ते उदाहरण के बदले में भारत में कभी-कभी हिंदू-कठरवाद के रूप में एक प्रतिवाद को उजागर किया। यहां तक कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, विश्व प्रणाली में अपनी विषम स्थिति के साथ, अपने स्वर्ण के राजनीतिक/धार्मिक आंदोलनों की बुद्धि देखी है। हालांकि, अमेरिका में धार्मिक अधिकार का उदय विदेशी वर्चस्व का परिणाम नहीं था, लेकिन पारंपरिक पारिवारिक संस्थाओं और पूंजी में आए बदलाव का एक परिणाम था जो उपभोक्ता पूंजीवाद के विकास के परिणामस्वरूप हुआ।

तीसरा, हालांकि व्यक्तिगत धार्मिकता को मापना मुश्किल है, लेकिन यह मानने का कोई कारण नहीं है कि लोग किसी भी तरह की "परम चिंतां" के मामलों में से कम दिलचस्पी रखते हैं, जो कि अधिकांश धर्मों की नींव हैं। वर्तमान, सामाजिक संकट धर्म के हितों के परिवर्तन या गहनता को उजागर कर सकते हैं। मध्य पूर्व के मंगोलियाई विजय के बाद सूफीवाद का उदय एक उदाहरण है, जैसा कि द्वितीय विश्व युद्ध में अपनी विनाशकारी पराजय के बाद जापान में हुए "धर्म के पंटे" के रूप में ज्यादा नए धर्मों का तेजी से विकास था।
बहरहाल, कोई फर्क नहीं पड़ता कि हम किस सामाजिक संगठन को अनपनाते हैं और हमारी ऐतिहासिक परिस्थितियाँ क्या हैं, धार्मिक आवेग को जन्म देने वाली अतिस्थित दुर्घटाएं मानवीय स्थिति का एक मूलभूत हिस्सा हैं।

3.1.11 जादू (Magic)

जादू एक जोड़ी क्रिया है और उसे परिभाषित करना मुश्किल है। आम तौर पर, यह अनुभाग गतिविधि को संदर्भित करता है, समान्यतः: इसमें संस्थागत समर्थन नहीं होता है, इसका निर्माण, शब्दों और कार्यों के माध्यम से भक्तिशाली माना जाता है और इसको करने वाला विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों को स्वचालित रूप से प्रेरित करने का इरादा रखता है। अच्छे (सफेद जादू) या भूरे (काले जादू) का उद्देश्य लोगों की इच्छाओं के अनुसार विभिन्न मानव और प्राकृतिक घटनाओं (स्थायी, वैज्ञानिक, प्राकृतिक गतिविधि, जलवायु संबंधी घटनाओं, भविष्य के ज्ञान, सामाजिक संबंध आदि) से संबंधित है जो इसका उपयोग करते हैं (जादूरा या उनके ग्राहक) और जो लोग विस्मय करते हैं। जादू, पूर्व अनुभागों के अलावा, विश्वासों की एक प्रणाली भी है, ताकि अभावी, ग्राहक की इच्छा जो विभिन्न पहलुओं पर निर्भर करती हैं अपने अनुभाग परवरित कर सके।

जादू की अवधारणा, पक्षमी सम्प्रदाय में उभरी और विकसित हुई और धर्म, विज्ञान और तर्क के विरोध के लिए कार्य किया। जादू ने, आंतरिक रूप से, पौराणिक अनुभागों (जैसे कि ज्यादातर हाशियों की प्रथाओं) को परिभाषित करने का कार्य किया है। इस अवधारणा को तब पक्षम के लोगों के अलावा अन्य समुदायों में एक ऐसी श्रेणी का मूल था जो विस्मय और लागू किया गया, जो सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता (उच्च प्राचीन सम्प्रदायों के धर्म - मिस्क, वैदिक भारत, आदिवा या उपनिवेशवादी लोगों के धर्म) को परिभाषित करती है। अंतिम शब्द 'magia', जिसमें से "magic" निकलता है, की उपस्थित फारसी पुजारियों, magoi के नाम से हुई है, जो जोरोट्रियन पुजारी (हरोडोटस) से संबंधित थी। इस प्रकार, यह मूल रूप से एक आधिकारिक और प्रतिष्ठित धौमिका को परिभाषित करता है। लेकिन तात्कालिक ग्रीक और रोम परिवर्तन साधन में, और बाद में सामान्य रूप से इसाई और पक्षमी संस्कृति में, इस अभिव्यक्ति के अर्थ में एक वैदिक विश्वास का समान अर्थ हुआ, जिसने एक नकारात्मक और विद्रोही चरित्र प्राप्त किया।

ग्रीक सम्प्रदाय में magoi सीमांत लोगों को कहते हैं। वे चारों ओर से अपने हुए थे और उन्हें चार्ल्स माना जाता था। magos शब्द का उपयोग विदेशी, बर्बर को परिभाषित करने के लिए किया गया था। लेकिन संस्कृति में भी magus का समान अर्थ था, और magia को अविश्वास के साथ देखा गया था, एक ऐसा उपकरण, जिसने व्यक्ति, परिवार और सामाजिक जीवन के सामान्य आदेश को खतरे में डाल दिया था। जादू का मूल्यांकन, दमन और एक अपराध के रूप में शुरू किया गया था, जो कि टेबल्स एंड कोडियन के कोडज्स के बारे में तलिकाओं के कानून के साथ था। दुर्घटनाओं पर जादू का आरोप लगाया जाता था: बुतपरस्त
के लिए, जादू के संबंध में एक उल्लेखनीय परिवर्तन मात्रिविश्वस्त्र के कार्यान्वयन सिद्धांत में मिलता है। उसके लिए, जादू, धर्म और विज्ञान किसी भी तरह से एक प्राणिशील क्रम का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। वे एक ही सामाजिक वातावरण में सहविश्वस्त्र करते हैं और प्रत्येक व्यक्ति और सामाजिक जरूरतों को पूरा करने की दिशा में अपनी विशेष योगदान (कार्य) प्रदान करते हैं। मात्रिविश्वस्त्र उद्विकासवाद की तार्किक तृंट के रूप में जादू के लिए वैदिक इतिहास को छोड़ देते हैं। उनके लिए, जादू, विज्ञान के दायरे से नहीं, बल्कि धर्म से संबंधित है, भले ही उनके बीच मतभेद है। जादू का उपयोग ठोस, विशेष समयांक के जवाब देने और अथ देने
दूर िशा िनदे
शालय,
महा मा
गांधी अंतररा
ी य िहंदी िव व िवालय
एम.
ए.
समाजशा

के लिए किया जाता है। हालांकि, दोनों उस विंडु से परे हस्तक्षेप करते हैं, जिसमें आदमी वास्तविकता को निर्यित कर सकता है, और चिंता और मानवात्मक तनाव के श्रेणियों में उसकी उपत्यका होती है। मालिनोव्स्की ने लेखी बुहल के विचारों का हवाला दिया, जो आधुनिक पश्चिम तर्कसंगत और वैज्ञानिक विश्वस्तिकी को आदिम लोगों की मानसिकता के विपरीत मानते हैं। लेखी बुहल का मानना है आदिम समाज पहचान के सिद्धांतों और गैर-विरोधभास्म के प्रांति उदासीन एक जादूई दुनिया के भीतर रहते हैं। उस्हें रहस्यमय भागीदारी के एक कानून का पालन करने के रूप में देखा जाता है, जो वास्तविकता के विभिन्न नियमों (जो हमारे लिए अलग हैं) के संपर्क में रहता है और दिखाई देती वाली दुनिया और अद्वितीय रूपसिद्ध के बीच, सोने और जागने के बीच, और मृतकों के बीच मिलता हस्तक्षेप बनाता है। दूसरी ओर, मालिनोव्स्की ने ट्रेब्रिएंड द्रीप समूह के मूल निवासियों का अनुभव करते हुए देखा कि वे अच्छी तरह से जानते थे कि तर्क के कार्यों के रूप में करना है और प्रीयोजिकी और जादू के बीच काम अंतर है। जब परिणाम निश्चित होते हैं तो जादू कभी हस्तक्षेप नहीं करता है, लेकिन केवल उन स्थितियों से उपनन चिंता से निपटने के लिए जो पूरी तरह से अनिवृत हैं। जादू, विशिष्ट संदर्भों में, मानव जीवन के विभिन्न व्यक्तियों (प्रेम, खेती, मछली पकड़ने, आदि) में परिणाम की अनिवृतता से परे शान मनोवैज्ञानिक और सामाजिक संतुलन को फिर से स्थापित करने के लिए आवश्यक है।

दुर्खीम और मार्सेल मास एक सामाजिक घटना के रूप में जादू के चरित्र पर जोर देते हैं। जादू और उसका जादू सामाजिक परिवेश के भाव हैं; वे पैदा होते हैं और सामाजिक सहभागिता पर खड़े होते हैं, जैसा कि धर्म और पादरी करते हैं। धर्म की तरह, जादू परिवर्तन के सापेक्ष मान्यताओं और प्रथाओं की एक प्रणाली है (अपवित्र के विरोध)। मास ने तर्क दिया कि अपने निजी, व्यक्तिगत, गुप्त और रहस्यमय चरित्र के माध्यम से, टोस और उपयोगकर्ताओं (जो विज्ञान और प्रीयोजिकी के लिए जादू को जोड़ता है) प्रवृत्ति के माध्यम से, चिकित्सा, धातु विज्ञान, औषधी विज्ञान, वनस्पति विज्ञान और खगोल विज्ञान उपनन है। जादू धर्म से प्रतिलिप्त होता है। धर्म में एक सार्वजनिक चरित्र है, जो अमूर्त और आध्यात्मिक की ओर जाता है, और, दुर्खीम की रूप में, "चर्च" नामक एक नैतिक समुदाय बनाता है। इसके विपरीत, एक जादू में 'चर्च' जैसी संस्था मौजूद नहीं है।

रेडकिल्फ़ ब्राउन (जिन्होंने धर्म और जादू के बीच नैतिक ध्वस्तता को छोड़ने और अनुष्ठान की श्रेणी में दोनों को सामाल किया है) और इवांस प्रिचार्ड द्वारा सामाजिक संस्चरण और जादू के बीच बहुत करीबी संबंध पाया। उन्होंने सूडान के अपार्डे जनजाति में जादू एक रहस्यमय विचार के सुसंगत प्रणाली की पहचान करता है, जो अनुभवजन्तु विचार का पूरक है। जादू टोना दुधाय की व्याख्या करता है, जबकि जादू स्वयं का इससे बचने या चुड़ैलों के हमलों से होने वाले किसी भी नुकसान का उपाय करने के लिए साधन प्रदान करता है, जो कि शानदार तकनीकों के माध्यम से खोजा जाता है।
वेबर द्वारा जादू, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संबंध का विश्लेषण किया गया था। धर्म की उत्पत्ति और विकास की जांच करते हुए, वह धार्मिक रूपों को अनिवार्य रूप से जादू के रूप में, जबतक अनुष्ठानों और भौतिक उद्देश्यों के रूप में वर्णित करता है। बाद में, धर्म नैतिक मूल्यों पर चलता है और अर्थव्यवस्था और सामाजिक जीवन की भावना प्रदान करता है (भले ही ज्यादातर धर्मों में जादू के तत्व रहते हैं)।

जादू, दुनिया के साथ मोहभंग, जो विशेष रूप से प्रोटेस्टेंटिज्म के माध्यम से होता है, पर कालू पाने के लिए धार्मिक प्रथाओं, गठन, व्यवसायों के जन्म के लिए एक अनिवार्य साधन के मनोवैज्ञानिक उद्देश्य के साथ विवाहों के युक्तिकरण और नैतिकता की ओर जाता है। आधुनिक पंजीवादी अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी के विकास के लिए (जादू आर्थिक गतिविधि के तर्कसंगत संगठन के लिए एक बाधा है)।

3.1.13 जादू के प्रकार
एस. सी. दुबे के अनुसार उद्देश्य के आधार पर जादू को तीन भाग में बांटा जा सकता है –

संबंधित जादू - अर्थव्यवस्था के विकास का साधन बनाने वाला, इसका उद्देश्य उत्पादन बढ़ाना, वर्षा लाना, न्यायाधीश में उत्पादन बढ़ाना आदि होता है। उदाहरण – आहेर का जादू, उबरता का जादू, जल्दी के लिए जादू, मछली पकड़ने का जादू, नौका चलाने का जादू,

संस्कृतक जादू – (प्रोटेस्टेंट मैंजिक) दूसरे जादूं द्वारा किये गए जादू से अलग, संपत्ति की सुरक्षा, तुर्बिन्द के रूप में रक्षा किमी को लेकर गए कुछ को पुनः उपयोग करने के लिए या रोग उपचार के लिए।

विनाशक जादू – (डिस्ट्रक्टिव मैंजिक) प्रतिपक्ष को हानि पहुंचाने, उसकी संपत्ति की हानि, वापस, बीमार करने आदि से संबंधित है।

मैलिनोवर्सका का वर्गीकरण
मैलिनोवर्सका के अनुसार जादू दो प्रकार के होते हैं:-

संभव जादू (चाईट मैंजिक) - समाज द्वारा स्वीकृत है क्योंकि उसका उद्देश्य उससे लाभ पहुंचाना, परोपकार करना, जनकल्याण करना होता है।

काला जादू – (लैक मैंजिक) - इस समाज स्वीकृत नहीं है। यह प्रतिपक्ष को बीमार करने, उसकी संपत्ति को नष्ट करने या उसे नष्ट करने के लिए किया जाता है। सोसीरी (मंत्र तंत्र) तथा विचनकाप्त (भूत प्रेतों) की सिद्धि को मैलिनोवर्सका ने काले जादू के अंतर्गत रखा।

प्रेमज ने जादू का वर्गीकरण सहानुभूतिक जादू –

- अनुकूलकरणात्मक जादू – सादृश्यमूलक, समानता के नियम पर आधारित। लाइक प्रोड्यूसर्स लाइक। इसका प्रयोग अन्य और दूसरे कारों में किया जाता है। जैसे एस्किमो जनजाति में यह मान्यता है कि यदि किसी बच्चे की गुड़िया बनाकर किसी निसंतान मां को दी जाए, तो निश्चित रूप से 

दूसरी सेमेंटर – सामाजिक मानवविज्ञान  Page 142
उसे बचा होगा। इसी प्रकार हो जनजाति में यह मान्यता है की यदि दुश्मन के काठ की मूर्ति बनाकर उसके रोधी और आंख में हड़प्पे बनाया जाए तो दुश्मन के उसी भाग में चोट लगेगी। बिहार की कुछ जनजातियों में ऐसा विश्वास है कि पत्थरों को पहाड़ से गिराने पर गढ़-गढ़ की आवाज से बारिश हो जाती है। इसी प्रकार गोलालारी लोगों में ऐसी मान्यता है कि जब प्रेमी अपनी प्रेमिका से मिलने जाए और अगर वह शामिल की मिट्टी को प्रेमिका के घर के ऊपर डाले तो घर के सभी लोग अनोखे नींद में सो जाते हैं और वे स्वतंत्र स्तर से मिल सकते हैं। खोड़ जनजाति में व्यक्ति के लिए नर बलि दी जाती है ऐसी मान्यता है कि जैसे जैसे रचा टपके का वर्षा भी बैसे-बैसे होगी।

- संक्रामक जादू (कॉटेजियस मैजिक) - संपर्क के नियम पे आधारित वस इन कोटट आलेख इन कोट्ट। इसकी मान्यता है कि कोई वस्तु सिसी व्यक्ति से एक बार संपर्क में रहे तो सदिव उस व्यक्ति से उसका संपर्क बना रहेगा और अगर वस्तु पर कोई जादू की जिया की जाए पर संबंधित व्यक्ति अस्तव भावित होगा। जैसे संबंधित व्यक्ति के कपड़े या बालों और नाखूनों पर जादू करना। चेताकी जनजाति में लड़की की नाल का धारा की अनाज की कोडी में छूट देते हैं। उनका विश्वास है कि वह अच्छा खाना बनाएगी और लड़के की नाल को पेड़ पर टांग देते हैं। ऐसा माना जाता है वह आगे चलकर अच्छा शिकारी बनेगा।

जेम्स फ्लेजर जादू को सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों मानते हैं। सकारात्मक जादू में यह विश्वास व्यक्त किया जाता है कि अमुक कार्य/परिणाम प्राप्त करना है तो अमुक क्रियाएं करनी होगी। नकारात्मक जादू में टेबू या निषेध आते हैं किसी विश्वास किया जाता है कि ऐसा मत करना नहीं तो यह घटना घट जाएगी।

फ्लेजर के विचारों को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है
3.1.14 जादू की विशेषताएं

3.1.15 जादू की क्रियाओं के तत्त्व
एम.सी. दुबे ने तीन तत्त्वों की चर्चा की

मल्लिनोव्स्की ने चार तत्त्वों की चर्चा की
3.1.16 जादू-टोना तथा अभीचार या इंजालज (Sorcery and Witchcraft)

ज्ञान सिद्धांत के अनुसार अभीचार वह कला है जो सीखी जाती है जबकि जादू-टोना की शक्ति किसी मनुष्य में अनुवांशिक या जन्मजात पाई जाती है अभीचार जादू का हानिकारक प्रयोग है आपके अनुसार जादू-टोना सामाजिक नियंत्रण का एक साधन भी है।

3.1.17 विज्ञान

मालिनोव्स्की (1948: 34) सबूत उठाते हैं कि "क्या हम आदिम ज्ञान का संबंध विज्ञान के एक रूढ़िवादी चरण के रूप में कर सकते हैं? जैसा कि मैंने पाया है कि दोनों अनुभवजन्य और तर्कसंगत हैं।" एक सीधा जवाब है कि अगर हम विज्ञान को अनुभव और तर्क के आधार पर ज्ञान की प्रणाली मानते हैं तो आदिम लोगों को विज्ञान के अन्वेषणकारियों के अधिकारी माना जाना चाहिए। दूसरी बात, अगर हम विज्ञान का एक दृष्टिकोण के रूप में लेते हैं, तो मालिनोव्स्की के अनुसार, मूल निवासी उनके दृष्टिकोण में पूरी तरह से अवैज्ञानिक नहीं हैं। उन्हें प्यास का ज्ञान नहीं पता है। वे उन विषयों को फाइन उबाऊ लग सकते हैं, जो यूरोपीय लोगों के लिए बहुत रुचिकर हैं। ऐसी इसलिए है क्योंकि उनकी पूरी रूचि उनकी सांस्कृतिक परंपराओं द्वारा निर्धारित होती है। वे अपने परिवेश में बहुत रुचि रखते हैं। पशु जीवन, समुद्री जीवन और जंगल से संबंधित घटनाएं। अपने निबंध में इस स्तर पर, मालिनोव्स्की ने मानवीय और आदिम ज्ञान के आधार से संबंधित प्रश्नों को अलग करने का प्रयास किया। इसके बजाय वह यह पता लगाता है कि क्या आदिम लोगों के पास वातावरण का एक समावेशीक ऊष्ठ है जिसमें जादू, विज्ञान और धर्म सभी एक हैं। और जीवन के तीन पहलुओं को सामाजिक घटना के अलग-अलग क्षेत्रों के रूप में मानते हैं। उन्होंने अन्तर, यह दिखाया है कि व्यवहारिक गतिविधियों की दुनिया और उसे संबंधित तर्कसंगत दृष्टिकोण ट्रोबिएंड्स के लिए एक दुनिया बनाते हैं। इसके अलावा, यह दुनिया जादू और धार्मिक प्रथाओं की दुनिया से अलग है।

टेलर के अनुसार प्रत्येक संस्कृति में जादू, धर्म और विज्ञान जैसे तत्त्व पाए जाते हैं। जैसे जैसे हम समय की ओर बढ़ते हैं जादू-एवं धर्म का प्रभाव घटता जाता है तथा विज्ञान का प्रभाव बढ़ता जाता है।

3.1.18 जादू एवं विज्ञान में समानताएं

i. मालिनोव्स्की के अनुसार दोनों ही मानवीय आवश्यकताएं की पूर्ति का साधन है।
ii. दोनों में प्राकृतिक नियमों की उपस्थिति को स्वीकार किया गया है।
iii. दोनों में विशेष तकनीक का प्रयोग होता है और कार्य कारण के बीच संबंध प्रकट होता है।
iv. फ्रेजर के अनुसार दोनों साधारण: एक ही हैं। अंतर कार्य-कारण का है। एक कार्य कारण कि गलत धारणा पर आधारित है और एक सही है।
v. फ्रेजर जादू को प्राकृतिक नियमों की अवध प्रगति और भ्रामक व्यवहार निर्देशक मानते हैं। इसलिए यह जादू को विज्ञान की अवध बहन मानते हैं।
vi. दोनों में भविष्यवाणी करने की क्षमता होती है।
vii. विज्ञान की तरह, जादू का मानव की जरूरत और सहज ज्ञान से संबंधित एक विशिष्ट उद्देश्य है। दोनों नियमों की एक प्रगति द्वारा शासित होते हैं, जो निर्धारित करते हैं कि एक निघट कार्य को प्रभावी ढंग से बैठे किया जा सकता है।
viii. विज्ञान और जादू में कुछ गतिविधियों को करने की तकनीक विकसित करते हैं। इन समानिताओं के आधार पर, मालिनोवस्की ने जादू को चर्चा विज्ञान कहा।

3.1.19 जादू एवं विज्ञान में अंतर

i. विज्ञान तथ्यों पर आधारित है जबकि जादू विममय, प्रत्याशा और अनिश्चय पर आधारित है।
ii. जादू का संबंध आदिम समाज से है और धर्म का आधुनिक समाज से।
iii. मालिनोवस्की ने धर्म और जादू को पशु और विज्ञान को अपवित्र माना है।
iv. विज्ञान, जैसा कि आविति के आदिम ज्ञान में परिलक्षित होता है, रोजमर्रा की जिंदगी के सामान्य अनुभव से संबंधित है। यह प्रकृति के साथ उनकी बातचीत पर, अवलोकन और कारण पर आधारित है। दूसरी ओर जादू, तनावपूर्ण भावनात्मक स्थितियों के विशेष अनुभव में स्थापित है। इन स्थितियों का अवलोकन नहीं बल्कि किसी का स्थव्र का अनुभव महत्वपूर्ण है। यह मानव जीव पर भावनाओं का नाटक है।
v. विज्ञान का आधार अनुभव, प्रयास और कारण की वैधता में दूःस्वरूप विधास है। लेकिन जादू इस विधास पर आधारित है कि कोई अभी भी जिन्होंने आधार पे उम्मीद और इच्छा पूरी कर सकता है।
vii. तर्कसंगत ज्ञान का कोष सामाजिक सेटिंग और कुछ प्रकार की गतिविधियों में शामिल है, जो सामाजिक सेटिंग, और जादू ज्ञान से संबंधित गतिविधियों से स्पष्ट रूप से अलग है।

इन मतभेदों के आधार पर, मालिनोवस्की का निष्कर्ष है कि विज्ञान अपवित्र क्षेत्र के अंतर्गत आता है जबकि जादू पवित्र क्षेत्र के आधे हिस्से में समाहित है।

3.1.20 फ्रेजर के अनुसार जादू, विज्ञान और धर्म

फ्रेजर के कार्य मुख्य रूप से जादू की समस्या और विज्ञान और धर्म से इसके संबंध से संबंधित है। इनमें पोटिंप और प्रज्ञान संक्षमता के दोष भी शामिल हैं। फ्रेजर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ‘गॉल्डन बॉ’ में यह बताते हैं कि आत्मवाद के अलावा, आदिम धर्म की कई और मान्यताएं हैं और आत्मवाद को आदिम संक्षिप्त में एक वर्चस्ववादी विश्वास के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है। फ्रेजर के अनुसार, दिन-ब-दिन अस्तित्व
के लिए प्रकृति को नियंत्रित करने के प्रयासों ने शुरुआती लोगों को जादू प्रथाओं का सहारा लेने के लिए प्रेरित किया। यह जादू संस्कारों और मंगों की अक्षमता का पता लगाने के बाद ही है कि प्रारंभिक मनुष्य रासों, पूर्वजों-आरामों और देवताओं की तरह उच्च अलोकिक होने की अपील करने के लिए प्रेरित हुए होंगे। फ्रेजर धर्म और जादू के बीच एक स्पष्ट अंतर खींचते है। प्रकृति को नियंत्रित करने के लिए, श्रेष्ठ शक्तियों का प्रचार धर्म है जबकि मंग और संस्कार के माध्यम से प्रत्येक नियंत्रण फ्रेजर कहते हैं कि जादू प्रथाओं का मतलब है कि आदमी को सीधे प्रकृति को नियंत्रित करने का विश्वास है। यह रूपक वैज्ञानिक प्रक्रियाओं के लिए जादू संस्कार का नाम है। इसके अलावा, फ्रेजर का तर्क है कि धर्म, सीधे तौर पर प्रकृति को नियंत्रित करने में उनकी अक्षमता को स्वीकार करता है और इस तरह से धर्म मनुष्य को जादू से ऊपर ले जाता है। यही नहीं, वह इस बात को बनाए रखता है कि धर्म विज्ञान के साथ-साथ मौजूद है।

फ्रेजर के ये विचार कई यूरोपीय विद्वानों जैसे जर्मनी में प्रेयूस, इंग्लैंड में मोर्ट, प्रांस में हूबर्ट और मास के लिए शुरुआती आधार थे। इन विद्वानों ने फ्रेजर की आलोचना की और बताया कि विज्ञान और जादू एक जैसे प्रतीत हो सकते हैं लेकिन वे एक दूसरे से काफी अलग हैं। उदाहरण के लिए, विज्ञान कारण पर आधारित है और टिप्पणियों और प्रयोगों के आधार पर विकसित होता है जबकि जादू परंपरा से पैदा होता है और रहस्यवाद से पिया होता है। यह टिप्पणियों और प्रयोगों द्वारा सत्यापित नहीं किया जा सकता है। दूसरे, वैज्ञानिक जान किसी के लिए भी खुला है जो इसे सीखना चाहते हैं जबकि जादू सूत्र गम्बर रखते हैं और केवल कुछ गमन-चुने लोगों को ही पढ़ाया जाता है। तीसरा, विज्ञान का आधार प्रकृतिक शक्तियों के विचार में है, जबकि जादू एक रहस्यमय शक्ति के विचार से उत्पन्न होता है, जिसे अलग-अलग आविष्कारी समाजों में अलग-अलग नाम दिया गया है। मेलानियन इसे ‘मना’ कहते हैं, कुछ ऑस्ट्रेलियाई जनजातियां इसे ‘अंगुइस्था’ कहती हैं, कई अमेरिकी भारतीय समूह इसे ‘बकान’, ‘ऑरिड’, ‘मैनिटू’ के नाम से जानते हैं। तो, इस तरह के अलोकिक बल में विज्ञान को पूर्व-आयामी धर्म के सार के रूप में स्थापित किया गया है और इसे विज्ञान से पूरी तरह से अलग दिखाया गया है।

जिस तरह मालिनोव्स्की ने जादू की तुलना विज्ञान से की है, वे जादू और धर्म के बीच के संबंध को भी दर्शाते हैं उनके अनुसार दोनों के बीच समानताएं इस प्रकार हैं।

3.1.21 जादू और धर्म में समानताएं

i. जादू और धर्म दोनों ‘पिवत्र’ के हैं और भावनात्मक तनाव के बीच पैदा होते हैं और कार्य करते हैं।

ii. दोनों घटनाएं भावनात्मक तनाव से बचकर निकलती हैं, जो आदिम लोगों की श्रेणी के तर्कसंगत जान के आधार पर दूसरे नहीं किया जा सकता है।

iii. पौराणिक परंपराएं जादू और धर्म दोनों को समाहित करती हैं। दोनों क्षेत्रों में जुड़े टैबू और प्रथाएं उन्हें ‘अपिवत्र’ के कार्यक्षेत्र से अलग करती हैं।
iv. दोनों का संबंध अतिमानवीय शक्तियों से है।
v. दोनों में परंपरागत ज्ञान पाया जाता है।
vi. दोनों को संपन करने हेतु विशेषज्ञ होते हैं।
vii. जादू एवं धर्म का उद्देश्य मानविक तनाव व उद्देश्यों की शक्ति से मुक्ति दिलाना है।
viii. मल्लनोव्स्की के अनुसार धर्म भावनात्मक आवश्यकताओं से उत्पन्न होते हैं।
ix. दोनों क्षेत्र की उपज है।

3.1.22 जादू और धर्म में विभिन्नताएँ

धर्म और जादू के अंतर को देखे तो, हम पाते हैं कि विभिन्नताएँ, निम्नलिखित क्षेत्रों में है।
i. जादू के क्रूर एक सामय के लिए एक साधन है, जिसका उद्देश्य पालन करना चाहिए। धार्मिक क्रूर आत्म-निहित कार्य हैं और आत्म-पूर्ति में प्रदर्शन किए जाते हैं।
ii. जादू की कला में एक स्पष्ट रूप से विचित्र और सीमित तकनीक है, जिसमें जादू, संस्कार और जादूगर मुख्य तत्व हैं। धर्म के पास ऐसी कोई सरल तकनीक नहीं है। इसके कई पहलू और उद्देश्य और इसके तर्क अपने विषय और व्यवहार के कार्य में निहित हैं।
iii. जादू के विषय एक विशेष वर्तनी के आधार पर कुछ परिणामों को लाने के लिए किसी शक्ति में विविधता है। दूसरी ओर, धर्म अलोकिक शक्तियों की एक पूरी श्रृंखला है।
iv. धर्म में पौराणिक परंपरा जटिल, रचनात्मक और विषय के सिद्धांतों पर केंद्रित है। जादू में, शुद्धआत्म एवं पौराणिक कथाएँ का आत्मशार्य वर्णन है।
v. जादू के विषयों के लिए सीमित है। यह पीढ़ी से पीढ़ी तक एक शमन से दूसरे तक को सीधे दिखाया जाता है। धर्म में हर कोई दीक्षा के माध्यम से एक संक्रिय भाग लेता है, उदाहरण के लिए अनुदाय के प्रत्येक सदस्य को शामिल होना होता है। धर्म में आध्यात्मिक माध्यम की एक विशेष भूमिका है। लेकिन यह एक पेशेवर भूमिका नहीं है क्योंकि इसे विशेष भूमिका नहीं करता है।
vi. जादू में हमारे पास सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार होते हैं। क्योंकि जादू प्रत्यक्ष परंपराओं के संदर्भ में व्यवहारिक निहित करता है जो सकारात्मक और नकारात्मक जादू के बीच महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जबकि धर्म का केवल सकारात्मक प्रकार ही है।
vii. जादू में अलोकिक शक्ति को अधीन करने का प्रयास किया जाता है जबकि धर्म में अधीनता स्वीकार की जाती है।
viii. जादू में धर्म की पवित्र और जादू को अपवित्र माना।
ix. धर्म में व्यक्ति अलोकिक शक्ति से दर्शा है जबकि जादू में वह अलोकिक शक्ति को वश में करने का दावा करता है।
x. धर्म समाजिक तत्त्व है जबकि जादू व्यक्तिगत तथ्य है।

xi. जादू वैज्ञानिक है तथा इसमें कार्य कारण है, परंतु धर्म वैज्ञानिक नहीं है इसलिए इसमें कार्य कारण भी नहीं है।

xii. बोहानन के अनुसार ‘जादू विज्ञ के अन्य विद्वान व्रत है, जबकि धर्म किसी देवता के रूप में व्यक्तिगत रूप में पाया जाता है।

xiii. मलिनोस्की के अनुसार जादू का उद्देश्य स्पष्ट एवं निष्ठुर है जबकि धर्म का उद्देश्य स्पष्ट वह निष्ठुर नहीं है।

3.1.23 जादू, विज्ञान और धर्म का प्रकार

आदिम ज्ञान का कार्य आदिवासियों को उनके परिवेश से परिचित कराना और उनके प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने में सक्षम बनाना है। यह उन्हें दुनिया की सभी जीवित प्रजातियों से अलग करता है।

धर्म का कार्य मानसिक दृष्टिकोण स्थापित करता है, उदाहरण के लिए, परंपरा का सम्मान, प्रकृति के साथ समायोजन, साहस और अस्तित्व के लिए संयंत्र में और मृत्यु की स्थिति में आत्मविश्वास बनाना रखना। जादू का कार्य आदिम लोगों को उनके जीवित रहने के दिन-प्रतिदिन के कार्य में आने वाली कठिनाइयों से व्यावहारिक तरीके से आपूर्ति करना है। यह उन्हें अपरिहार्य समस्याओं के बावजूद जीवन के साथ ले जाने की क्षमता प्रदान करता है। इस तरह, मलिनोस्की (1948: 9) का तर्क है, 'जादू का कार्य मनुष्य के आशावाद का अनुभव करना है, जिससे डर पर आशा की जीत में उसका विश्वास बढ़े।'

3.1.24 टोटम

आदिवासियों में यह मानता है कि टोटम में अतौत्तकी शक्ति का निवास होता है, जो उनके सामाजिक जीवन को निर्देशित करती है। वस्तु: पेड़, पौधे, पशु, सजीव, निर्जीव वस्तु हो सकती है। इसके प्रति समूह के लोगों की विशेष आस्था होती है तथा जिसे पवित्र समझा जाता है और उसे किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाने की मनाही होती है।

टोटमवाद शब्द एक व्यापक अर्थ में मान्यताओं के समुच्चय को दर्शाता है जो एक एकल व्यक्ति को एक मानव समूह से जोड़ने के प्रतिक के रूप में कार्य करता है। यह प्रतिक एक जानवर, पीपी, पेड़ पहाड़, पक्षी के बीच रिश्तेदारी को दर्शाता है। इस रिश्ते का तात्पर्य अनुष्ठानों और वर्जनाओं को एक श्रृंखला से है, विशेष रूप से आधारभूत और यौन संबंध, जो उन लोगों को बांधते हैं और जो खुद को एक ही गणितज्ञ के सदस्यों के रूप में पहचानते हैं। सर्वप्रथम यह शब्द totem के रूप में लोग totem के रूप में, 1791 में अंग्रेजी यात्री लॆ. लॉन्ग द्वारा पूर्वी अमरीका में ओजीबवा के एलगिनविवृत्तीयों द्वारा रिश्तेदारी और पौधों और जानवरों की पूजा की कड़ी को नामित करने के लिए इस्तेमाल किया गया था। यद्यपि इस शब्द को गण टोटम
के रूप में संदर्भित किया जाता है, लॉग्न ने इसका उपयोग व्यक्तिगत गणचिन्ह का वर्णन करने के लिए किया, अर्थात्, किसी व्यक्ति और एक जानवर (शायद ही कोई पीढ़ी) के बीच एक व्यक्तिगत संबंध के अस्तित्व में विवास, जिसे आत्मा का एक संरक्षक माना जाता है।

मानवविज्ञान में, उनीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में गणचिन्ह की धारणा की स्वीकृति शुरू हुई और बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में कम हो गई। इस अवधि के दौरान विद्वानों ने विशेष रूप से गणचिन्ह के धार्मिक पहलुओं पर अपना ध्यान केंद्रित किया, और उन्होंने इसे मुख्य रूप से पूजा के सबसे पुरातन रूपों में से एक माना। इसलिए कल्पना की गई थी, गणचिन्ह के विचार ने व्यापक प्रसिद्ध हस्तियों की और विभिन्न विषयों द्वारा इसका विवेशण किया गया। मानववादीय बास में इसकी शुरुआत मैकलनेयन से हुई, जिन्होंने जोर देकर कहा कि कैसे तीन तल्यां द्वारा टोटेमवाद को प्रदर्शित किया गया: वृद्धपती, बहिष्करण और मातृसामक जंतु। इस पहलुओं के लिए सामूह बांध की कुछ अनुप्राणिक घटनाओं को छोड़कर, पौधों या जानवर बाद में नदियाँ को जोड़े के टोटेम के रूप में माना जाता है।

जहां एक और गणचिन्ह के विषय में मानवविज्ञानी संबंधी आंकड़ों की वृद्धि ने विभिन्न लेखकों द्वारा सुझाए गए महान उद्विकासवादी संश्लेषणों में उनके समक्ष का बढ़ावा दिया, वहीं दूसरी ओर यह पहले से ही उनके अधिक्रम को झुलाता रहा है। ज्ञात मानवविज्ञानी आंकड़ों का पहला महत्वपूर्ण तुलनात्मक वर्णन क्रेजर द्वारा ‘टोटेिमिज्म और एक्सोगामी’ (1910) में दिया गया, जिसमें तीन अलग-अलग परिकल्पनाएं जो टोटेम की उपस्थिति से संबंधित हैं, का सुझाव दिया गया है। पहली परिकल्पना में कहा गया है कि टोटेम का पहला रूप एक व्यक्ति है, जिसमें यह विचार शामिल है कि जानवरों और पौधों में एक बाहरी आमा निवास करते हैं। दूसरी परिकल्पना टोटेम के जादुई पहलू पर जोर देती है, विशेष रूप से इसके आउटलाइनेज संकरण में व्यक्त की गई है। तीसरी परिकल्पना आदिम मानवों की कामकाज और गर्भाधान के बीच एक बंधन के अस्तित्व के बारे में गलतफहमी पर जोर देती है, जिसके परिणामस्वरूप यह विचार है कि बाद वाला जानवर या वनस्पति आत्मा के कार्यों पर निर्भर हो सकता है।

फ्रेजर के सामाजिक कार्यों में एक नया सोच के विशेष, विशेष रूप से पतिकिमी आधुनिक तरकारिता पर जोर देने के उद्देश्य से टोटेम से संबंधित एक हान विध्वसनियां आंकड़े की व्यक्ति है। इस व्यक्तिकोण का एक परिणाम मानवविज्ञानी आंकड़ों में बीज्जुविध विचित्र प्रकार के मतभेदों को छिपाना था। इस विषय में विद्वानों को यह समझने में सक्षम किया कि कैसे टोटेमिज्म घटनाओं की विविधता को एक एकल टाइपोलॉजी में बढ़ाया जा सकता है। अन्य विद्वानों द्वारा किए गए शोध ने उन्हें बहुत अलग घटनाओं की पहचान करने में सक्षम बनाया, और जब समानता दुर्लभ थी, तो वैज्ञानिक परिकल्पना तैयार करना आसान नहीं था। उपमाओं को अधिक सावित्री के साथ, और ऐतिहासिक और भौगोलिक निरंतरता और असंगठि के विचार के साथ
दूर िशा िनदे

शालय,
महा मा
गांधी अंतररा ी
य िहंदी िव व
िवालय
एम.
ए
समाजशा

ितीय सेमे ट
र
–
सामािजक मानविवान

सुझाव िदया जाने लगा। नतीजतन, टोटेम की धारणा के प्रसार, इसके प्रमुख गिरावट के साथ मेल खताती है।

जिस वर्ष में फ्रेजर के स्मारकीय कार्य किया, एक अन्य लेखक, गोल्डनवेल्जर (1910) ने जोर देकर कहा कि

इस तरह के अलग-अलग ऑफिस को कुलों द्वारा सामाजिक संगठनों के रूप में शामिल करना भ्रामक था,

पीठों और जानवरों के नाम से चिनित करना, और अंत में यह विवाह करना एक ही स्थान के जनजाती के

सदस्यों और एक पीठों या जानवर के बीच एक वास्तविक या रहस्यमय संबंध है। ये सभी घटनाएं हमेशा
समान रूप से मौजूद नहीं थी। इसके अलावा, कई मामलों में यह एक दूसरे से स्वतंत्र भी थे।

टोटेमबाद की समस्या को उद्विकासवादी दृष्टिकोण ने तुलनात्मक पद्धति के आवश्यक रूप से

निर्भरत नहीं किया। यह मानना पर्याप्त था कि टोटेम धर्म के सबसे पुरातन रूपों में से एक हो सकता है। इस

प्रकार दुखीं (1912) केवल ऑस्ट्रेलियाई टोटेम में रूचि रखते थे, जो उन्होंने इसके सबसे पुरातन रूप होने
का दावा किया था। दुखीं के अनुसार टोटेम स्वयं समाज का मुख्य प्रतीक है। इस तरह से उनके टोटेम का

विषेश धर्म और सामाज के बीच के अटूट संबंध का एक उदाहरण है। दुखीं का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

फिरने दृष्टिकोण का एक विकल्प था जिसमें संस्थानों और धार्मिक घटनाओं के निर्माण से संबंधित एक

मनोवैज्ञानिक स्पर्शकरण मौजूद था। इस नए दृष्टिकोण द्वारा पेश की गई बातें स्पष्ट थी। सामाजिक घटनाओं

को समाज द्वारा ही समझा गया था और न कि आदित सोच के बारे में अधिक या कम कल्पनात्मक

अनुमानों द्वारा।

दुखीं ने ऑस्ट्रेलिया की अरुणा जनजाति के अध्ययन के दौरान पवित्र तथा अपवित्र को समझने के

लिए टोटेम का सहारा लिया। दुखीं के अनुसार टोटमबाद ही समस्त धर्मों का प्रारंभिक स्तर रहा है।

दुखीं में टोटेम की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया

• प्रथम जनजाति का एक टोटम होता है जिसके साथ सभी सदस्य अपना पवित्र संबंध मानते हैं।
• जनजाति के सदस्यों का विवाह है कि संकट के समय टोटम उनकी रक्षा करेगा।
• टोटम पवित्र है उसे हानि पहुंचाना पाप है।
• टोटम के बिन्दु पर में लगाए जाते हैं तथा शरीर पर गुदाए जाते हैं।
• टोटम संबंधी नियमों के उल्लंघन पर सामाजिक निंदा की जाती है।
• टोटम सामूहिक प्रतिनिधित्व का प्रतीक है।
• टोटम बाहरबाहरी होता है।

हालाँकि दुखीं की दलीलें सबसे ही तीखी थीं, लेकिन टोटेम के अध्ययन के लिए मनोवैज्ञानिक

दृष्टिकोण ने मनोविश्लेषण के पिता, लिंगमंड्र फ्रायड से एक नया मोड़ दिया। अपने काम टोटेम अंड टेबू

(1912) में, फ्रायड ने टोटेमिज्म, एलिमेटरी और सेक्सुअल और ओडिपस कॉम्प्लेक्स से संबंधित दो प्रमुख
दूर िशा िनदे
शालय,
महा मा
गांधी अंतररा
य िहंदी िव व
िवालय
एम.
ए
समाजशा
ितीय सेमे
ट
र–
सामािजक मानविवान
Pag
e
152
िनषेध के बीच एक समानता थािपत करने कोिशश की। डािवन के परिक्षण के पश्चात मानवविज्ञान संबंधी आंकड़ों को कम करने आंका गया था, जो तथाकथित आदिम समाज के प्रायोजनशील अस्तित्व के विषय में था। फ्रायड के विष्णुक्षण को एक सामाजिक परिदृश्य माना जाता है, जिसमें अन्य तक एक प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं है। पूरे समूह को एक ही व्यक्ति, पिता, द्वारा निरंकुश तरीके से गायन किया जाता है, जो अपनी प्रवृत्ति को निर्धारित करने में असमर्थ है। यह निरंकुश पिता एकमात्र ऐसा व्यक्ति होने का दावा करता है जिसकी समूह की महिलाओं तक पहुंच है। इस तरह की असहयोगी स्थिति ने उनके खिलाफ बेरों के हिंसक विद्रोह को जन्म दिया। सबसे कम उम्र के पुरुषों ने निरंकुश पिता को मार डाला, और फिर उन्हें पछतावा होने लगा। अपराध के लिए अपराध की भावना ने बेरों को एक प्रतिकारक आकृति, एक कुलीन प्रजाति के साथ पिता का स्थान दिया। इसी समय, समूह की महिलाओं के साथ यौन संबंधों का निषेध, जो पहले उनके निरंकुश पिता द्वारा निर्धारित किया गया था, अनायास उनके द्वारा मनाया जाने लगा। यह टोटेम के रूप में प्रकट होने का कारण भी होगा।

हालांकि दुर्भाग्य से यह सामने आई गई दलितों के विरोध में, फ्रायड द्वारा रचित टोटेम की यह विशुद्ध मनोवैज्ञानिक व्याख्या कुछ हद तक समान है व्यथित कि दोनों लेखक सांस्कृतिक तथ्यों के उद्विकासवादी और सार्वभौमिक दृष्टिकोण को साझा करते हैं। टोटेम की धारणा में रूचि का नुकसान तभी शुरू हुआ जब विश्लेषण के उद्विकासवादी परिप्रेक्ष्य को छोड़ दिया गया। जब तक इसे वैध नहीं माना जाता था, तब तक मानवतावाद में रूचि को इसके सार्वभौमिक पहलू द्वारा विशेषज्ञ किया गया था, जिसे मानव विकास के एक विशेष चरण को व्यक्त करने के रूप में माना जाता है। तथ्य यह है कि टोटेम के एक विशेष और अनुभवजन्य रूप में किसी भी लक्षण को शामिल नहीं किया जा सकता है जिसे टोटेम संस्था का एक अभिन अंग माना जाता है। किसी भी मामले में, वे आवश्यक रूप से सांस्कृतिक विकास के एक अलग चरण में मौजूद थे। इस तरह मानवविज्ञानी साधन को अपनी स्थानीय प्रासंगिकता के लिए इतना महत्वपूर्ण नहीं माना जाता था जितना कि सार्वभौमिक साधन को माना जाता है।

जबकि एल्ल्मन आंतिम लेखकों में से एक थे, वह माना कि मानवविज्ञानी विश्लेषण अभी भी टोटेम की अधिक सामान्यीकृत व्याख्या की दिशा में विकसित किया जा सकता है। वैन गेनप (1920) वह पहचानने वाले पहले लेखकों में थे जिसकी सार्वभौमिक सांस्कृतिक नहीं माना जा सकता है। टोटेमवाद की सार्वभौमिकता की कमी को कुछ अमेरिकी मानवविज्ञानी ने फिर से स्वीकार किया था। सांस्कृतिक तथ्यों के विश्लेषण के ऐतिहासिक और सापेक्षवादी तरीकों ने संयुक्त राष्ट्र में विशेष स्थान हासिल किया। बोआस, लोवी, और क्रॉबर जैसे लेखक मानवविज्ञानी आंकड़ों की विविधता पर जोर देने के लिए बहुत कार्य किया। मालिनोव्स्की और रेडिलफ ब्राउन जैसे ब्रिटिश प्रकारवादी लगभग समान दिशा में चले। बाद के काम में विशेष रूप से सबसे पुरातन समाजों की प्रवृत्ति, जानवरों और पीठों की समूह की भलाई सुनिश्चित करने में सक्षम पूजा की वस्तुओं में बदलने से संबंधित महत्वपूर्ण सुझाव आए।

दूर िशा िनदे
शालय,
महा मा
गांधी अंतररा
य िहंदी िव व
िवालय
एम.
ए
समाजशा
ितीय सेमे
ट
र–
सामािजक मानविवान
Pg
टोटेमवाद की धारणा के विषय की ओर एक महत्वपूर्ण मोड़ लेखी स्ट्रॉस की प्रसिद्ध पुस्तक, Le Tote same aujourd’hui (Totemism Today) (1962) के प्रकाशन द्वारा दर्शाया गया है, जिसमें लेखक "टोटेमिक श्रम" की बात करता है। टोटेम को धर्म के एक आदिम रूप के अनुरूप नहीं बल्कि अत्यधिक बात करते हैं, अपितु इसे विभिन्न प्रजातियों को क्षेत्रात्मक करने के लिए एक व्यापक मानव प्रवृति के रूप में समझा जाना चाहिए। लेखी स्ट्रॉस के अनुसार, टोटेम को एक मानव समूह और एक प्रजाति के बीच संबंध द्वारा इतना अधिक नहीं दर्शाया जाना चाहिए, लेकिन इसका उपयोग विभिन्न मानव समूहों के बीच की विभिन्नता दर्शाने के लिए किया जाना चाहिए। इस प्रकार टोटेम का विश्लेषण, प्राकृतिक दुनिया से ली गई उपमाओं का उपयोग करके मानव समूहों के बीच के अंतर को दर्शाने में सक्षम होगा। टोटेमवाद को केवल इस आधार पर समझा जा सकता है कि मतभेदों की पूरी प्रणाली, एकल तत्वों की तुलना नहीं की जाती है। टोटेमवाद के माध्यम से, मानव समूहों के बीच संबंधों और मतभेदों को जानने और पौधों की प्रजातियों के बीच अंतर के साथ उपमाओं द्वारा परिकल्पित किया जा सकता है। लेखी स्ट्रॉस के अनुसार, यह टोटेमवाद का सबसे महत्वपूर्ण पहलू होगा। वह इस कथन के माध्यम से अपनी राय का समर्थन करते हैं कि टोटेम प्रजातियों सोच के लिए उपयोगी हैं और खाने के लिए नहीं।

3.1.25 टोटेम की परिभाषाएँ

- दुखिम के अनुसार टोटेम, धर्म की उपत्यका का आधार है।
- रेडक्लिफ ब्राउन के अनुसार - टोटेम समाज में श्रम का अनुभव प्राप्त है।
- फोर्सेस के अनुसार टोटेम कुल पूर्वजों की शक्ति का उपयोग करता है।
- फ्रायड ने टोटेम और उससे संबंधित सिद्धांत की उपयोगी ओडियस कांप्लेक्स से मानी है।
3.1.26 टोटम के प्रकार
पिङ्गटन के अनुसार टोटम के निम्नलिखित प्रकार होते हैं

![Diagram of Totem Types]

3.1.27 सारांश (Summary)
इस इकाई में आप ने पढ़ा की आदिम विज्ञान का कार्य आदिवासियों को उनके परिवेश से परिचित कराना और उन्हें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने में सक्षम बनाना है। यह उन्हें दुनिया की सभी जीवित प्रजातियों से अलग करता है। धर्म का कार्य मानसिक दृष्टिकोण स्थापित करता है, उदाहरण के लिए, परंपरा का समाज, प्रकृति के साथ समायोजन, साहस और असंतत्त्व के लिए संघर्ष में और मृत्यु की स्थिति में आत्मविश्वास बनाए रखना। जादू का कार्य आदिम लोगों को उनके जीवित रहने के दिन-प्रतिदिन के कार्य में आने वाली कठिनाइयों से व्यवहारिक तरीके से आपूर्ति करता है। यह उन्हें अपरिहार्य समस्याओं के बावजूद जीवन के साथ ले जाने की क्षमता प्रदान करता है। आदिवासियों में यह मान्यता है कि टोटम में अलीक्षण शक्ति का निवास होता है, जो उनके समाजिक जीवन को नियंत्रित करती है। इसके प्रति समूह के लोगों की विशेष आस्था होती है तथा जिसे पवित्र समझा जाता है और उसे किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाने की मनहीं होती है।
3.1.28 बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. “धर्म आध्यात्मिक शक्ति में विश्वास है” धर्म की उक्त परिभाषा किस मानववादियों द्वारा दी गयी?
   (क) मैक्स मूलर (ख) दुर्वाम (ग) टाइलर (घ) मेरिट
2. धर्म की उत्पत्ति के संबंध में आत्मावाद या जिववाद का सिद्धांत किसने दिया?
   (क) क्रेजर (ख) टाइलर (ग) दुर्वाम (घ) मेरिट
3. बौद्धवाद की अवधारणा किस मानववादियों द्वारा दी गयी?
   (क) मजूमदार (ख) क्रेजर (ग) मैलनोवक (घ) मैस मूलर
4. “स्वयं का सामाजिक एक महिमा मंडित समाज है” किसने कहा?
   (क) टाइलर (ख) मैक्स मूलर (ग) क्रेजर (घ) दुर्वाम
5. जादू को सफ़े द जादू तथा काला जादू में किसने विभाजित किया?
   (क) मजूमदार (ख) क्रेजर (ग) मैलनोवक (घ) मैस मूलर

उत्तर- 1. (ग) टाइलर, 2. (ख) टाइलर, 3. (क) मजूमदार, 4. (घ) दुर्वाम, 5. (ग) मैलनोवकी

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. धर्म की उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धांतों और धर्म के प्रकार की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. जादू क्या है? जादू के प्रकार, विशेषताएं और क्रियाओं के तत्वों को स्पष्ट कीजिए।
3. जादू के परिभाषित करें जादू की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
4. जादू एवं विज्ञान की समानताओं को स्पष्ट कीजिए।
5. धर्म को परिभाषित करें हाँ धर्म की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. धर्म क्या है? इसकी विशेषताएं और आवश्यक तत्व क्या हैं?
2. विज्ञान क्या है? जादू विज्ञान और धर्म के प्रकार क्या हैं?
3. जादू एवं विज्ञान में समानताएं एवं अंतर क्या हैं?
4. जादू एवं धर्म में समानताएं एवं अंतर क्या है?
5. टोटम क्या है इसके प्रकार कितने हैं?
3.1.29 संदर्भ ग्रंथ सूची


इकाई 2 वंश, गोत्र एवं भ्रातृदल
(Lineage, Clan and Phratry)

इकाई की रूपरेखा

5.2.0 उद्देश्य

5.2.1 प्रस्तावना (Introduction)

5.2.2 वंश (Lineage)

5.2.3 गोत्र (Clan)
  3.2.3.1 गोत्र की परिभाषाएँ
  3.2.3.2 गोत्र के लक्षण
  3.2.3.3 गोत्र के प्रकार
  3.2.3.4 गोत्र और टोटेम
  3.2.3.5 गोत्र के कार्य

3.2.4 भ्रातृदल (फेर्ट्री)

3.2.5 अण्डीश (Moiety)

3.2.6 वंश समूह का संयोजन

3.2.7 सारांश (Summary)

3.2.8 बोध प्रश्न

3.2.9 संदर्भ प्रश्न सूची

3.2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप यह जानने में सक्षम होंगे कि:

- वंश क्या होता है और उसकी विशेषताएं क्या होती हैं?
- गोत्र क्या है? गोत्र के लक्षण, प्रकार और कार्य क्या हैं?
- भ्रातृदल का क्या अर्थ है?
3.2.1 प्रस्तावना (Introduction)

परवार समूह (kin groups) के सामाजिक इकायों हैं जिनकी सदस्यता का पता लगाया जा सकता है और जिनकी गायत्रिकी को देखा जा सकता है। विभिन्न समाजों में विभिन्न प्रकार के परवार समूह होते हैं। ये परवार समूह हो सकते हैं जैसे नामिक परवार, वित्तिक परवार जिसमें संयुक्त परवार या वंश समूह (descent) समाविष्ट हों। नामिक परवार एक ऐसा परवार समूह है जिसमें एक वित्तिक जोड़े और उनके अंतर्वित्तिक बच्चे शामिल हैं। लेकिन परवार के कई और प्रकार हैं उदाहरण के लिए, वित्तिक परवार, संयुक्त परवार। इसके अलावा, गैर-वैदिक समाजों के बीच वंश समूह एकमध्यपूर्ण और बुनियादी परवार समूह है। वह एक सामाजिक समूह है जिसके सदस्य सामाय वंशावली का दावा करते हैं।

परवारों के विपरीत, वंश समूहों में पीढ़ियों के माध्यम से निरंतरता रहती है। भले ही इसकी सदस्यता जन्म और मृत्यु, अंदर जाने और बाहर निकलने के कारण बदलती रहती है, वंश समूह बने रहते हैं। इसकी सदस्यता जन्म के आधार पर नामाकृत है और जीवन भर रहती है। वंश समूह कई प्रकार के होते हैं, जैसे वंश, गोत्र और भातृदल (फ्रेम्बोर्ड और अद्भुत)। इस इकाई में हम इनमें अवधारणाओं पर चर्चा करेंगे - वंश, गोत्र और भातृदल (फ्रेम्बोर्ड और अद्भुत)।

3.2.2 वंश (Lineage)

एक वंश, एक ऐसा वंश समूह है जो अपने सामान्य वंश को ज्ञात पूर्वज से प्रदर्शित/ ज्ञात कर सकता है। एकल वंश मातृवंशीय या पितृवंशीय हो सकती है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वंश माता या पिता के माध्यम से पता लगाया जा रहा। मातृवंशीय में वंश का पता माँ के माध्यम से लगाया जाता है जबकि पितृवंशीय में वंश का पता, पिता के माध्यम से लगाया जाता है। वंश को अक्सर सामान्य पूर्वज या पूर्वज के नाम से निर्दिष्ट किया जाता है।

कुछ समाजों में यह एक गोत्र खंड के रूप में बंशावली में दर्शाता है। इवांस-प्रिवार्ड पूर्वी अफ़्रीकी नूआर जनजाति के बीच ऐसे समूहों का चार प्रकार का वर्णन करते हैं वह खण्डित वंश (segment lineage) कहते हैं। एक नूआर गोत्र, स्पिन्डल (agnates) का सबसे बड़ा समूह है जो एक सामान्य पूर्वज से उनके वंश का पता लगाता है और जिनके बीच विवाह निपटता है और यौन संबंध अनाचार माना जाता है। इस वंशावली संरचना के तहत, बंशावली के चार अंश हैं - अधिकतम, प्रमुख, अप्रमुख और न्यूनतम। यहाँ गोत्र A को अधिकतम वंश (lineages) B और C में प्रमुख वंश विभाजित किया गया है जो बाद में अप्रमुख वंश (lineage) D, E, F, और G में विभाजित होता है। अप्रमुख वंशावली D और E (lineage) H, I, J और K में विभाजित किया गया। आगे अप्रमुख वंश F और G न्यूनतम L, M, N और O में विभाजित हैं।
भारत के मणिपुर के मैतेई में भी कुछ हद तक नॉर्थ के समान तरीके से खराबत वंश (segment lineage) है। ती. आर. सिंह इसका वर्णन करते हैं। उदाहरण के लिए, मुटम वंश, निंगरोजा गोत्र का वंश है।

वंश के सदस्यों का मानना है कि वे खमलंग प्रमसाजा और अंगुबा नेंली लांखाबाव चानू से उतरे हैं। खमलंग पंसेबा राजा झुंगा (984-1074) का बेटा था और उसकी एक पत्नी जिसका नाम होरिमा निदागिनुभावी था।

मुटम, अधिकतम वंशावली में लगभग 34 प्रमुख वंश हैं, जैसे, लालहंबुंग चानू (लालहंबुंग में बसा हुआ)। यहां तक वंशावली (जिसका अर्थ है दाओ-निर्माता) आदि। ये प्रमुख मैतेई वंश आगे चलकर अप्रमुख वंश में विभाजित होते हैं, प्रत्येक का नाम पर अभिविन्यास के वंश और नए निवास स्थान का असर होता है। इसका एक उदाहरण खोंगमैन डागी खैबा मैतेई में बसने वाले मैतेई जो खोंगमैन तथा प्रमुख वंश से अलग हो गया है। कभी निम्न वंशावली में उप-विभाजन का प्रत्येक राजा के पर पहचाने जाने वाले खंड के नाम पर इस्तेमाल किया जाता है, जैसे कि मुटम नंबुल तथा बिरसिंह जिसका अर्थ है बिरसिंह की अप्रमुख वंशावली में मुटम नंबुल तथा समूह का खंड।

यूनतम वंश का सामाजिक संबंध होता है जब कोई इस इकाई के भीतर बेले होता है या मर जाता है। इस तरह, मैतेई के अतिरिक्त वंशावली खंडित हैं।

एक बचे के पास वंश के सदस्य होने के कारण संपत्ति का उत्तराधिकार प्राप्त करने का दावा होता है। प्रतिष्ठित पद के उपराधिकारी को निहित किया जा सकता है, यहां तक कि राजस्व का हकदार भी झाल किया जा सकता है। एक वंश के सदस्यों में अक्सर आवासीय एकता और निहित क्षेत्र होते हैं। ऐसे वंशावली को स्थानीय वंश समूह के रूप में वर्णित किया जाता है। मैतेई के बीच, स्थानीय लोगों को आमतौर पर प्रमुख वंश के नाम पर रखा जाता है, उदाहरण के लिए, वंश के बाद आदम - आदम, सोइबाम लीकाई वंश के नाम के बाद- सोइबाम, आदि।

<table>
<thead>
<tr>
<th>अविधकतम अंश</th>
<th>A</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>प्रमुख अंश</td>
<td>B</td>
</tr>
<tr>
<td>अप्रमुख अंश</td>
<td>D</td>
</tr>
<tr>
<td>न्यूनतम अंश</td>
<td>H</td>
</tr>
</tbody>
</table>

खराबत वंश (segment lineage)
3.2.3 गोत्र (Clan)

गोत्र समाज के संगठन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह रक्त संबंधों के आधार पर वंश का एक व्यापक रूप है। एक वंश का गठन माता या पिता के वंश के सभी रिश्तेदारों और वंश में पूर्वजों और पूर्वजों के सभी वंशों को शामिल करके किया जाता है। इस तरह कई वंशावली एक गोत्र/टोटेम का गठन करते हैं। वंश कुछ प्रमुख ग्रंथों, कथाओं या परिवार के पूर्वज की कल्पना से निकलता है। प्रमुख और समाजात्मक होने के नाते इस पूर्वज को इसके संस्थापक के रूप में स्वीकार किया जाता है।

परिवार के सभी वंशज के नाम एक उपनाम से शुरू किए जाते हैं। माता और पिता दोनों के वंश को मिलाकर एक गोत्र कभी नहीं बनता है। यह एकतरफा है। यह या तो मातृसामवेत्र या पितृसामवेत्र वंश का हो सकता है।

कई वंश, एक साथ एक गोत्र का गठन करते हैं। गोत्र के नाम विभिन्न आधारों पर आधारित हैं। यह एक संत, कुलदेवता, धर्म या स्थानान्तर नाम के आधार पर भी हो सकता है।

अलग-अलग स्थानों पर इसे अलग-अलग नाम से जानते हैं, विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका में कुछ मानवविज्ञानीयों ने मातृवंश समूहों को अलग करने के लिए 'क्लान' शब्द का उपयोग करते हैं, जिसमें वंश को मातृपक्ष में गिना जाता है। वह समूह जो पिता की ओर से वंशज की प्रतिपूर्ति करता है, वह gens कहलाता है। इसी प्रकार जिसे ब्रिटिश मानववादी क्लान कहते हैं उसे अमेरिकी मानववादी sib कहते हैं।

लूई ने sib शब्द को एक सामाजिक शब्द के रूप में चुना और इसे मां-भाई और पिता-भाई में विभेदित किया। हालांकि, शब्द 'गोत्र' को व्यापक रूप से उन व्यापक एकतरफारी समुच्छय के रूप में निरूपित करने के लिए भी उपयोग किया जाता है।

एक गोत्र परिवर्तन का एक समूह है, जिसके सदस्य खुद को मूल निवासी मानते हैं तथा सामाजिक पूर्वजों के वंशज मानते हैं। यह आमतौर पर एक गैर-कॉरपोरेट वंश समूह होता है, जिसका लिंक उस पूर्वज को भी नहीं पता होता है या वह पता लगाने योग्य नहीं होता है। पितृवंशीय वंश के साथ कुलों को पितृवंशीय गोत्र बाला कहा जाता है; मातृवंशीय वंश के साथ कुलों को मातृवंशीय गोत्र बाला कहा जाता है।

गोत्र की सदस्यता स्थानीयकृति के बजाय बिखरी हुई है और यह आमतौर पर मूर्त रूप से संपत्ति नहीं रखती है। यह आमतौर पर एक इकाई हो सकता है। गोत्र एकीकृत कायाँ को संभाल सकते हैं। जैसे वंशावली, वैवाहिक बहिष्करण को विनियमित कर सकते हैं। वे अपने स्थानिक समूहों के क्षेत्र में प्रवेश का अधिकार उसी गोत्र के व्यक्तियों को देते हैं जो अन्य क्षेत्रों में रहते हैं। आमतौर पर एक साथी के सदस्यों को संरक्षण और आत्मवान की उम्मीद की जाती है। हालांकि, जैसा कि दुनिया में गोत्र संगठन की एक महान विविधता है, कुछ समूहों में क्षेत्रीय रूप से गोत्र हैं। इस प्रकार के गोत्र के सदस्य एक विशेष क्षेत्र में फैल सकते हैं।
हैं और वे एक विशेष क्षेत्र तक ही सीमित रहते हैं। ओड़ीशा के कोरापुट के ओरल-गुड़ा, प्रादेशिक कुलों का एक विशिष्ट उदाहरण है।

3.2.3.1 गोत्र की परिभाषाएं

मजूमदार और मदान ने गोत्र को यह कहते हुए परिभाषित किया है कि, "एक गोत्र या टोटेम में अक्सर कुछ वंश और कुल का संयोजन होता है, जो अंततः एक पौराणिक पूर्वज से पता लगाया जा सकता है, जो एक मानव या मानव जैसा जीवन वा पौधा भी हो सकता है।

विलयम पी. स्कॉट लिखते हैं, गोत्र का तात्पर्य "एकवंशीय परिजन-समूह या तो मानवसमाज या पितृसमाजक वंश या पितृसमाजक वंश पर आधारित है।

अर. एन. शमा के अनुसार, "एक गोत्र एकवंशीय परजीवाणों का संग्रह है, जिनके सदस्य खुद को एक वास्तविक या पौराणिक पूर्वज के सामान्य वंशज मानते हैं।"

एक गोत्र मजबूत 'हम कि भावना ' पर आधारित है। टोटेम के मुख्य वातावरण का अधिकार स्वीकार किया जाता है। वह पूरी संपत्ति पर नियंत्रण रखता है और पुजारी के रूप में भी कार्य करता है। गोत्र/टोटेम एक वास्तविक समाज है।

3.2.3.2 गोत्र के लक्षण:

गोत्र के निम्नलिखित विशेषताएं इसकी पूर्व परिभाषाओं से स्पष्ट हैं:

1. बहिविवाह समूह: गोत्र एक बहिविवाह समूह है क्योंकि एक गोत्र के सभी सदस्य खुद को एक पूर्वज के वंशज मानते हैं। नवीनतम, वे अपने गोत्र के किसी सदस्य से शादी नहीं करते हैं। विवाह केवल एक ही गोत्र से किया जाता है।

2. सामान्य पूर्वज: गोत्र का संगठन एक सामान्य पूर्वज के गम्भीर में आधारित है। पूर्वज वास्तविक या पौराणिक हो सकते हैं।

3. एकवंशी: गोत्र की प्रकृति एकवंशी है। एक गोत्र में या तो माता की ओर से सभी परवारों का सम्बंध होता है या पिता की तरफ के सभी परवारों का।
3.2.3.3 गोत्र के प्रकार:

इसकी एकवंशीय प्रकृति के अनुसार, गोत्र दो प्रकार के हो सकते हैं:

1. मातृवंशीय गोत्र: इसमें एक महिला के सभी वंशों को एक गोत्र का सदस्य माना जाता है। वहीं महिला की बहनें और भाई भी इस गोत्र के सदस्य हैं। इस तरह एक मातृवंशीय गोत्र में महिला, उसकी संतान, उसकी बहनें और उनके बच्चे शामिल हैं। लेकिन इसमें भाइयों के बच्चे शामिल नहीं हैं।

2. पितृवंशीय गोत्र: इस गोत्र में आदमी को उसके बच्चे, उसके भाइयों और बहन और भाइयों के बच्चे को शामिल किया गया है लेकिन बहनों को नहीं।

विभिन्न आधारों के आधार पर गोत्र के अलग-अलग नाम हैं। उनमें से मुख्य आधार निम्नलिखित हैं:

1. संतों के नाम के बाद, उदाहरण के लिए, शांडिल्य, भारद्वाज, आदि।
2. कुलदेवता के नाम के बाद जैसे कुंजम, नागसोरी, आदि।
3. स्थानान्तरनामों के आधार पर जैसे कि कामार, जगत, आदि।
4. कुछ स्थलाकृति के आधार पर, उदाहरण के लिए महानिद्या, जौनपुर, आदि।

3.2.3.4 गोत्र और टोटेम

एक अन्य प्रकार का गोत्र संगठन वह है जो टोटेम के आधार पर आयोजित किया जाता है। Totem शब्द ओजीबवा इंडियन शब्द ototeman ओटोटेमेन से आया है, जिसका अर्थ है ‘मेरा एक रतेदार।’ गोल्डनवाइज़र ने उल्लेख किया कि टोटेम से जुड़े वंश टोटेमक पौधे या जानवर से वंश का पता लगा सकते हैं। टोटेमिक प्रजातियों की हत्या और / या भोजन करना वर्जित किया जा सकता है, लेकिन औपचारिक अवसरों पर इसका सेवन कर सकते हैं। एक टोटेमिक प्रजाति की मृत्यु पर शोक मनाया जा सकता है। टोटेम जनजाति के नाम टोटेम के आधार पर होते हैं। टोटेमिक कबीले उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका, अफ़्रीका, ओस्ट्रेलिया, मेलानेशिया और भारत में पाए जाते हैं। उत्तर अमेरिकी भारतीयों के बीच भालू टोटेम के सदस्यों का मानना है कि वे एक भालू और एक महिला कि संतान है, और भेड़िया टोटेम के सदस्यों का मानना है कि एक भेड़िया और एक महिला उनके पूर्वज थे। मध्य भारत में कमार का मानना है कि उनके पूर्वज एक बकरे और एक लड़की हैं।

स्टीफन फुक्स (1982) ने टोटेम को पूर्वजों के उद्धारकर्ता के रूप में टोटेमिक प्रजातियों के बारे में उल्लेख किया है। मध्य भारत के गोंड में एक बकरी का गोत्र होता है व्यापक उनके पूर्वजों ने पूर्वज के लिए एक बकरी चुराई थी; लेकिन वे चोरी करने की सजा से बच गए व्यापक कि बकरी एक सुअर में बदल गई।
और उसके बाद उन्होंने बकरी को अपना टोटेम मान लिया। मध्य भारत के कोरू में पेड़ टोटेम हैं, क्योंकि उनके पूर्वज अपने दुशमनों से खुद को बचाने के लिए विभिन्न पेड़ों के नीचे छिपते हैं। मध्य भारत के बालाही के पास सांप और उलू के टोटेम हैं; इन जानवरों ने अपने पूर्वजों को उस समय बचाया और संरक्षित किया जब दुर्घटना से वे असहाय शिशुओं के रूप में मौत में पीछे रह गए थे। जब कोई टोटेम/गोत्र आकार में बहुत बड़ा हो जाता है, तो इन्हें खिड़कियों जा सकता है और प्रत्येक खंड नए टोटेम के रूप में टोटेमिक प्रजातियों का एक हिस्सा प्राप्त कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक बाघ कबीला वग में विभाजित हो सकता है जो बाघ के पिता, पुत्र, पंजे, दांत आदि को उनके टोटेम के रूप में मानते हैं। यह एक पेड़ की अवधारणा का जन्म देता है, भाई कुलों का समूह। टोटेम को कभी-कभी कुछ उपनामों के नाम पर रखा जाता है और ऐसे कुलों को व्यवहार और अवधारणाओं में पाया जाता है। अमेरिका के क्रो-इंडियन जनजाति में भी अंतिम सामाजिक मानसिकीय उपविवाही कुलों में विभाजित किया गया है। इन इकाइयों को उपनामों के बाद नामित किया गया है।

gोत्र जनजाति में टोटेम के नाम से जाना जाता है, यह एक जनजाति का एक बहिष्कारी विभाजन है, जिसके सदस्यों को कुछ सामाजिक संबंधों द्वारा एक दूसरे से संबंधित माना जाता है। यह एक सामान्य टोटेम के कबजे या एक सामाजिक क्षेत्र के निवास स्थान से वंश में विभाजन हो सकता है। इस प्रकार, संक्रमण में, गोत्र एकतरफा परिवारों का संग्रह है, जिनके सदस्य खुद को वास्तविक या पौराणिक पूर्वजों के सामाजिक वंशज मानते हैं।

<table>
<thead>
<tr>
<th>क्र. सं.</th>
<th>गोत्र</th>
<th>टोटेम</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1.</td>
<td>यह जातियों में पाया जाता है</td>
<td>यह जनजातियों में पाया जाता है</td>
</tr>
<tr>
<td>2.</td>
<td>इसकी कई निद्रित भाषा नहीं है</td>
<td>इसकी निद्रित भाषा है</td>
</tr>
<tr>
<td>3.</td>
<td>भौगोलिक सीमाओं से बंधा नहीं है</td>
<td>भौगोलिक सीमाओं से बंधा है</td>
</tr>
<tr>
<td>4.</td>
<td>इसकी पुजा की जाती है</td>
<td>इसका संरक्षण एवं पुजा की जाती है</td>
</tr>
<tr>
<td>5.</td>
<td>गोत्र के वल ‘मानव’ ही हो सकता है, आमतौर पर कोई अंशि</td>
<td>टोटेम मानव, पहाड़, पहाड़िया, पशु, पक्षी, पीढ़ी हो सकते हैं</td>
</tr>
<tr>
<td>6.</td>
<td>विशेष उत्सवों में पूर्वज के रूप में इसको भोग लगाया जाता है</td>
<td>विशेष उत्सवों में भोजन के रूप में इसका सेव नहीं किया जाता है</td>
</tr>
</tbody>
</table>
3.2.3.5 गोत्र के प्रकारः
गोत्र के मुख्य प्रकार इस प्रकार हैं:
1. पारस्परिक सहायता और संस्कारः एक गोत्र के सदस्यों के पास एक सामान्य पूर्वज से वंश में उनके विशाल के कारण ‘हम जब भावना’ घमसूग’ करते हैं। वे न केवल एक दूसरे की सहायता करने के लिए तैयार हैं, बल्कि एक-दूसरे के लिए अपना जीवन व्यतीत करने के लिए भी तैयार हैं। जब टोटेम का एक सदस्य घायल हो जाता है तो सभी सदस्य अपना दर्द साज़ा करते हैं। उनमें से दो बातें प्रचलित हैं (i) “मेरे टोटेम भाई पर प्रहार करो मतलब आप मुझ पर प्रहार करो” और (ii) “टोटेम का खून मेरा खून है।”
2. सदस्यों पर प्रतिबंधः असामाजिक कृत्यों में लिस व्यक्तियों को गोत्र/टोटेम से प्रतिपिप्त किया जाता है।
इस तरह से, गोत्र/टोटेम के सदस्यों के आचरण को प्रतिपिप्त किया जाता है। सदस्यों के लिए मृत्युदंड की तुलना में गोत्र/टोटेम से प्रतिपिप्त अधिक प्रभावी और विनाशकारी है।
3. कानूनी प्रकारः यह बदमाश को दंडित करने और इस तरह से शांति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए गोत्र/टोटेम का सार्वभौमिक कानूनी कार्य है।
4. बहिष्करित्वारः बहिष्कार के कानून की मदद से गोत्र/टोटेम समूह के बाहर से शादी की व्यवस्था करते हैं।
यह एक तरफ एक महिला के लिए पुरुषों के बीच कबीले के भीतर संघर्ष से बचा जाता है और दूसरी तरफ अन्य कुलों के सदस्यों के साथ सौहार्द और दोस्ती बढ़ाने के लिए कार्य करता है।
5. प्रशासनिक कार्यः वंश अपने सदस्यों के लिए सभी प्रशासनिक कार्य करता है। विभिन्न गोत्र/टोटेम के प्रमुख, जनजाति के लिए एक समिति से मिलते हैं, जो गोत्र/टोटेम के सदस्यों के बीच संघर्ष में मध्यस्थता करने का काम करता है और युद्ध और शांति के समय में राजनीतिक फैसले लेता है।
6. संस्थितः जिस गाँव में कृषि की जाती है, और भूमि के स्वामित्व का आधार गोत्र/टोटेम है तो गोत्र/टोटेम कृषि भूमि की व्यवस्था करता है। गोत्र/टोटेम के मुखिया जमीन बांटते हैं। जब कोई व्यक्ति गोत्र/टोटेम की सदस्यता से बंचित होता है तो वह इस भूमि से भी बंचित हो जाता है। सदस्य केवल भूमि किराए पर ले सकते हैं।

उपर्युक्त कार्य के अतिरिक्त, गोत्र/टोटेम अपने सदस्यों की धार्मिक प्राधिकृताओं को भी पूरा करता है। आम तौर पर, गोत्र/टोटेम का मुखिया भी इसका पुजारी होता है। यह वह है जो सभी सदस्यों के धार्मिक
उपक्रमों का उपभोग करता है।

3.2.4 भ्रातूदल (फेर्टी)

Phratry ग्रीक शब्द phrater से लिया गया है जिसका अर्थ है भाई। एक फेर्टी भाई-चारों का एक परिवार समूह है जिसमें कई कुलों को एक साथ जोड़ा जाता है। इस प्रकार, फेर्टी एक ऐसा एकवंशीय समूह है जो कम से कम दो कुलों से बना है और माना जाता है कि वे एक-दूसरे से संबंधित हैं। एक गोट्र के व्यक्तियों की ही तरह, एक फेर्टी के सदस्यों का संघटन वास्तविक वंशानुगत पूर्वज से अपने सटीक जुड़वांश का सही पता लगाने में असमर्थ होते हैं, हालांकि उनका मानना है कि ऐसा पूर्वज मौजूद था।

कई पूर्व-आयोगिक समाजों में, सामाजिक संगठन पुष्ट या महिला वंश के माध्यम से रिसेवर्ड समूहों पर आधारित है, लेकिन इन रिसेवर्ड समूहों को गैर-रिसेवर्ड सिद्धांतों के अनुसार बड़े समूहों में एकत्र किया जाता है जो (कुछ मामलों में) मानवविज्ञानी लुईस एच. मॉगन ने इसे 'फेर्टी' की संज्ञा दी। उदाहरणों में कई अमेरिकी भारतीय और ऑस्ट्रेलियाई आदिवासी जनजाति शामिल हैं। अन्य समाजों में, विस्तारित रिसेवर्ड समूहों में क्लान (आमतौर पर एक मातृवंशीय वंश समूह क्लान (clan) और जेस (Gens) (पितृवंशीय वंश समूह) शामिल हैं। अब किसी भी समूह या समूहों के संघटन के रूप में नामित करना आम बात है जो एक-दूसरे से कुछ रिस्तों को पहचानते हैं। अक्सर, इसलिए, या तो श्रम के एक प्रभाग या अलग अनुगाम कार्यों के लिए फेर्टी का आयोजन किया जाता है।

लुई ने ऐसे संयोजनों के लिए कई संभावनाओं का सुझाव दिया। उन्होंने कहा कि कई गोट्रों ने अपनी पिछली पुष्टकता के सभी जीवितों को खोए बिना एक साथ गठबंधन किया होगा या एक गोट्र इतना बड़ा हो
दूर िशा िनदे शालय, महामाता गांधी अंतररााय हिंदी विश्वविद्यालय
एम.ए. समाजशास्त्र

दूर िशा िनदे शालय, महामाता गांधी अंतरराािय हिंदी विश्वविद्यालय
एम.ए. समाजशास्त्र

गया कि वह एकता के पूर्व बंधनों को पूरी तरह से अलग किए बिना कम समूहों में विभाजित हो गया होगा।

दोनों प्रकार, विखंडन और संयोजन के उदाहरण छोटानागपुर क्षेत्र की कुछ जनजातियों विशेष रूप से उजां, हो और मुंडा जनजातियों में मिलते हैं।

हैविलैंड ने उत्तरपूर्वी एरिजोना के गांवों या प्यूब्लियोस (pueblos) में रहने वाले होपी इंडियन, जो कुछ चीजें, के बारे में वर्णन किया है। उनके समाज को कई नामांकित वंशों में विभाजित किया गया है, जो मातृवंशीय वंश पर आधारित है। दो या दो से अधिक कुलों का एक साथ बड़ा, वृहद गो इकाइयाँ या एक साथ काम करना होता है, जिसमें होपी समाज की नींदियत होती है। इनमें से प्रत्येक के भीतर, सदस्य गोत्रों को एक दूसरे का समर्थन करने और संज्ञान बहिष्कार का पालन करने की आशा रहती है। जैसा कि सभी फेंटी के सदस्यों के सदस्य दिए गए pueblo में रहते हैं, विवाद कि प्रवृत्ति अपने ही पर समूह में देखने को मिलती है।

3.2.5 अद्वैथ (Moiety)

जब एक पूर्व समाज का एकवंशीय वंश के आधार पर दो परिवार समूहों में विभाजित किया जाता है, तो प्रत्येक समूह का अद्वैथ कहा जाता है (यह एक फ्रांसीसी शब्द है जिसका अर्थ होता है 'आधा')। प्रत्येक अद्वैथ में सदस्यों का मानना है कि उन्हें एक सामाय पूर्वज से जोड़ा जाना चाहिए, भले ही वे यह निर्दिष्ट नहीं कर सकते कि कैसे। लेकिन चेतनता और कुल के साथ समाज की तुलना में अद्वैथ सिस्टम वाले समाजों की आबादी अपेक्षाकृत कम है।

अद्वैथ किसी भी सिद्धांत पर आधारित दो समूहों में समाजों का विभाजन, जैसे कि एक दोहरी संस्था है) एक विशेष प्रकार के फेंटी है। हालांकि, वे सभी शब्द संदर्भ के अधिक हैं, और बहुत ही अलग तरीके से समझदारी से उपयोग किए गए हैं। इसलिए, रिस्टेडी समूहों के विश्वासों को (कभी-कभी खराब तुली गई) राष्ट्रवादी के उपयोग में बहुत अधिक बदलाव के साथ रहना पड़ता है और विशेष विश्वासों में विशिष्ट परिवर्तनों और उपयोग को सत्यापित करने के लिए दृढ़ता की सत्याह दी जाती है।

डलू.एच.आर. रिस्टेडी ने भारत के केंद्र में नीलगिरी पहाड़ियों की टोर्क के बीच मौजूद एक अद्वैथ प्रणाली के बारे में बताया था। उनके पास दो समूहों का एक दोहरे संगठन है- टेइविओलोल और टार्थरोल (teivaliol and tartharol)। प्रत्येक दो हिस्सों को फिर से कई कुलों में विभाजित किया गया है।

अद्वैथ बहिष्कारी होती है।

भारत के उत्तरपूर्वी राज्य मणिपुर में कुछ जनजातियों में, सामाजिक संगठन की अद्वैथ प्रणालियों हैं।

इस राज्य के चंदेल ज़िले में छह गाँवों में निवास करने वाले मोनसांग इस प्रकार के परिवार समूह के हैं। उनकी मौखिक परंपरा के अनुसार, इस लोगों के दो समूह एक पुल में इस दुनिया में निकले। वे दो समूह इन लोगों के
दूर दिनदे, महामा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

दूर दिनदे, महामा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

प्रतीय समेता – सामाजिक मानवविज्ञान

प्रधानतया (rinhenti) के रूप में जाना जाने वाले अद्रीश की छ: कुंडियाँ होती है। रोहेंती, वांग्लर, टेसोंग्टी, हङ्गाम्ती, शोंग्शिर और खूटर (rohenti, wanglar, tesongti, hongamti, shongshir and khatur)। रिन्हेंटी इन कुलों के पूर्वज हैं। अन्य अद्रीश को सिमपुटी(simputi) के नाम से जाना जाता है और इसके चार कुल हैं - नगरती, दुमोलियी, किरिटी और चिरिटी (ngarati, thumhliti, kiiriiti and chiiriiti)। धम्पुंण इस अद्रीश समूह के पूर्वज थे। आदर्श रूप से अद्रीश बाहिरविवाही है।

अद्रीश तंत्र एकवंशीय का एक अधिक असामान्य रूप है और इसमें जोड़े में वंश समूहों को विभाजित किया जाता है जो पूरे पति और पत्नियों को ग्रहण करते हैं। एक जोड़ी का प्रत्येक मोईटी (या आधा) लगभग हमेशा बहुभाषी होगा और अपने पति और पत्नियों को विशेष रूप से दूसरे मोईटी समूह से ले जाएगा। इसको यानोमामो जनजाति के उदाहरण से समझा जा सकता है।

यानोमामो में दानी कुल को विडा और वेजा में बांट दिया जाता है जो पूरे दानी समाज के माध्यम से चलते हैं। Wida पुरुषों को अपने मोईटी की महिलाओं से शादी करने से मना किया जाता है और वेजा से पत्नियों को लेना चाहिए। यानोमामो में एक मोईटी सिस्टम भी है। उनके मामले में, भाग लेने वाली इकाईयों छोटे स्थानीय पितुंशीय हैं जो छोटे गाँवों में मेल खाते हुए सदस्यों के साथ बसते हैं। आमतौर पर शादियों का आयोजन बसती के भीतर स्थिर विपरीत मोईटी के सदस्यों के साथ किया जाता है।

यानोमामो मोईटी में अंतरविवाह को नीचे दिए चित्र के माध्यम से समझा जा सकता है।

नोट: विवाह को एक क्षेत्रीय रेखा द्वारा पति और पत्नी को नीचे से जोड़ने का संकेत दिया गया है। रंगीन विक्रम रेखें वंश का प्रतिनिधित्व करती हैं।
3.2.6 वंश समूह का संयोजन

यद्यपि विभिन्न प्रकार के एकत्रित वंश समूह हैं, फिर भी वंश समूहों के विभिन्न संयोजन हैं। उदाहरण के लिए, कुछ समाजों में केवल वंशावली होती है, कुछ में वंश और गोत्र होते हैं, और दूसरों के पास वंश और आदर्श होते हैं लेकिन कोई वंश नहीं होता है। अभी भी कुछ अन्य समाजों में गोत्र और आदर्श हो सकती है, लेकिन न तो फेट्री और न ही वंश हो सकता है।

3.2.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि वंश आधारित परजन समूह विभिन्न प्रकार के होते हैं। सबसे बड़ा आदर्श हो सकता है जो कि पेट्री में विभाजित हो सकता है और फिर, गोट्रों में। इनमें से सबसे छोटा वंश हो सकता है। अन्य संयोजन भी हो सकते हैं। भले ही समाजों में एक से अधिक प्रकार के वंश आधारित परजन समूह हैं, लेकिन सदस्यता के बारे में कोई अस्पष्टता नहीं है, इसलिए, छोटे समूह केवल बड़ी इकाइयों के सबसे बड़े हैं। लोग बड़ी इकाइयों का पता लगा के सामाजिक संरचना को ज्ञात कर सकते हैं।

3.2.8 बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पूर्वी अफ्रीकी की नुआर जनजाति का अध्ययन किसने किया?
   
   (क) इवांस-प्रिचार्ड (ख) फ्रेजर (ग) मार्शल मास (घ) दुर्दीम

2. गोत्र का तात्पर्य "एकवंशीय परजन-समूह या तो मातृवंशीय या पितृवंशीय वंश पर आधारित है।

   यह परिभाषा किसने दी?

   (क) मजूमदार और मदान (ख) विलियम पी. स्कॉट (ग) आर. एन. शर्मा (घ) मार्शल मास

3. जब एक पूर्व समाज को एकवंशीय वंश के आधार पर दो परजन समूहों में विभाजित किया जाता है उसे कहते हैं?

   (क) मातृवंशीय गोत्र (ख) पितृवंशीय गोत्र (ग) आदर्श (फेट्री) (घ) आदर्श (Moiety)

उत्तर – 1. (क) इवांस-प्रिचार्ड, 2. (ख) विलियम पी. स्कॉट, 3. (घ) आदर्श (Moiety)
दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. गोट्र क्या है? गोट्र के लक्षण, प्रकार और कार्य क्या हैं?
2. वंश को परिभाषित करते हुए वंश की विस्तृत व्याख्या लिखिए।
3. गोट्र को परिभाषित करते हुए गोट्र की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
4. भातृदल एवं अद्धीश की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
5. वंश समूह के संयोजन की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. वंश किसे कहते हैं?
2. वंश की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
3. गोट्र को परिभाषित कीजिए।
4. गोट्र और टोटेम में क्या अंतर है?
5. भातृदल का क्या अर्थ है?

3.2.9 संदर्भ ग्रंथ सूची


इकाई 3 युवागृह : संरचना एवं प्रकार्य

(Youth dormitory : Structure and Function)

इकाई की रूपरेखा

3.3.0 उद्देश्य
3.3.1 प्रस्तावना (Introduction)
3.3.2 युवागृह
3.3.3 जनजाति युवागृह की उत्पत्ति
3.3.4 विभिन्न जनजातियों के युवागृह
3.3.5 युवागृह का महत्व
3.3.6 युवागृह के लक्षण
3.3.7 रंग-बंग
3.3.8 घोटुल
3.3.9 युवागृह का वर्तमान परिदृश्य
3.3.10 सारांश (Summary)
3.3.11 बोध प्रश्न
3.3.12 संदर्भ प्रत्य सूची

3.30 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप यह जानने में सक्षम होंगे कि:

- युवागृह किसे कहते हैं?
- युवागृह की उत्पत्ति, महत्व और लक्षण क्या हैं?
- युवागृह का वर्तमान परिदृश्य क्या है?

3.3.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत की जनजातियाँ केवल जनसंख्या मात्र नहीं हैं, बल्कि वे सांस्कृतिक विकास का भी प्रतिनिधित्व करती हैं, जिनके द्वारा हम जनजातीय सांस्कृतिक जीवन की रूपरेखा और वैश्विकीकरण के युग में इसके महत्व को समझ सकते हैं। सामाजिक संगठन में सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था युवागृह है। ये संगठन लगभग हर जनजाति में पाए जाते हैं और उनका सामाजिक जीवन इसी पर केंद्रित है।

भारत के कई जनजाति समूहों में जनजाति युवागृह एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह इकाई में युवागृह को केंद्र में रख कर जनजाति युवाओं के जीवन का विश्लेषण है। इन युवागृह से जनजाति युवाओं के
दूर िशा िनदे
शालय
महा मा
गांधी अंतररा
ी
यिहंदी िव व
िवालय
एम
ए
समाजशा

tीय सेमे
ट
–
सामािजक मानविवान

यिव का िवकास होता है। ऐसा इसिलए है क्योंकि युवागृह बचपन से वयस्कता तक, आदिवासियों के संक्रमणकालीन चरण में एक महत्वपूण्य भूमिका निभाते हैं। एक व्यक्ति के मन में आर युवागृह की एक प्रोफाइल हो तो वह एक जनजाति के सांस्कृतिक जीवन की पूरी तस्वीर खींच सकता है। यह संस्कृति, शिक्षा और िति-रिवाज का मिलन है जो सामुदायिक स्तर पर एकरूपता उत्पन्न करता है। युवागृह सामाजिक रूप से मुक्त चीन शिक्षा के लिए स्वीकृत स्थान हैं न कि मुक्त सेस का। युवागृह का वास्तविक महत्व इस तथ्य में निहित है कि वे ऐसे केंद्र हैं जहां एक जनजाति के बुजुर्ग जनजाति परंपरा और अनुभाव, युवा सदस्यों को सिखाते हैं, ताकि वे जनजाति िति-रिवाजों और समस्याओं के उत्तराधिकारी बन सकें और समुदाय के लिए स्वीकार्य हो सकें।

3.3.2 युवागृह

युवागृह विभिन्न जनजातियों में अलग-अलग नामों से जाना जाता है, उदाहरण के लिए, असम के नागाओं के बीच,'मोंग' कहा जाता है, जबकि महिला युवागृह को अंगोमी नागाओं के बीच ‘यो’ कहा जाता है, और पुरुष युवागृह को ‘किन्नुकी’ कहा जाता है। उपरोक्त में, इसे ‘रंगबंग’ के रूप में जाना जाता है, जबकि मध्य भारत के मुंडा और हो जनजातियों के बीच, इसे ‘गिटियोरा’ कहा जाता है। उरांव इसे ‘धूपरिया’ कहते हैं, भुइयाँ इसे ‘धनगरबास’ कहते हैं और पुष्य युवागृह को ‘िकनुक’ कहा जाता है। उरांव इसे ‘धूमुरया’ कहते हैं, भुइयां इसे ‘धनगरबास’ कहते हैं और पुष्य युवागृह को ‘िकनुक’ कहा जाता है। उरांव इसे ‘धूमुरया’ कहते हैं, भुइयां इसे ‘धनगरबास’ कहते हैं और पुष्य युवागृह को 'िकनुक' कहा जाता है।

आधुनिक युग में लड़कों और लड़कियों के बीच प्यार और दोस्ती के लिए संघष और अस्वस्थ माहौल के बावजूद, जनजाति युवागृह का आज तक महत्व है। अंग्रेजी भाषा में इसे dormitory कहते हैं। अंग्रेजी शब्द डोरिटरी लैिटन शब्द डोरिटोरयम से बना है, जो एक सांप्रदायिक या सामूहिक शयन कक्ष (स्त्रीपिंग क्वार्टर) है। यह अर्थ ‘सामूहिक शयन कक्ष’ जनजाति के लिए अनुपयुक्त है, क्योंकि इसका उपयोग जनजाति बच्चों को स्कूल जीवन के लिए तैयार करने के लिए नहीं होता है। इसके बजाय, इस शब्द ‘डोरिटरी’ का उपयोग तब तक किया जा सकता है जब तक हम पर्याप्त विकल्प नहीं मिलता, हिंदी भाषा में इसे युवागृह कहते हैं।

एक जनजाति युवा पारंपरिक मानदंड, कम तकनीकी स्तर और शहरी प्रभाव के साथ बंधे हुए समाज से आता है। जनजातीय क्षेत्र अक्सर अलग-अलग पढ़ जाते हैं और संचार के उचित साधनों का अभाव होता है, जो फिर से उन्हें अपनी संस्कृति का पालन करने और इसके विशिष्ट लक्षणों को बनाए रखने में मदद करता है। प्रथम जनजाति का अपना संगीत और नृत्य, गीत और लोक कथाएं, उपाय के मिथक और प्राचीन का कहानी और यह जनजाति से संबंधित सांस्कृतिक भावना पैदा करता है। प्रथम समूह प्राकृतिक सीमाओं द्वारा अक्सर फेला हुआ क्षेत्र होता है, जहां आंतरिक लड़ाई झागड़े होते हैं। इन सभी का एक केंद्रीय जनजातीय नियम होता है जिसको जनजाति का हर सदस्य पालन करता है। यह नियम पूरे समूह के लिए संचालित होता है, उसे चुनौती नहीं दी जा सकती है, क्योंकि वह एक कोड को परिभाषित करने, जुर्माना लगाने और
किसी भी नए सदस्य को शामिल करने का अधिकार रखता है। इस तरह के केंद्रीय जनजाति प्राधिकरण मुंडा की “पारह” परिषद के रूप में लोकतात्त्विक भी हो सकते हैं।

जनजाति भारत में युवागृह में प्रवेश के लिए योग्यता, आयु है। एक निश्चित उम्र की प्राप्ति पर, एक युवागृह में प्रवेश आक्रामक हो सकता है, या इसके लिए कुछ राहत-डी-पैसेज के साथ होना पड़ सकता है। विवाहित लोग आत्मीत या युवागृह की सदस्यता से वंचित हैं। युवागृह, जो या तो द्विलिंगी है या एकलिंगी, जनजाति बस्ती के बाहर स्थित हैं। ये युवा संगठन युवागृह नामक बड़ी इमारतों में केंद्रित हैं। वे युवाल और पास की इमारतें हैं। लड़कों और लड़कियों के लिए अन्य सामाजिक सेवाएं भी होती हैं। जनजाति के सभी युवा युवागृह में अपनी रात गुजारते हैं। लड़के और लड़कियां अलग-अलग सोते हैं। जिन गांवों में लड़कियों के लिए युवागृह नहीं हैं, वे किसी बड़ी इमारत के घर में सोते हैं। मुंडा जनजाति में इस तरह का रिचार्ज है। बस्ती में 15 और 16 वर्ष की आयु के लड़के और लड़कियाँ युवागृह में सोते हैं। उरांव युवाओं को गाँव के बाहर स्थित घूमकुरिया में अपनी रात गुजारनी पड़ती है। हो जनजाति में अविवाहित लड़के और लड़कियां अलग-अलग युवागृह में रहते हैं। असम के लोटा गांवों में लड़कों को अपनी मां की गंभीर बीमारी के मामले में केवल मांगे से हुई जिद तक सकती है। असम के भियामी आदिवासियों के बीच लड़के और लड़कियां दोनों एक ही युवागृह में सोते हैं। लड़कियां भूतल पर सोती हैं, तो लड़के पहली मंजिल पर सोते हैं। बस्तर की मूरिया जनजाति में भी ऐसा ही रिचार्ज है। उनके युवागृह गाँव के बाहर स्थित हैं। अविवाहित लड़के और लड़कियां रात में यहां इकट्ठा होते हैं, गाते हैं और नाचते हैं और अन्य सामाजिक गतिविधियों में भाग लेते हैं और अंत में रात गुजारते हैं।

3.3.3 जनजाति युवागृह की उपयोगिता

जनजाति युवागृह की उपयोगिता के बारे में विवाद एकमत नहीं है। एक दृष्टिकोण के अनुसार, वे प्राचीन सांप्रदायिक घरों के समान हैं जब पूरा गांव एक ही छत के नीचे रहता था और व्यक्तिगत घर नहीं थे। एक अन्य दृष्टिकोण के अनुसार, युवागृह का उद्देश्य लड़कों और लड़कियों को अपने माता-पिता के दौर संबंधों से अनजान रखना है। नाजुक के अनुसार, युवागृह का उद्देश्य गांव के बीच का एक जगह पर इकट्ठा करना है और जिस प्रकार जंगली जानवरों के हमले से गांव को बचाया जा सके और गांव की औरंगों अन्य जनजातियों के पुरुषों के हमले से बच सकें। इसके अलावा, युवागृह की संस्कृति के चलते उत्पादन के कारण हो सकती है। जिन कारणों से युवागृह का उद्देश्य हुआ हो, यह निर्णयावरद नहीं है कि यह जनजाति में जनजाति संस्कृति का केंद्र है। इसमें जनजाति के लड़कों और लड़कियों को पंजराओं, मानदंडों, आदरों, धार्मिक विवाहों, आजीविका कमाने के तरीके और अनुशासन का पाठ पढ़ाया जाता है।

एस.सी. रॉय (1918) के अनुसार, जनजातीय गांव प्राचीन एवं आयु जनजातीय गांव के बारे में कार्य करता है:
1. खाद्य चीजों को इकट्ठा करने और आयु जनजातीय संगठन को मजबूत करने में मदद करना।
2. सामाजिक और अन्य कर्त्तव्यों में लड़कों और लड़कियों को शिक्षित करना और उन्हें सेवक के मामलों में शिक्षा प्रदान करना।

3. समग्र विवाह (एंडोगैमी) के सिद्धांत का पालन करना और महिलाओं की गतिविधि को सीमित और नियंत्रित रखना।

3.3.4 विशिष्ट जनजातियों के युवागृह

असम में अलग-अलग जनजातियों के युवागृह को अलग-अलग नामों से जाना जाता है उदाहरण के लिए कोष्ठक नागा लड़के के युवागृह को ‘बान’ और लड़की के युवागृह को ‘यो’ कहते हैं: यद्यपि लड़के के युवागृह इकोहिची और लड़की के युवागृह को इलोची कहते हैं। एबी जनजाति अपने युवागृह को आरूढ़ करते हैं। अंगामी नागा इसे किचुकी कहते हैं; उससे लेकर उसके बीच के ऊपरिक्षेत्र के बोटिला इसे रंग-बंग, मुंडा और हो जनजाति इसे गीटोआरा या धुपमुकुरिया कहते हैं; भुईया इसे धनगर बासा कहता है; और गोंड इसे घोटुल कहते हैं। दक्षिण भारत में, युवागृह के प्रमाण मुथुवन, मनान और पनियन में बताए गए हैं। युवागृह के निजी विभाग युवागृह में अलग-अलग जनजाति के उच्च-स्तरीय और न्यायिक अनुपालन के साथ जुड़े हुए हैं। युवागृह को विशेष रूप से एक इमारत में रखा गया है, जो एक दरवाजे के साथ, सरल और खुला हुआ हो सकता है, उर्वर की कम छत वाले धूमकुरिया या नागा के भोंट की तरह विस्तृत नकाशी वाले लकड़ी के दरवाजे भी हो सकते हैं। यह अक्सर जंगल के बीच में, गांव के बाहर बनाया जाता है, लेकिन नागाओं में यह मकान के खेत के बीच (कॉर्न फील्ड) या पास होता है। हालांकि इस मकान को विशेष और विशेष रूप से किया जाता है, और बहुत अधिकारी के रूप में रहता है। एक युवागृह में एक सदस्य के रूप में या उसकी शादी के बाद एक अधिकारी के रूप में रहता है। एक युवागृह जीवन के कई रीत-रिवाज के पालन के साथ जुड़ा हुआ है। इनमें से कुछ मायने में पारंपरिक प्राचीनता है तो दूसरी ओर इसमें संस्था के कामकाज के अनुभव के पालन के साथ जुड़ा गया है। युवागृह जो पुरातन हैं और जो कार्यान्वयन रूप से नए हैं, वे बहुत मायनों में समान हैं। हालांकि इसमें समानता, गहरे सामाजिक-आर्थिक और शिक्षाभाव उद्देश्य अंतर्निहित हैं।

प्राकृतिक और जैविक शिक्षा के अलावा, सांस्कृतिक शिक्षा दुनिया भर के सभी समाजों की एक सामान्य विशेषता है। प्रारंभिक वर्षों में एक व्यक्ति को जैविक से सांस्कृतिक बनाना एक समाज का कार्य है। सांस्कृतिक उप व्यक्ति के व्यक्तित्व और चरित्र को तय करती है जो एक समाज और राष्ट्र के लिए भी योगदान देता है। जनजाति युवागृह अपवाद नहीं हैं। ये गृह सीखने के केंद्र के रूप में कार्य करते हैं। सीखना किसी व्यक्ति के व्यवहार को संशोधित करता है, अगर किसी व्यक्ति के व्यवहार की समाज से प्रभावित होती है। यह त्रिवेण बनता है, तनाव और चिंता को कम करता है, लेकिन यदि व्यवहार की प्रासंगिकता नहीं हो तो यह
समाज को किसी व्यक्ति के कार्य से कुछ अंशिय परिणाम मिलता है [गिलिन (1948), मर्डाङ (1945), हॉलोवेल (1955), जॉन डॉलाड (1950)]। इसलिए, जनजाति युवागृह सीखने के साथ-साथ व्यक्तिगत व्यवहार का बनाए रखने और नियमित करने के लिए काम करते हैं। इसलिए, युवागृह को जनजाति संस्कृति के शिक्षण केंद्र के रूप में लिया जाना चा�हिए।

युवा शाम को युवागृह में इकट्ठा होते हैं। युवागृह के अंदर आग जलायी जाती है, सदस्य वहाँ गाते हैं, खेलते हैं, नृय करते हैं, लोककथाओं और लोकगीतों को एक दूसरे को बताते हैं और बाद में रात को सोते हैं। इसके साथ, सदस्यों के बीच सामाजिक मानविक और सामाजिक संबंधों की स्थिति वाले जनजाति प्रेम और परंपरा में पारंगत हैं, जॉन डॉलाड (1950)।

युवा गृह (1918) युवा जनजाति के बीच जनजाति पहचान के विकास में युवागृह के महत्व को बताते हुए उरांव (1944) ने खानाबदोश और व्यक्तिगत संस्कृति के दृष्टि से युवा गृह की भूमिका उल्लिखित की है। उनके अधिकारियों (वरिश्चिन्त) के नेतृत्व में सदस्य अक्षर विभिन्न समूहों में सहायता करते हैं।

### 3.3.5 युवागृह का महत्व

रॉय (1918) युवा जनजाति के बीच जनजाति पहचान के विकास में युवागृह के महत्व को बताते हुए उरांव (1944) ने युवागृह के तीन उद्देश्य का वर्णन किया है। सबसे पहले, वह खानाबदोश के उद्देश्य के लिए एक प्रभावी आर्थिक विकल्प के रूप में कार्य करता है। दूसरे, युवा पृथ्वी को उनके सामाजिक और अन्य कर्मचारी के प्रशिक्षण के लिए एक उपयुक्त संगठन के रूप में और तीसरे, युवा-पृथ्वी की शिक्षा और खिचीदार शिक्षा के बारे में निर्मित किया गया। यह ज्ञान और धार्मिक आदर्शों के प्रसार के लिए एक जगह के रूप में एलिवन (1944) ने युवागृह को विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और जातीय संस्कृति के दृष्टिकोण से देखा है।

एलिवन (1947) अपने महत्व के अनुसार दो प्रकार के युवागृह को उल्लिखित करते हैं।

(अ) एक प्रकार का युवागृह पुष्प युवाओं को सामाजिक सुरक्षा के लिए अर्थ सेवक के रूप में तैयार करता है। इस प्रकार की युवागृह में वे लड़ाई, शिक्षा, जातीय आदि करते हैं।

(ब) दूसरा प्रकार का युवागृह, या तो सेवक का है, जिसमें संगठन का उद्देश्य और मनोरंजन सम्बन्धित है और या तो कई सामाजिक और आर्थिक गतिविधियां जैसे शिक्षा, कृषि खेत के माध्यम द्वारा सीखते हैं।

मजुमदार (1958) ने खानाबदोश और शिक्षा आधारित जनजाति के बीच युवागृह के महत्व का वर्णन किया। जहाँ वह महिलाओं और बच्चों के आक्रमणकारियों के संकट के लिए होता है क्योंकि युवागृह
में युवा अपने संगीत कार्यक्रमों के साथ देर रात तक जागते हैं। कृषि कार्य के दौरान यौन संबंध के निषेध के कारण, युवागृह में विवाहित महिलाओं के रहने के स्थान के रूप में जाना जाता है। यह फसल की बुधवार के दौरान जानवरों और दुष्पराहों से फसलों की सुरक्षा से संबंधित है। युवागृह को अन्य तरीकों से अपनी पत्नी के साथ यौन संबंध के रूप में भी समझा जाता है। जब तक कि नवजात शिशु की नाम ट्यूब (प्लेयवर्टा का एक हिस्सा) शुष्क न हो जाए और मासिक घर्म चक्र के दौरान भी, एक महिला अपने पति के साथ चक्र के दौरान यौन संबंध नहीं बना सकती है। एक जोड़े के बीच दूसरे यौन संबंध जब तक कि नए जन्म लेने की स्थिति नहीं होती तक नहीं बना सकते। अंत में युवागृह को अग्निशंसा अथवा अपनी पत्नी के साथ यौन संबंध बनाना असुविधाजनक होता है। यह एक सेंस विनियमन घटना के रूप में युवागृह का प्रतीक है।

कोन्याक नाग के बीच, दीवाना समारोह होते हैं, जिसमें मायम द्वारा अपने बच्चों के साथ यौन संबंध का निषेध किया जाता है। यह सच है कि लोगों के जीवन का भावनात्मक भाग उन्हें अपने पालन-पोषण और संरक्षण के लिए ज्यादा समय देने की आवश्यकता होती है। यह दूसरी ओर, असम के कोन्याक नागों के नियम के अनुसार, युवागृह के दौरान कर्मचारियों के साथ यौन संबंध बनाना असुविधाजनक होता है।

3.3.6 युवागृह के लक्षण

युवागृह की महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित हैं:
1. जबकि कुछ स्थानों पर लड़कों और लड़कियों के लिए अलग-अलग युवागृह हैं, अन्य जनजातियों में वे एक आम युवागृह में रहते हैं। यह मुरिया जनजाति में प्रवर्तित है। दूसरी ओर, असम के कोन्याक नागों में, लड़कों और लड़कियों के समान स्थान है।
2. आम तौर पर युवागृह स्थान के बाहर स्थित होते हैं, लेकिन वे खेत के पास भी हो सकते हैं।
3. युवागृह की कुछ परंपराओं और रीति-रिवाजों पर आधारित है, जिसका सभी सदस्यों द्वारा अनिवार्य रूप से पालन किया जाता है।
4. युवागृह की सदस्यता की आयु जनजाति से जनजाति में भिन्न होती है। एक सामान्य नियम के रूप में यह अधिकांश जनजातियों में चार या पाँच साल है।
5. जब तक लड़के और लड़कियों की शादी नहीं होती तब तक उनकी सदस्यता रहती है। विवाह के बाद सदस्यता स्वतंत्र भंग हो जाती है।
6. यदि कोई लड़की विवाह हो जाती है तो वह फिर से युवागृह में उसके सदस्य के रूप में प्रवेश कर सकती है।

दूसरी शिोरूम – सामाजिक मानवविज्ञान
7. शाम को युवागृह के सदस्य अपने घरों पर भोजन करने के बाद इकठ्ठा होते हैं। आग जलने के बाद वे जिस युवागृह में इकठ्ठा होते हैं, उसके चारों ओर बैठते हैं, कहानियां सुनाते हैं, गाते हैं, नृत्य करते हैं और अंत में सोते हैं।

8. युवागृह के सदस्यों को वरिष्ठ और कनिष्ठ के अनुसार दो वर्गों में विभाजित किया जाता है। युवागृह के दो सदस्यों की देखभाल करना और उनके बीच अनुशासन बनाए रखना उनका काम है। कनिष्ठ, वरिष्ठों की आज्ञा का पालन करते हैं और उनसे विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्राप्त करते हैं।

9. युवागृह के प्रतियोगिता सदस्य का यह कर्तव्य है कि वह युवागृह के बारे में सब कुछ जान रखे।

10. युवागृह के सदस्य एक साथ कई कार्य करते हैं, जैसे, विवाह के अवसर पर घर का निर्माण या फसल काटने में गाँव के लोगों की मदद करने आदि।

जनजाति युवाओं के सामाजिक जीवन में युवागृह की भूमिका को समझने के लिए, अब निम्नलिखित पैराग्राफ में दो उदाहरण दिये गए हैं।

3.3.7 रंग-बंग

भोजिया जनजाति उत्तराखंड राज्य के उप-हिमालयी क्षेत्र में रहती है और रंग-बंग उनके युवागृह का पारंपरिक नाम है जो भोजिया के दो उप-समूहों (तोखा, मरचा, जोहरी, जाद, शौका आदि) में पाया जाता है। यहाँ उत्तरकाशी जिले के बागोरी, मुखबा और धराली गाँवों के रंग-बंग का विकास के लिए, उपयोग किया गया है।

रंग-बंग एक मोबाइल प्रकार का युवागृह है, जो किसी भी खाली कमरे या घरों में बनाया जाता है। इस संबंध में रंग-बंग युवाओं का एक प्रकार का उत्सव है जिसमें अविभाजित लड़के और लड़कियां एक स्थान पर इकठ्ठा होते हैं और उस स्थान पर इन लड़कों और लड़कियों के सामूहिक रूप में रंग-बंग का गठन करते हैं। बस से बाहर वर्ष की आग का प्राप्त करने के बाद, तो यह युवाओं रंग-बंग का सदस्य बन जाता है, अगर कोई सदस्यता से इनकार करता है, तो उस पर कुछ जुमाना लगाया जाता है। रंग-बंग दो या तीन गाँवों के बीच समन्वय स्थापित करने का एक तरीका है क्योंकि किसी भी गाँव के किसी भी लिंग के युवाओं रंग-बंग के सदस्य हो सकते हैं। वे पूरी रात रंग-बंग में रहते हैं।

सामाजिक चर्चापर एक गाँव से दूसरे गाँव में सांस्कृतिक मूल्यों के आदान-प्रदान के लिए रंग-बंग का आयोजन किया जाता है, लेकिन उसी गाँव के युवाओं बुजुर्गों से अपनी संस्कृतियों की सीखते हैं। इससे यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक और एक गाँव से दूसरे गाँव तक संस्कृति के परिवर्तन के साथ है। सामाजिक रूप से रंग-बंग का संचार पारंपरिक नैतिकता से है। छोटे घर के कारण, माता-पिता अपने बीच संबंध के दौरान अपने बच्चों की उपस्थिति से बचते हैं। रंग-बंग अपने माता-पिता के साथ-साथ अपने जीवन साधी को चुनने के
लिए युवा व्यक्तियों के लिए यौन संबंध का अवसर प्रदान करता है। यदि महिला के मामले में जीवन साथी दूसरे गाँव का है, तो लड़का अगले दिन उस गाँव में जाता है और उस लड़की का अपहरण कर लेता है। उसके बाद उस लड़की से शादी की सहमित ली जाती है। इस प्रतीकात्मक सहमित अनुमान के पूरा होने के बाद, दूसरे गाँव में प्रस्तावित दुल्हन के कुछ दोस्तों को आमंत्रित किया जाता है। इन दोस्तों को शाश्वत के नाम से जाना जाता है। शादी के दौरान च़फ़ (एक तरह की शराब) और मांस को उसमें के प्रतीक के रूप में दिया जाता है। वे फिर से रंग-बंग मनाते हैं। सभी लड़कियां अपने रात के साथी के साथ सोती हैं, अगर कोई भी लड़की किसी अन्य लड़के के लिए फिर से चुनी जाती है, तो सूरी पिछली प्रक्रिया दोहराई जाती है।

विवाहित महिला को भी रंग-बंग में अनुमति दी जाती है जब तक कि वह अपने पति के साथ यौन संबंध से खुद को दूर नहीं रखती। लेकिन जैसे ही वह अपने पति के साथ इस तरह के संबंधों में यौन संबंध हो जाती है, उसे रंग-बंग से बाहर कर दिया जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि किसी भी पितृभव विवाह से बचने के लिए, यदि वह किसी अन्य रंग-बंग के पूरे द्वारा गर्भवती होती है, तो वह अपने पति से उस मुद्दे को स्वीकार करने का अनुमति देती है और सामान्यतः पर वह कुछ प्रतीकात्मक अनुमान के बाद स्वीकार करती है। कम या ज्यादा रंग-बंग युवा लोगों के लिए यौन संबंध के लिए एक सामाजिक उपाय से वैध मंच प्रदान करता है।

युवागृह का राजनीतिक कार्य को या दो से अधिक गांवों के सदस्यों के बीच समवेत प्रचारित करता है। दो गांवों के सदस्यों के बीच वैवाहिक संबंध उन्हें और करीब लाते हैं। इस तरह, युवागृहों के सदस्यों के बीच वैवाहिक संबंध उन्हें और करीब लाते हैं। यह उन्हें सुनाम पारिवारिक गठन, आसान यौन संबंध का चयन और सामाजिक विवाह के लिए एक वातावरण निर्माण करती है।

3.3.8 घोटूल

घोटूल जनजाति युवाओं के युवागृह का एक और अच्छा उदाहरण है। यह बिहार राज्य के बस्तर जिले के मुरया और गोंड जनजाति में पाया जाता है। इस युवागृह में केवल विवाहित लड़के और लड़कियों को रहने की अनुमति होती है। विवाह और विधवा घोटूल में अनुमति दी जाती है, लेकिन विवाहित जोड़े इसमें सहल वर्जित हैं।

6 से 7 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद हर लड़के और लड़की घोटूल का सदस्य बन जाती है। घोटूल का सदस्य बनने के बाद उसे घोटूल के कार्यक्रम में सहभागिता में सहायता भी भर्ती होता है। यदि कोई भी माता-पिता अपने बेटे या बेटी को युवागृह में भेजने से इनकार करते हैं, तो ग्राम परिषद उन्हें दंडित करती है। घोटूल के सदस्य को वरिष्ठ और कमियंत के रूप में दो समूहों में उम्र के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। पुरुष सदस्यों को दो समूहों में वरिष्ठ और कमियंत के रूप में जाना जाता है। पुरुष सदस्यों को चेलिक (Chelic) और महिला सदस्य को मोतियारी (Motiyari) के रूप में जाना जाता है। घोटूल के प्रमुख को सालाएँ कहा
जाता है और उनके अधीनस्थों को दीवान, तहसीलदार, सूबे-दर, कोटवार (भी पुरुष सदस्य) आदि और चेलिक के नाम से जाना जाता है। तहसीलदार (महिलाएं) आदि सलाउ अपने प्रेमी के रूप में किसी भी मोतियारी को चुन सकते हैं। इस चयन के बाद कोई भी चेलिक उस मोतियारी के साथ यौन संबंध नहीं बना सकता है। शादी के बाद सलाउ अपने उत्तराधिकारी का चुनाव करता है। हर कोई सालाउ के आदेश का पालन करता है। घोटुल के सदस्यों को किसी भी बाहरी व्यक्ति के अंदर होने के बारे में चलाने की अनुमति नहीं है।

हर शाम चेलिक और मोतियारी घोटुल में इकड़ा होते हैं। मोतियारी, सलाउ को सलाम करने के उपर हैं। वे अपनी सेवायाम के लिए यूनिन-युनिन के लिए स्वतंत्र हैं लेकिन संबंधित युवाओं को प्रतिबिंबित नहीं करते हैं। यदि कोई मोतियारी गर्भवती हो जाती है, तो संबंधित चेलिक उसके साथ युद्ध करता है। इससे यौन संबंध विवाह से दूर नहीं है। इसलिए घोटुल में यौन संबंधों को टाला नहीं जाता है।

दो प्रकार के घोटुल मौजूद हैं:

i) जोड़ीदार (युमन) घोटुल - जब एक-एक चेलिक और मोतियारी का जुड़ाव तय होता है।

ii) मुंडी बडाना (विविनन) घोटुल - चेलिक या मोतियारी अपने रात के साथी बदलते हैं। यदि एक चेलिक तीन दिन तक एक विविनन मोतियारी के साथ रहता है, तो उस जोड़े को जोड़ीदार माना जाता है और इस तरह के घोटुल को ‘उल जोड़ीदार घोटुल’ कहा जाता है और शादी के लिए जोड़े को मजबूर किया जाता है। तीन दिनों की इस अवधि को आम तौर पर प्रत्येक चेलिक के लिए एक मोतियारी की उपलब्धता बनाए रखने के लिए बचा जाता है।

अगर चेलिक और मोतियारी की संख्या समान नहीं है, तो मोतियारी अपने साथी का चयन करते हैं। मान लीजिए कि एक घोटुल में तीस चेलिक और दस मोतियारी एक समय में मौजूद हैं, तो मोतियारी केवल दस चेलिकों का चयन करती हैं और चुनिन्दा चेलिक के बालों में अपने कंघों को छींट देती हैं। यह एक विशिष्ट रात के लिए चेलिक के चयन का प्रतीत है। अगली रात में अगले तीन चेलिक के लिए फिर से यह प्रक्रिया अनवार जाती है। इस प्रक्रिया से वे घोटुल के अंदर एक यौन संघन करते हैं।

पारिवारिक स्तर पर सामाजिक रूप से घोटुल महत्वपूर्ण है। एक पंचति अपने बच्चों के सामने यौन संघनया स्थापित करने में संकोच करता है। इसके लिए घोटुल के लिए मौजूद बच्चों के अवसर देता है। यह अविभाजित लड़कों और लड़कियों को एक-दूसरे के बीच यौन संघन स्थापित करने के लिए एक मंच भी देता है। सामान्य तौर पर, सेक्स संघन की नहीं की गयी विवाह के लिए ही हो। केवल गर्भवत्ता के मामले में, संबंधित चेलिक और मोतियारी विवाह के लिए बाध्य हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि यदि एक चेलिक और मोतियारी एक-दूसरे से शादी करना चाहते हैं तो वे जानबूझकर एक-दूसरे के साथ तीन दिनों तक रहते हैं और शादी करते हैं। यह अन्य साथी चयन का मामला है।
असली भाई और बहन एक ही घोटुल में रहते हैं लेकिन वे रिलेशनल प्रभाव (परिवार) के कारण सोने वाले साथी होने से बचते हैं। घोटुल का आर्थिक कार्य भी है। मूर्तिया और गौड़ कृषि जनजातियाँ हैं। वे शिक्षा और मछली पकड़ने का भी अभ्यास करते हैं। घोटुल में, युवा लोग एक-दूसरे से आर्थिक गतिविधियों जैसे कृषि, मछली पकड़ने, शिक्षा आदि भी सीखते हैं।

घोटुल का राजनीतिक कार्य सत्ता और अधिकार का पाठ पढ़ाना है। सलाउ की शक्ति और अधिकार का उपयोग युवा लोगों पर किया जाता है। इसे कोई चुनौती नहीं दे सकता। यदि कोई भी परिवार अपने बच्चों को घोटुल सलाउ भेजने से मना करता है, तो उस मामले को ग्राम परिषद को भेज दिया जाता है, जहां उस परिवार पर कुछ जुर्माना लगाया जाता है। सलाउ घोटुल के सदस्यों को समुदाय के लिए अपनी सेवाएं योगदान करने का आदेश देता है। इसलिए, सलाउ की भूमिका केवल घोटुल तक ही सीमित नहीं है, वह गांव के मामलों की देखरेख भी करता है और तदनुसार कार्य करता है।

3.3.9 युवागृह का वर्तमान परिदृश्य

वर्तमान में दुर्भाग्यवत सलाउ के सामाजिक और स्वास्थ्य के क्षेत्र में कमजोर हो रही है। इसके दो महत्वपूर्ण कारण हैं:

1. शहर से संपर्क- शहरी लोगों के संपर्क के कारण गांव के लोग अपने सामाजिक आदर्शों और संस्कृतियों को भूल रहे हैं और उन्होंने संस्कृति का नायक कर रहे हैं।

2. ईसाई मिशनरियों का प्रभाव- आदिवासियों के साथ ईसाई धर्म का प्रभाव और उनके बीच ईसाई मिशनरियों की उपस्थिति ने उनके युवा सांस्कृतिक व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। युवा संगठन की संस्कृति धीरे-धीरे कमजोर हो रही है, जिससे जनजातियों में सामाजिक अवस्था पैदा हो रही है।

वास्तव में, जैसा कि एलिन्सन ने सही कहा है, एक जनजाति समूह के सामाजिक संगठन की स्थिति का अनुभव सही रूप से उसकी युवागृह की स्थिति से लगावा जा सकता है, जो अपनी संस्कृति के रखरखाव और विकास का केंद्र है। समकालीन जनजाति युवा धार्मिक प्रभाव में हैं- पारंपरिक जनजाति धर्म, हिंदू धर्म और ईसाई धर्म। अनुशासन प्रदेश का भेदों का गैलोंग, मध्य प्रदेश का मारिया और बिहार का सीरिया भाड़ीया घोड़ी श्रेणी में आता है। बिहार का संथाल और ओराओं, असम की कृष-हरी और कोच और उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड राज्य का धारा दूसरी श्रेणी में आता है और मिज़ों और नागा समूह ज्यादातर तीसरी श्रेणी में आते हैं।

हम व्यापक सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों में, शैक्षिक स्थिति में, उनकी विश्वसनीयता में और भागीदारी में एक अलग तस्वीर पाते हैं। बड़े पैमाने पर शिक्षा या वयस्क शिक्षा के कार्यक्रमों को लागू करने के लिए स्कूलों और कॉलेजों की स्थापना की गई है और इस प्रकार स्कूल और कॉलेज स्तर पर शिक्षा दी जा रही है।
को आसानी से सुलभ बनाया गया है। आज हम दूरदराज के जनजातीय क्षेत्रों में स्कूल और कॉलेज पाते हैं। इसके साथ ही, सरकार की एक नीति है कि सुदूर जनजातीय क्षेत्र को व्यवहार्य राजनीतिक संस्थाओं के रूप में बनाया जाए और सरकार द्वारा उनके विकास के लिए विभिन्न विकास कार्यक्रमों को शुरू किया जाए। नागलैंड और मणिपुर जैसे जनजातीय राज्यों में भी यह व्यवस्था लागू की गई है। जनजाति के क्षेत्रीय विकास के लिए विभिन्न विकास प्राधिकरणों का गठन किया गया है। वे अपने स्वयं के मामलों के प्रबंधन में शामिल होते हैं। युवाओं को औपचारिक शिक्षा प्राप्त करना है और प्रशासनिक सेवाओं और योयता शक्ति के लिए अर्थता प्राप्त करना है।

उनके पूर्वजों का अलग-अलग इलाक़े में निर्माण सामाजिक जीवन के सुख, जो उन्मुख जीवन जीने के लिए सरल था उन्हें कोई अपील नहीं करता था। आज भारत के जनजाति युवाओं को लगता है कि वे न केवल अन्य जनजाति समूहों बल्कि भारतीय संबंध में भी प्रतिष्ठा और सता हासिल करेंगे। वे संसद, विधायक, आई ए.एस, आई.पी.एस और राज्य नगरिक सेवाओं के लिए काम करते हैं। हम न केवल अन्य जनजाति समूहों के बीच, बल्कि भारतीय संबंध में भी आदिवासियों की प्रतिष्ठा और शक्ति की स्थिति पर काफी बदलाव देखते हैं।

विश्वविद्यालय / कॉलेज, शिक्षित युवा पारंपरिक मानदंडों और व्यवहार के खिलाफ खड़े होते हैं। मुंडा और ओरांव क्षेत्र: पेपा और ध्मुरिकिया के खिलाफ हैं। वे इसे वर्तमान दुनिया के लिए अनुपयुक्त मानते थे। सभी के युवाओं को खुदे क्षेत्र में लड़के और लड़कियों द्वारा समूह वृत्त पसंद नहीं है और वे इसे एक जरी रिवाज के रूप में वर्णित करते हैं। कड़ी परंपराओं के बावजूद जनजाति युवाओं द्वारा नापसंद किए जाने वाले कुछ सामाजिक प्रथाओं को अभी भी जारी रखा गया है और वे उनके लिए बहुत प्रतिकूल नहीं हैं। यह उनके द्वारा बुजुर्ग और जेरोटोक्रेसी(एक राजनीतिक व्यवस्था जिसमें बुजुर्ग का शासन रहता है) को दिखाए गए समान के कारण है।

जनजाति युवाओं वर्तमान में जनजाति विश्व भूमि को बढ़ा करना और अपने समूह के प्रतिष्ठित निर्वाह की सुविधा प्रदान करना चाहते हैं। यह जनजाति की पारंपरिक गिरिरंगा और गौरव को बनाए रखने या एक निश्चित ऊंचाई पर ले जाना चाहते हैं। ऐसा करने में युवाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। पूर्वी भारत का झारखंड (विहार के विभाजन के द्वारा बनाया गया एक नया राज्य) आंदोलन, मिजॉक्राम का मिजो नेशनल मूवमेंट आदि, शिक्षित जनजाति युवाओं का सक्रिय समर्थन और सहयोग से ही हुआ है। मुख्य उद्देश्य अपने स्वयं के क्षेत्र में अधिक स्वायत्तता रहा है। जनजाति युवाओं जैसे बिसमें सेवादल, पहाड़िया उर्ध्वा दल आदि के युवा संगठन अपने कुछ पुराने धार्मिक और सांस्कृतिक विकास के खिलाफ लड़ते हैं। भूमि अलगाव, भ्रष्टाचार के खिलाफ सामाजिक बुझे छेड़कर अपने स्वयं के विकास के लिए भी काम करते हैं और गैर-आदिवासियों और सरकारी अधिकारियों द्वारा रोकण के खिलाफ भी आवाज उठाते हैं। यहा तक कि कुछ सामाजिक विकृतियों को जनजाति युवाओं द्वारा हटाया गया है।
दूर िशा िनदे
शालय
महामा गांधी अंतररा िी यहंदी िव वालय
एम.ए. समाजशास्त्र

बीच, सुंदर लड़िकियों को सबसे अधिक मूल्यवान माना जाता है और अत्यधिक वधू मूल्य प्राप्त होता है। उनकी शादी की समस्याओं में उपहारों की एक श्रृंखला शामिल है। इन उपहारों में पीने योग शराब, बर्तन, मोटियों, मिट्टी, नाल इत्यादि का समावेश होता है, जिससे एक बेटे की शादी एक आदमी को एक कंगली बन देती है। इन अनुष्ठानों का आज के युवाओं का जोरदार विरोध किया जाता है और वे न्यूनतम खर्च के साथ एक साधारण समारोह का पालन कर सकेंगे। भोजन युवाओं में भी यही स्थिति है, जो अपने युवागृह (रंग-बंग) का विरोध कर रहे हैं। वे इस एक शीर्षक वेक्टर के में स्थापित करना चाहते हैं।

आज जनजाति युवा संस्करणकालीन दौर से गुजर रहा है। युवागृह भी शिष्य, प्रस्तावना अधिक संभावित होते हैं। जनजाति युवाओं को जंगल या दूरदराज के इलाकों के विशिष्ट पारंपरिक लोगों के रूप में यौन संबंध की अनुमति दी जानी चाहिए। इसलिए आज जनजाति युवा अपनी पारंपरिक पहचान खोए। बिना शहरी होमो-सेपियंस के साथ खुद को आत्मनिर्भर करने का सुनहरा राता बना रहे हैं।

सन्तिवंदन (1965) यह स्पष्ट किया है कि जनजातियों में युवागृह की संस्थाएं यौन और विघटन की प्रक्रिया में है। जनजाति युवाओं का उनकी मूल घरेलू भूमि से प्रभावित होता है। जनजाति लोगों के उनकी मूल घरेलू भूमि से अलग-से प्रभावित होता है। उन्होंने अन्य समूहों के साथ कई गटन किये और कई गांवों की स्थापना की। 

युवागृह परिस्थितियों के शिकार क्यों हुए? इसका कारण अभिभावक, शिक्षा के विकास और ईसाई धर्म के प्रभाव है। अब जनजाति युवा बाहरी दुनिया से अपनी संस्कृति और बौद्धिक अभिभावकों से स्पष्ट है। उन्होंने अन्य समूहों के साथ कई गटन किये और कई गांवों की स्थापना की। 

युवागृह परिस्थितियों के शिकार क्यों हुए? इसका कारण अभिभावक, शिक्षा के विकास और ईसाई धर्म के प्रभाव है। अब जनजाति युवा बाहरी दुनिया से अपनी संस्कृति और बौद्धिक अभिभावकों से स्पष्ट है। उन्होंने अन्य समूहों के साथ कई गटन किये और कई गांवों की स्थापना की। इसका कारण अभिभावक, शिक्षा के विकास और ईसाई धर्म के प्रभाव है।
भोटिया के रंग-बंग अभी भी मौजूद हैं, लेकिन भोटिया लोग चीन युद्ध 1962 के बाद तिब्बत के साथ व्यस्तता के कारण एक व्यस्तता जीवन जी रहे हैं। उनके पुरुष अपने परिवारों के साथ रह रहे हैं। परिवार नियोजन कार्यक्रम के विस्तार और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना के कारण वे यौन जीवन की कुछ वैज्ञानिक अन्तर्गत से परिचित हुए हैं। पंचायत राज और नागरिक अदालत प्राप्ती की शुरुआत के कारण उनके अधिकारों के संरक्षण के बारे में एक जागृति बढ़ी है।

बस्तर जिले की मूर्ति जनजाति अब भी घोटुल परंपरा में लगी हुई है। गरीबी के कारण वे शहरी-संकृति से लगभग अछूते नहीं हैं। वे बाहरी लोगों को घोटुल के बारे में बताने में भी संकोच करते हैं और वे इसे जारी रखने के लिए बहुत उत्साहित हैं। घोटुल केवल स्वतंत्र सेक्स का स्थान नहीं है, बल्कि पारंपरिक ज्ञान के प्रसारण का स्थान भी है जो उनके संस्कृतिक जीवन की रक्षा और प्रतिभागित करता है।

सरकार इन युवागृह का उपयोग संचार या सूचना के रूप में कर रही है। यह रंग-बंग और घोटुल या किसी अन्य युवागृह की मदद से शिक्षा के विस्तार, परिवार, नियोजन, स्वास्थ्य संबंधी मामलों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। आज रंग-बंग और घोटुल ने अपना मूल अर्थ खो दिया है और एक नए चेहरे पर ले लिया है।

3.3.10 सारांश (Summary)

इस इकाई में आपने पढ़ा की युवाओं के जीवन का विकास होता है। ऐसा है क्योंकि युवाओं के वैकल्पिक नृत्य का निकाल होता है। एक जीवन के मन में अगर युवाओं की एक भूमिका होता है तो वह एक नवीनिता के सांस्कृतिक जीवन की पूरीति तत्वीय खींच सकता है। यह संस्कृति और रीति-रिवाज का मिश्रण है जो सामाजिक और सामुदायिक चरण में एक जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह संस्कृति के कारण एक जीवन के सर्वांगीय घटना का स्थान है जो सामुदायिक और सामाजिक चरण में एक जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह सामाजिक और सामुदायिक चरण में एक जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह संस्कृति के कारण एक जीवन के सर्वांगीय घटना का स्थान है जो सामुदायिक और सामाजिक चरण में एक जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह संस्कृति के कारण एक जीवन के सर्वांगीय घटना का स्थान है जो सामुदायिक और सामाजिक चरण में एक जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह संस्कृति के कारण एक जीवन के सर्वांगीय घटना का स्थान है जो सामुदायिक और सामाजिक चरण में एक जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
3.3.11 बोध प्रश्न
बहुविकल्पीय प्रश्न
1. गोड जनजाति में युवागृह को किस नाम से जाना जाता है- (ख) मोरूग घोटुल (ग) रंगबंग (घ) घोटुल
2. मुंडा और हों जनजाति में युवागृह को किस नाम से जाना जाता है- (क) गिटीओरा (ख) घोटुल (ग) रंगबंग (घ) घोटुल
3. रंगबंग नामक युवागृह किस जनजाति में पायी जाती है- (क) मारिया (ख) गोड (ग) भोटिया (घ) कोन्यांक नागा
4. किस जनजाति में लड़के के युवागृह को ‘बान’ तथा लड़कियों के युवागृह को ‘यो’ कहते हैं- (क) मारिया (ख) गोड (ग) भोटिया (घ) कोन्यांक नागा
5. भील जनजाति मुख्यरूप से किस राज्य में पायी जाती है- (क) उत्तर प्रदेश (ख) मध्य प्रदेश (ग) बिहार (घ) पश्चिम बंगाल
उत्तर- 1. (ख) घोटुल, 2. (क) गिटीओरा, 3. (ग) भोटिया, 4. (घ) कोन्यांक नागा, 5. (ख) मध्य प्रदेश

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
1. युवागृह की उपचरी, महत्व और लक्षण पर निबंध लिखिए?
2. जनजातीय युवागृह की उपचरी के सिद्धांतों की विस्तृत व्याख्या लिखिए
3. युवागृह को परिभाषित करते हुए युवागृह के महत्व की विस्तृत व्याख्या कीजिए
4. रंग-बंग एवं घोटुल को परिभाषित करते हुए दोनों में अंतर स्पष्ट कीजिए
5. युवागृह का वर्तमान परिदृश्य क्या है? सविस्तार समझाइए।

लघु उत्तरीय प्रश्न
1. युवागृह पर संक्षेप पिंपड़ी लिखिए
2. युवागृह की उपचरी को संक्षेप में लिखिए
3. युवागृह के महत्व को स्पष्ट कीजिए
4. युवागृह के लक्षणों को स्पष्ट कीजिए
5. रंग-बंग को स्पष्ट कीजिए
3.312 संदर्भ ग्रंथ सूची


9. Lovie, R.H. (1949). Social organization. chapters 1 & IX.


इकाई 4 आदिम अर्थव्यवस्था
(Primitive Economy)

इकाई की रूपरेखा
3.4.0 उदार
3.4.1 प्रस्तावना (Introduction)
3.4.2 आर्थिक व्यवस्था
3.4.3 सरल समाजों की आर्थिक प्रणाली
3.4.4 आदिम अर्थव्यवस्था की परिभाषाएं
3.4.5 जनजातीय अर्थव्यवस्था
3.4.6 भारतीय जनजातीय अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक विशेषताएं
3.4.7 आदिम अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण
   3.4.7.1. शिकार एवं संकलन स्तर की अर्थव्यवस्था
   3.4.7.2. पशुपालन स्तर की अर्थव्यवस्था
   3.4.7.3. कृषि स्तर की अर्थव्यवस्था- पहाड़ी की खेती तथा ‘स्लेश एंड बन्न’ अर्थव्यवस्था
   3.4.7.4. औद्योगिक स्तर की अर्थव्यवस्था
   3.4.7.5 शिल्पकार
3.4.8 सरल समाज की अर्थव्यवस्था की विशेषताएं
3.4.9 विभिन्न कारों में लगी भारतीय जनजाति
3.4.10 विनिमय प्रणाली
   3.4.10.1 वस्त्र विनिमय (बार्टर)
   3.4.10.2 अनुदानिक या उत्सर्जी विनिमय
   3.4.10.3 साधारण विनिमय या अनुमोदनता
3.4.11 सरल तथा जटिल अर्थव्यवस्था में तुलनात्मक अंतर
3.4.12 सारांश (Summary)
3.4.12.1 बोध प्रश्न
3.4.12.2 सूची
3.4.0 के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप यह जानने में सक्षम होंगे कि:

- सरल समाजों की आर्थिक प्रणाली किस प्रकार विशेषताएं होती है?
- आदिम अर्थव्यवस्था किस प्रकार विशेषताएं और लक्षण का है?
- विनिमय प्रणाली का क्या अर्थ है?

3.4.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव अपनी आधारभूत आवश्यकताओं के पूर्ति हेतु विविध गतिविधियां करता है। इस प्रकार उत्पादन, उपभोग, व्यापार तथा वितरण की व्यवस्था प्रारंभ होती है जो अंततः मनुष्य के आर्थिक जीवन को संचालित करती है। संक्षेप में इसी को आर्थिक व्यवस्था कहते हैं। आदिम अर्थव्यवस्था में आर्थिक गतिविधियां समतावादी फ्रेम-वर्क के भीतर होती है। उत्पादन प्रणाली सरल तो होती है लेकिन वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान एक जीवल प्रकार है। विनिमय के रूप पारस्परिक और पुनर्विद्वेशन प्रकार के होते हैं। यह इकाई आदिम अर्थव्यवस्था किस प्रकार विशेषताएं और आधुनिक अर्थव्यवस्था से विभिन्तता का विश्लेषण करती है।

3.4.2 आर्थिक व्यवस्था (Primitive Economy)

मनुष्य की तीन आधारभूत एवं प्राथमिक आवश्यकताएं होती है भोजन, वस्त्र एवं मकान जिनको कार्ल मार्क्स ने ‘जीवन के आवश्यक भीतर तृण कहा’। इन्हें को जुटाने के प्रयास में मनुष्य विभिन्न समूहों से समझौता करता है और इस प्रकार उत्पादन, उपभोग, व्यापार तथा वितरण की व्यवस्था प्रारंभ होती है जो अंततः मनुष्य के आर्थिक जीवन को संचालित करती हैं। संक्षेप में इसी को आर्थिक व्यवस्था कहते हैं।

जनजातियों से संबंधित आर्थिक संगठन का अध्ययन सर्वप्रथम ट्रोजनियांड दीप वासियों का ब्रिटिश मानववादी मैलिनोवस्की (1922) में किया गया था। इसके पश्चात रेम्स्ट फर्थ ने न्यूजिलेंड की माओरी जनजाति तथा पोलिनेशियाई दीप समूह में स्थित जनजातियों के आर्थिक संगठनों का प्रकार्यालक्षण विश्लेषण किया। भारतीय जनजातियों के आर्थिक संगठन संबंधी अध्ययन सर्वप्रथम दो अर्थशास्त्रियों डी.एस. नाग एवं आर.पी. सक्सेना ने किया। डी.एस. नाग ने मध्य प्रदेश की बैंग क्षेत्र जनजाति तथा आर.पी. सक्सेना ने मध्य प्रदेश के अन्य जनजातियों का एवं बिहार के आर्थिक संगठन का अध्ययन किया जिन्हें आदिम अर्थव्यवस्था नाम से जाना गया।
3.4.3 सरल समाजों की आर्थिक प्रणाली

हर्वर्ट स्केपर ने सरल समाज को एक ऐसी प्रणाली के रूप में परिभाषित किया है, जो एक सरल कार्य करने के लिए पूरी तरह से असंवर्ध हो और जिसके कुछ भाग सार्वजनिक अंत के लिए संयोज करते हैं। साधारण समाजों में श्रम विभाजन अंत होता है। व्यवसायिक भेदभाव मुख्य रूप से जनम, लिंग और आयु तक सीमित होता है। इस समाजों का कोई विशेष आर्थिक संगठन नहीं है। उत्पादक कौशल सरल है और उत्पादकता कम होती है। इसलिए ये समाज बड़े जनसंख्या आकार को बनाए नहीं रख सकते हैं। अधिकांश वस्तुक शस्त्र भोजन जुटाने की गतिविधियों में लगे हुए हैं। बहुत कम या कोई अधिशेष नहीं होता है, इसलिए सामाजिक अनुमोदनाएं महत्वपूर्ण नहीं हैं और आर्थिक गतिविधियां समतावादी प्रेम-वर्ण के भीतर होती है।

उपादन प्रणाली सरल है लेकिन वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान एक जटिल रूप है। विनिमय के रूप पारस्परिक और पुनर्वितरण प्रकार के हैं। प्रमुख मार्केट में भोजन और अन्य संसाधनों वाले क्षेत्रों में रहने वाले कुछ सरल समाज विशिष्ट उपयोग मंक लिख हैं। सदस्यों के पास उच्च स्तर की उपलब्धि कि प्रेरणा का अभाव है क्योंकि आर्थिक अधिशेष के संचय का कोई तीत्र पूर्वाधार नहीं है। अधिकांश: आर्थिक संचयित रूप से संचयित या संचय बनाए रखने के लिए उपयोग का उपयोग करने का कोई नियम नहीं है। क्योंकि आर्थिक संचय के संचय का कोई तीत्र पूर्वाधार नहीं है। जीवन प्रदेश और संगठन के बीच कोई संबंध नहीं है और क्योंकि वे अलग-अलग अंश में परस्पर व्यवहार करते हैं। इसलिए संचयित रूप से संचयित या संघर्ष व्यवस्था में आर्थिक अधिकांशता हासिल है। नवाचार दुर्लभ है और परिवर्तन धीमा है। प्राथमिक प्रयासों और मानवीय माल और सेवाओं के उपादन और विनिमय को विनिमय करते हैं।

3.4.4 आदिम अर्थव्यवस्था की परिभाषाएं (Definition of Primitive Economy)

रेमंड फर्थ के अनुसार “अर्थव्यवस्था मानवीय क्रियाकलापों का वह निश्चित क्षेत्र है, जिसका संबंध साधनों के परिसमाप्त उपयोग और संगठन से है। इस प्रकार मनुष्य विविध द्वारा आबादक और उपादानों से तात्त्विक स्थापित करता है”।

मनुष्य का प्रारंभ, जिसने “जीवन के विशिष्ट दिनों विशिष्ट आवश्यकताओं को कम से कम प्राप्त करने के लिए मानव संघर्षों तथा प्रयासों को नियमित एवं संगठित करना ही अर्थव्यवस्था है।”

3.4.5 जनजातीय अर्थव्यवस्था (Tribal Economy)

अर्थव्यवस्था किसी भी सामाजिक प्रणाली की प्रमुख उप-प्रणाली में से एक है। भारतीय आदिवासी के अध्ययन अभ्यास के लिए आर्थिक प्रणाली की संरचना और गतिविधियों की मुख्य आवश्यकता है क्योंकि आदिवासी जाति के लिए अधिकांश चुनौतियां उनी में से आती हैं। आदिवासी समाज और गैर-आदिवासी समाज की आर्थिक संरचनाओं के बीच महत्वपूर्ण अंतर है, आदिवासी अर्थव्यवस्थाएं विभिन्न स्तरों पर होती
दूर िशा िनदे
शालय,
महामा
गांधी अंतररा
िय िहंदी िव िवालय
एम.ए.
समाजशा
गेट सेमी
टर–सामाजिक मानविवाह
है, जिसमें भोजन एकत्र करने से लेकर कृषि श्रमिक प्रकार शामिल हैं।

अर्थव्यवस्था का सीधा सा मतलब है अर्थशास्त्र की संस्था। अर्थव्यवस्था को एक संस्थागत व्यवस्था के रूप में समझा जा सकता है जो व्यक्तिगत और सामुदायिक जीवन के लिए अस्तित्व के भौतिक साधनों के अधिग्रहण, उत्पादन और वितरण की सुविधा प्रदान करती है। अर्थशास्त्र प्रणाली या इसकी संरचना दोहराव और अपेक्षाकृत स्थायी है। डाल्टन (1969) के अनुसार "एक अर्थव्यवस्था संस्थागत गतिविधियों का एक समूह है, जो सामग्री और माल और विशेषज्ञ सेवाओं के अधिग्रहण, उत्पादन और वितरण के लिए प्राकृतिक संसाधनों, मानव श्रम और पृष्ठों किकी को जोड़ती है।

डाल्टन (1971) तीन परस्पर संबंधित विशेषताएं हैं जो आदिवासी अर्थव्यवस्था की विशेषता हैं। वे इसप्रकार हैं:
1. यह एक संरचनात्मक व्यवस्था है और भौतिक वस्तुओं और सेवाओं के अधिग्रहण और उत्पादन नियमित हैं।
2. माल और सेवाओं के अधिग्रहण और उत्पादन की प्रक्रिया में, मानव श्रम का विभाजन, प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग और पृष्ठों किकी के अनुप्रयोग (उपकरण और ज्ञान) शामिल हैं।
3. वितरण प्रक्रिया में, सतही उपकरणों और प्रथाओं जैसे बाजार स्थान, कुछ प्रकार के लेनदेन को मापने के लिए उपकरण शामिल हैं।

इस प्रकार अर्थव्यवस्था को एक संस्थागत और मानक संरचना के रूप में समझा जा सकता है जो लोगों के समूह के बीच आर्थिक संबंधों को नियंत्रित करती है। यह समूह एक आदिवासी गांव से लेकर एक आधुनिक राष्ट्र यहाँ तक कि पूरी दुनिया में हो सकता है। इस प्रणाली द्वारा शामिल प्रमुख आर्थिक प्रक्रियाएं, मानव अस्तित्व और जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं का अधिग्रहण, उत्पादन और वितरण हैं।
3.4.6 भारतीय जनजातीय अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक विशेषताएं (Structural Characteristics of Economy of Indian Tribal)

एल.पी. विद्याश्री और वी.के. राय (1976) ने नौ संरचनात्मक विशेषताओं को इंगित किया है जो भारत में जनजातीय अर्थव्यवस्थाओं की विशेषता है। वे इस प्रकार हैं-

1. वन आधारित अर्थव्यवस्था

कुछ जनजातियों की अर्थव्यवस्था वन परिस्थितिकी के चारों ओर घूमती है। न केवल उनकी अर्थव्यवस्था, बल्कि संस्कृति और सामाजिक संगठन भी जंगलों से जुड़े हुए हैं। वन में रहने वाले सभी आदिवासी ने इन वनों में रहने के लिए उत्पादन का उपयोग किया है। वन में रहने वाले जनजाति के लिए वन आधारित अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख प्रकृतिक संसाधन आधार का निर्माण करता है। यह लोग अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए जंगलों पर निर्भर होते हैं। वन रहने वालों को लोग अपनी जीवन दृष्टि लेने के लिए जंगल पर निर्भर होते हैं। जंगल की सहायता से बहुत तकनीकी सहायता के बिना इन आदिवासी सरल संसाधनों की मदद से वन संसाधनों का दोहन करते हैं।

2. उत्पादन का घरेलू तरीका

परिवार, भारत की आदिवासी अर्थव्यवस्था में उत्पादन के साथ-साथ खपत की मूल जगह का निर्माण करता है। जनजातीय समुदाय की सरल अर्थव्यवस्था में परिवार के सभी सदस्य मिलकर उत्पादन की इकाई बनाते हैं और उत्पादन और उपभोग की आर्थिक प्रक्रिया में सही संलग्न होते हैं। श्रम के आवंटन के निर्धारण लेने की प्रक्रिया, और उपज परिवारिक दोषों से नियंत्रित होती है। घरेलू उत्पादन मुख्य रूप से बाजार के लिए उनकी खपत की जरूरतों को पूरा करता है। आदिवासी अर्थव्यवस्था का निर्वाह अर्थव्यवस्था कहना
उत्तर है। आदिवासी परिवार में श्रम का विभाजन आयु और लिंग पर आधारित है। श्रम का लिंग विभाजन आदिवासी विश्वास पर आधारित है कि महिलाएं शारीरिक रूप से कमजोर होती हैं। लड़कों और लड़कियों को उनकी उम्र के अनुसार अलग-अलग काम आवश्यक किए जाते हैं।

3. सरल प्रौढ़ोगिकी

एक अर्थव्यवस्था का विकास उसकी तकनीकी प्रगति के स्तर पर निर्भर करता है। प्रौढ़ोगिकी में उत्पादक उद्देश्य के लिए प्राकृतिक और साथ ही मानव संसाधनों के उपयोग में ओजों और उपकरणों का उपयोग शामिल है। आदिवासी अर्थव्यवस्था की उपयोगी और वितरण प्रक्रिया में उपयोग किए जाने वाले उपकरण आयु और लिंग पर कच्चे, सस्ते और स्वदेशी रूप से बाहर की सहायता के बिना विकसित होते हैं। दैहिक श्रम और उच्च स्तर की अपवाद और कठिनाई, जो उत्पादन के उनके निर्वाह स्तर के लिए उपयुक्त है। कृषि का हल, लकड़ी के एक टुकड़े से बना है और गहरी जुताई नहीं कर सकता है।

4. आधिक लाभवर्गीय में लाभ की अनुपस्थिति

लाभ के अधिकार, आधिक संबंध का मुख्य लक्ष्य है जो आधुनिक पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं की संचालित करता है। लेकिन लाभ का उद्देश्य भारत के आदिवासी अर्थव्यवस्थाओं में आधिक व्यवहार में लगभग अनुपस्थित है। दो प्रमुख संस्थागत कारक अर्थव्यवस्था की सांप्रदायिक प्रकृति और विनियम के माध्यम के रूप में धन का अभाव इसके लिए जिम्मेदार हैं। साथी पदार्थों के लिए स्वतंत्र श्रम के पारस्परिक दावेदार और वित्त के परिणामस्वरूप कोई महत्वपूर्ण अधिशोष नहीं है। इसलिए भी है क्योंकि वस्तुओं और सेवाओं का आदन-प्रदान वस्तु विनियम योग्यात्मक से होता है। विनियम का माध्यम के रूप में पैसा आदिवासी अर्थव्यवस्थाओं में लगभग अनुपस्थित है। इसलिए माल और सेवाओं के मूल्य को मापने और विनियम प्रक्रिया में उत्पन्न लाभ के लिए धन के रूप में संग्रहीत करने की कोई गुणधर्म नहीं है।

5. समुदाय: आधिक सहयोग की एक इकाई

समुदाय जनजातिय समाजों में एक सहकारी इकाई के रूप में काम करता है और सामूहिक रूप से आधिक गतिविधियों को दूर किया जाता है। आदिम अर्थव्यवस्था अन्य समुदायिक संबंधों में अन्तर्निहित है। डाल्टन (1991) ने माना कि निम्न स्तर की प्रौढ़ोगिकी, अर्थव्यवस्था के छोटे आकार और बाहरी दुनिया से इसके सापेक्ष अलगाव जैसे कारक कई सामाजिक रिश्तों को साझा करने वाले पारस्परिक निर्भरता में थोपदान करते हैं। आधिक व्यावस्था में, प्राचीन आदिवासी ग्राम समुदाय को सहकारी इकाई माना जाता है। ग्रामीणों के करीबी आधिक संबंध हैं। उन्में से ज्यादातर सामाजिक गतिविधियों में लगे हुए हैं जैसे कि मवेिश्य को चराना और कृषि क्षेत्रों को संयुक्त रूप से साथ में। उनके युवा संयुक्त रूप से मवेिश्यों को चराने और एक साथ अपने गांव की रखा करते हैं। व्यस्तक पुष्प और महिला संयुक्त रूप से पारस्परिक आधार पर एक दूसरे के क्षेत्र में धन की रोपाई और कटाई करते हैं।
6. उपहार और औपचारिक विनिमय

सामाजिक अंतरंगों को आत्मिक देने वाले पारस्परिक उपहार आदिवासी अर्थव्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आदिवासी समाजों में वितरण की प्रक्रिया गैर-आर्थिक संबंधित संपत्ति का हिस्सा है और उपहार और औपचारिक विनिमय का रूप लेती है। प्रत्येक समूह, चाहे एक विदेश, रिश्वद्वार, समुदाय, ग्रामीणों या कुल के रूप में जनजाति, पारस्परिकता के उपयुक्त मानवदंड दर्शाती है। आर्थिक मानवविज्ञानी डाल्टन (1971) का मानना है कि लेन-देन का नयाजीय तरीका पारस्परिकता यानी भौतिक उपहार और प्रत्युत्तर उपहार है, जो रिश्वद्वार के सामाजिक दायित्वों से प्रेरित है। सर्विस (1966) के अनुसार आपसी दायित्व तीन मानक, दिग्गज या स्तर पर मिलने होते हैं। पारस्परिक समान्य, संतुलित पारस्परिकता के स्तरों में दी गई सहायता लेना, वापस देना और साझा करना, आत्मिक उपहार लेना, पारस्परिक सहायता एवं उदारता में अनुप्रेरित है। संतुलित पारस्परिकता प्रत्यक्ष विनिमय है और ग्राम समाज, समान मूल्य का होना चाहिए। वस्तुओं और सेवाओं के आदान-प्रदान की वस्तु विनिमय प्रणाली इस पारस्परिकता का सबसे अच्छा उदाहरण है। नकारात्मक पारस्परिकता कुछ नहीं के लिए कुछ पाने की कोशिश है।

7. आविष्कार बाजार

बाजार एक प्रमुख आर्थिक संस्थान है जो सभी लोगों के बीच वस्तुओं और सेवाओं के वितरण की सुविधा प्रदान करता है, साथ ही मानवशास्त्रियों ने जनजातियों में स्थायी बाजार की आवश्यकता का अवलोकन किया। ग्रामीण लोगों में, आविष्कार बाजार और वस्तु विनिमय की प्रणाली आर्थिक प्रवृत्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ये आविष्कार बाजार सामाजिक, व्यापक, स्तरीय रूप से और ग्रामीण लोगों में व्यापक थे। ये आविष्कार बाजार, जिन्हें स्थानीय रूप से बाजार, हाट के रूप में जाना जाता है, आमतौर पर 5-10 KM के दायरे में आदिवासी ग्रामीणों की सेवा करते हैं। और समय के नियम मानव को 10. बाजार व्यवस्था पर एक विशिष्ट स्थान पर कार्य करते हैं। इन बाजारों में, विभिन्न जनजातियों और जाति समूहों के लोग एक साथ आते हैं और अपने व्यापार लेनदेन का संचालन करते हैं। इसमें देशी (स्थानीय रूप से उत्पादित) सामान जैसे खाद्य, स्थानीय खाद्य से बने हुए कपड़े, टोकरां आदि का विनिमय वस्तु विनिमय में किया जाता है, जबकि धन का उपयोग गैर-देशी (जनजातीय अंतरंग के पाहर उत्पादित) सामानों में किया जाता है। नमक, मिल के कपड़े, रेडीमेड कपड़े, सौंदर्य प्रसाधन, साजन आदि के रूप में। समय-समय पर बाजार आदिवासी सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। वे राष्ट्रीय और व्यापक अर्थव्यवस्था के साथ जनजातीय अर्थव्यवस्था की बातचीत के अलावा जाति और जनजाति के लोगों के बीच सांस्कृतिक संपर्क को सुविधाजनक बना रहे हैं। सामाजिक बाजार व्यापक राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ आदिवासी अर्थव्यवस्था को एकीकृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह आदिवासी अर्थव्यवस्था के नवाचार,
विविधीकरण को बढ़ावा देता है। बाजार ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक जीवन का केंद्र है। यह क्षेत्र में व्यावसायिक रूप से विविध समुदायों के संसाधनों और भौतिक वस्तुओं के पुनर्वितरण के केंद्र के रूप में कार्य करता है।

8. परस्पर निर्भरता

जनजाति के बीच आर्थिक संबंधों को अक्सर अन्योन्याश्रितता के रूप में माना जाता है, जबकि प्रतिस्पर्धा की भावना आदिवासी आर्थिक जीवन में लगभग अनुपस्थित है। जनजातियों, या जनजातीय लोगों और गैर-जनजातीय लोगों के बीच संबंधांकन कार्यात्मक रूप से अन्योन्याश्रित हैं। विद्वानों और राय (1976) ने पाया कि आर्थिक कार्यान्वयन अन्योन्याश्रित जनजातियों के समान है, जो देश के अधिकांश क्षेत्रों में हिंदू, जाति समूहों के बीच पाई जाती है। जनजातीय प्रणाली के तहत, प्रत्येक जाति समूह, एक गांव के भीतर, अन्य जाति के लोगों को कुछ मानकीकृत सेवाएं देने की अपेक्षा की जाती है। परिवार के मुख्यों को एक व्यक्ति जो जनजाति के रूप में जाना जाता है, जबकि जनजाति के कमिन के रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति। जनजातियों के बीच आर्थिक अन्तरणिर्भरता देश के विभिन्न जनजातीय क्षेत्रों में विभिन्न तरीकों से देखी गई है।

3.4.7 आदिम अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण

डॉ. प्रयांक चुँबे का वर्गीकरण भोजन प्राप्त करना तथा उत्पादन के आधार पर आपने आदिम अर्थव्यवस्था को मुख्य रूप से तीन भागों में बांटा-
फोरडे तथा हर्सकोविट्स का वर्गीकरण

![Diagram](image)

जैकब तथा स्टेन का वर्गीकरण diagram

![Diagram](image)

ग्राम का वर्गीकरण

![Diagram](image)
हिल्डर ब्रांड का वर्गीकरण

लिस्ट और एडम स्मिथ का वर्गीकरण

भारतीय समाज में निवास और आजीविका के सोत विविध हैं। खानाबदोश शिकारी और भोजन-एकत्रित करने वालों की शुद्ध और सरल परजीवी आदत से शुरू ज्यादातर बसे हुए कृषकों और ओद्योगिक श्रमिकों के समूह के निवास के सोतों के लिए प्रकृति पर निर्भर हैं। विभिन्न वर्गीकरण के आधार पर अर्थव्यवस्था को निम्न चार भागों में बांटा जा सकता है।
3.4.7.1 शिकार एवं संकलन स्तर की अर्थव्यवस्था — बील्स एवं हाईजर ने इस प्रकार की अर्थव्यवस्था वाले समूह की चार विशेषताएं बतलायीं -

- यह लोग सूक्ष्मक जीवन व्यतीत करते हैं।
- यह लोग अधिकांशतः ग्राम संघर्ष परिवारों के सदस्य होते हैं।
- जनसंख्या घनत्व बहुत कम होता है।
- जंगलों में निवास करने के कारण वर्तमान संस्कृतियों का प्रभाव नहीं होता।

अंडमानी, ओंगे, जारवा, कादर, खारिया, लोढा आदि खानाबदोश आदिम जनजातियों इस श्रेणी में शामिल हैं, अब तक उनकी अर्थव्यवस्था निर्वाह स्तर की है। वे आमतौर पर ग्रामीण-शहरी जीवन से दूर रहते हैं और एक साधारण प्रकार का सामाजिक संगठन रखते हैं। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था वाली जनजातियां भारत में कादर, चेंधू, खारिया, कोरवा हैं। अंडमान द्वीपसमूह की जनजातियां जारवा, ओंगे, प्रेट अंडमानी, निकोबारी। श्रीलंका की बेदा, ऑस्ट्रेलिया की अस्त्रान्टा और अफ्रीका की बुशमैन, पिमी है।
3.4.7.2 पशुपालन स्तर की अर्थव्यवस्था- अर्थव्यवस्था के इस स्तर में मानव में स्थिरता आई इसमें मानव ने पशुओं को मारने की अपेक्षा उन्हें पालना अधिक उपयोगी समझा। सी.डी. फोर्ड ने पशुओं के चार उपयोग

- मास खाने के लिए।
- बोझा दोनों और गांडी खाने के लिए।
- चमड़े के उपयोग।
- सवारी के लिए।

बताएः-

अत्मोड़ा के भोटिया और दक्षिण भारत की नीलगिरी पहाड़ियों की टोड़ा पशुपालन अर्थव्यवस्था में रहते हैं। वे कृषि, शिकार, मछली पकड़ने आदि का अभ्यास करते हैं। वे आधुनिक दुनिया से बहुत दूर रहते हैं और भोज विकसित लेकिन गैर-जटिल सामाजिक संरचना में रहते हैं। वे दोनों, बहुविध प्रणाली का अभ्यास करते हैं। वे मेंस और गांडी का पालन करते हैं, दिन-प्रतिदिन उपयोग की वस्तुओं की खरीद के लिए दूध-उत्पादों का आदान-प्रदान किया जा रहा है। पशुपालन करने वाली प्रमुख भारतीय जनजातियां हैं तमिलनाडु के टोड़ा (मेंस पालन)हिमाचल की गड़ी (भेड़ पालक) उत्तराखंड के भोटिया कृतु प्रवास करते हैं एसिमों रेडियो और कुते पालते हैं।

3.4.7.3 कृषि स्तर की अर्थव्यवस्था- इस अवस्था के पहले स्तर में फल-फूल देने वाले पौधे उगाए गए होंगे ऐसा संभव है कि ही भोजन में हुआ होगा। अनाज की खेती स्वयंप्रयाग समय से शुरू हुई होगी। उन्नत समाजों के कारकों की तरह, भारत में कुछ आदिवासियों स्वयंप्रयाग से बने हुए कृषि का सहारा ले रहे हैं। ओराओं, मुंडा, गंडा, भुमज, हो, संताल, बर्तमान में कुशल कृषि हैं। वे रोपाई विधि से गीली खेती करते हैं। कृषि सीमा और खाद के अनुप्रयोग उन्हें अब भी जानते हैं। इन कृषि के ज्ञान में मसले का परिचय होता है। वे अपने स्वामित्व वाले क्षेत्रों में और साथ ही दूसरों के क्षेत्रों में शेयर-क्रेपर के रूप में काम करते हैं। आदिवासियों आधारी के प्रथम धर्म कृषि मजदूर के रूप में काम करते हैं। नौकरियों की तलाश में, ये भूमिहीन कृषि मजदूर पढ़ोसी राज्यों में मौसम प्रवास में भाग लेते हैं। इन बसे हुए किसान आदिवासियों के सामाजिक
और धार्मिक संगठन बहुत विकसित और अन्यथा जमिल हैं। बड़ों का पारंपरिक परिषद (पंचायत) को सामाजिक मानवशेष को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। भारत में मुद्दा कृषि करने वाली जनजातियों हैं गोंड, भील, मुंडा, संघाल, बैगा, खासी, जयंतीया आदि।

3.4.7.4 पहाड़ की खेती तथा ‘स्लेश एंड बर्न’ अर्थव्यवस्था: गोंड, नागा, खारिया, जुआंग, रयांग, खासी, गारो, "स्लेश एंड बर्न" विधि द्वारा आदिवसी खेती करते हैं। इसे विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग नामों से जाना जाता है। असम की जनजातियों इसे डू, गोंड को पोडू आदि कहती हैं। इस उद्देश्य के लिए एक पहाड़ी वनस्पति का चयन किया जाता है, जो लगतार तीन खेती के मौसम के बाद छोड़ दी जा सकती है क्योंकि इस डू से प्रजनन क्षमता कम हो जाती है। पीछे, खारियाँ और उगने वाले पेड़ों का चयन किया जाता है और एक या एक महीने के लिए सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। पिर, उनमें आग लगा दी जाती है। पत्ते, डू में खाद के रूप में काम करती है। मानसून की शुरुआत में, डू को एक साधारण खराब छोड़ या कुदाल से ढीला किया जाता है। विभिन्न प्रकार की खराब फसलों के बीज जैसे बाजरा, ज्वार, कुब्जी, दाले, आलू, टंबाकू और गना इस प्रकार की खेती में उगाए जाते हैं। यह आंशिक रूप से उनका समर्थन कर सकता था लेकिन पूरी तरह से नहीं। उनमें निर्वाह के सहायक स्रोत के रूप में कुछ अन्य व्यवसाय भी होते हैं।

3.4.7.5 औद्योगिक स्तर की अर्थव्यवस्था- आदिम समाज में टोकरी बनाना, रसी बनाना, चटाई बनाना, लोहे के औजार एवं बर्न आदि बनाए जाते हैं। आदिवासियों का एक बड़ा हिस्सा आर्थिक कठिनाइए के कारण भूमिहीन श्रमिक वर्ग बन गया है, जो वर्तमान में उनका सामना कर रहे हैं। वे विभिन्न व्यवसायों में अपने दैहिक क्षेत्र को बेचकर अपनी आजीविका कमाते हैं।

3.4.7.6 शिल्पकार: कुछ आदिवासी अभी भी निर्वाह के स्रोत के रूप में अपने पारंपरिक शिल्प को बरकरार रख रहे हैं। नागा और खासी रंगीन हाथ-कला उत्पादों के विशेषज्ञ हैं और लोहार पारंपरिक कार्य लोहे के उपकरण के लिए हैं। अपने पारंपरिक विशेष शिल्प में ममलुडी लाभ के साथ, वे आदिवासी वर्तमान में अन्य प्रकार की नौकरियों का सहारा लेते हैं। उनकी अर्थव्यवस्था का मिश्रित पैटर्न उनकी सामाजिक व्यवस्था पर विशेष रूप से प्रभावित रहता है।
3.4.8 सरल समाज की अर्थव्यवस्था की विशेषताएं
3.4.9 विभिन्न कायाँ में लगी भारतीय जनजाति

- बिहार, खारिया, चेंचु, कातर
- टोडा, भोटिया, गढ़ी, गुजरात
- मुंडा, उगव, भील, गोंड, कमार, संथाल
- कोंवा, कोटा, थार, झूल्डा
- संथाल, गोंड, हो

3.4.10 विभिन्न प्रणाली
3.4.10.1 वस्तु विनिमय (बांटर) - यह प्रत्यक्ष विनिमय है। इस के तीन रूप हो सकते हैं-
वस्तु विनिमय के दो प्रकार होते हैं

1. मुद्रा वस्तु विनिमय

2. मूक वस्तु विनिमय

मूक वस्तु विनिमय- जनजातियों में यह एक अनोखी प्रथा पाई जाती है। हर्षकोबिट्स ने इसे मौन व्यापार कहा। इस प्रकार के व्यापार में दोनों पक्षों में भेंट हुए बिना ही वस्तुओं का विनिमय होता है। यह प्रथा श्रीलंका की वेदाण्त जनजाति तथा उत्तराखंड के राजी जनजाति में पाई जाती है। यह लोग एक ही स्थान पर रात के अंधकार में अपने द्वारा उत्पादित वस्तुओं रख देते हैं तथा जिन वस्तुओं की उन्हें आवश्यकता होती है उनका संकेत छोड़ देते हैं। कुछ समय पश्चात दूसरा पक्ष आकर अपने जरूरत की चीजें ले जाता है और संकेत के अनुसार अपनी वस्तु में छोड़ जाता है। इसी प्रकार के व्यापार में मलाया के सेमंग तथा बीच जनजाति के बीच होता है। यह लोग आपस में शारीरिक रूप से अलग रहते हैं। अफ्रीका के उत्तरी पश्चिमी तट पर निवास करने वाली जनजातियां कार्यिकविशेष व्यवसायियों के साथ मूक व्यापार करती हैं। यह लोग तट पर आदिवासियों की आवश्यकता अनुसार दैनिक जीवन से संबंधित वस्तु में रख देते हैं और आग जला देते हैं। इसका धुआं देखकर आदिवासी लोग आते हैं। बदले में सोना रखकर अपनी आवश्यकता की वस्तु ले लेते हैं। इस प्रकार के अन्य उदाहरण आसाम के नागा कलामक व्यवसायों का व्यापार। राजस्थान के भीलों के कृषि उत्पाद से करते हैं। टोडा दूध का और कोटा बांस की वस्तुओं का व्यापार करते हैं। सांस्कृतिक रूप से धर्म तथा धार्मिक तथा शारीरिक आदर्शों के अनुसार दैनिक जीवन अनुसार दैनिक जीवन से संबंधित वस्तु में रख देते हैं। जापान की एमु अपने लकड़ी के उत्पादों जैसे थालियों, चमचे तथा धातु के बर्तन वाले वाद्य उपकरणों का व्यापार करते हैं। जापान की एमु अपने लकड़ी के उत्पादों जैसे थालियों, चमचे तथा धातु के बर्तन वाले वाद्य उपकरणों का व्यापार करते हैं। जापान की एमु अपने लकड़ी के उत्पादों जैसे थालियों, चमचे तथा धातु के बर्तन वाले वाद्य उपकरणों का व्यापार करते हैं।

3.4.10.2 अनुभवी या उस्तवी विनिमय- दुर्गी के अनुसार भारतीय मास ने अपनी पुस्तक ‘द गिफ्ट’ में सरल समाजों में उपहार के महत्व को बतलाने के लिए कुला तथा पोटलॉच नामक विनिमय संस्थाओं का सर्वप्रथम उल्लेख किया।

कुला प्रथा- इस प्रथा का विस्तार से वर्णन भ्रिटिश मानवशास्त्र मैलिनोव्स्की ने किया है। यह प्रथा ट्रोम्बीवांड, न्यूगिनी, एम्फ्रेट द्वीप लोन्ड्रे द्वीप तथा ड्विब में पाई जाती है।
यह प्रथा न सिर्फ आर्थिक है, बल्कि राजनीतिक, संस्कारिक, जादुई, धार्मिक तथा मनोरंजन आदि का संकुल है। मैलिनोविस्की के अनुसार इस में दो पक्षों के बीच आभूषणों का विनिमय होता है। यह आभूषण दो प्रकार के होते हैं लाल शंख का हार जिसे सोलावा कहते हैं और सफेद शंघ का बाजूबंद जिसे मवाली कहते हैं।

इनमें का एक निश्चित क्रम होता है सोलावा सदेव पड़ी की सुई की दिशा में तथा मवाली ठीक इसके विपरीत, पड़ी की सुई की विपरीत दिशा के क्रम में होता है।

कुला व्यापार की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं:

- कुला वस्तुओं का आर्थिक महत्त्व उतना नहीं जितना की धार्मिक, सांस्कृतिक महत्त्व होता है।
- इन वस्तुओं को रखने से सदस्यों की प्रतिशत बढ़ जाती है।
- यह एक स्थाई संबंध है जिन लोगों में एक बार कुला संबंध स्थापित हो जाता है फिर वह सदैव बना रहता है।
- कुला साझेदार आपस में भिन्न होते हैं और समय आने पर शानदार से एक-दूसरे की रक्षा करते हैं।
- कुला यात्रा या अभियान में वेद चुझू के लिए यात्रा करते हैं बिखार नहीं।
- भांजा अपने मामा के कुला समूह का स्वत: सदस्य होता है।
- इसमें सोलावा तथा मवाली के विनिमय के साथ-साथ अनावश्यक वस्तुओं का विनिमय होता है।

कुला से मिलती-जुलती अन्य प्रथाएं-
वासी- इसका उल्लेख मैलिनोविस्की ने किया है यह ट्रीथ्रायंड दीप समूह के भीतरी भाग में सभी गांव तथा तटीय गांव में होता है। ये गांव में रहने वाले मछिलियों फक्रित हैं और भीतरी गांव में रहने वाले कृषि पदार्थ याम उपजाते हैं। आपस में आदान प्रदान होता है इसे समाला कहते हैं। वासी संबंधी स्थाई एवं परंपरागत होते।
गिमारी - यह गृहस्थी की छोटी-मोटी वस्तुओं का विनिमय होता है। एक व्यक्ति अपने खुले साझेदार से गिमारी की संबंध में रख सकता है। जबकि इसमें बड़ी एवं महत्वपूर्ण वस्तुओं के विनिमय को लागू करते हैं। जैसे भूमि का हस्तांतरण लागू एक संस्कारी खरीद है।

पोकाला और चिपला - यह भी उपहार का एक तरीका है। जब कोई व्यक्ति अपने मुख्य को वस्तु में भंडार करता है तब उसे पोकाला कहते हैं। बदले में मुख्य द्वारा जैसे भंडार को यह चिपला कहते हैं।

उरगुबे - यह यह उपहार का एक तरीका है। जब कोई यह अपने मुख्य को वस्तु भट करता है तब उसे उरगुबे कहते हैं। बदले में उरगुबे का वस्तु भट करता है उसे उरगुबे कहते हैं।

गिमारी तथा उमाये - सालज़बरी ने अपनी पुस्तक 'फ्रॉम स्टोन टू स्टील' में न्यूज़ीलैंड की फ़हार्डियों की सियासत जनजाति में अंग्रेजों के विनिमय प्रथा का उल्लेख किया। इसमें जब समूहों के बीच शांति, श्रमिक, सुंदर पंखो वाले पक्षियों का विनिमय होता है तो उसे गिमारी कहते हैं। जब कम कीमत की दैनिक वस्तुओं का आदान-प्रदान होता है तो उसे उमाये कहते हैं।

पोटलैच - यह प्रथा अमेरिका के उत्तर पश्चिमी तट अलास्का और ब्रिटिश कोलंबिया में रहने वाली 4 जनजातियों शिमशियन, क्वाकिउटल, हैडा तथा लिगिंगतक में विशेष रूप से पाई जाती है। यह एक प्रकार का खाद्य भोज होता है। इसमें लोगों को खाना खिलाया जाता है। भेट दी जाती है और वस्तु नष्ट की जाती है। जो जितना अधिक समृद्धशाली होता है, उसतीना अधिक वस्तुओं और संपत्तियों को नष्ट करता है और प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करता है। इस भोज को संपत्ति नष्ट करने का प्रदर्शन कह सकते हैं। यह खाद्य भोज इतना अधिक परंपरागत होता है इसे रोकने के लिए अमेरिकी सरकार के कई प्रयास विफल हो चुके हैं।

शिमशियन जनजाति में धार संस्कार पोटलैच जो मुख्य का उत्तराधिकारी उसकी मृत्य के बाद उसके पद को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार लिंगित जनजाति भी आक्रमक अथवा प्रतिक्रियात्मक पोटलैच का प्रचलन है।

3.4.10.3 साधारण विनिमय या अन्यायिता- वस्तुओं के आदान-प्रदान का यह तरीका तमिलनाडू की नीलगिरी की पहाड़ियों के टोडा, कोटा, बडङा और कुर्म्क्का जनजातियों में देखने को मिलते हैं। टोडा पूर्वालक है और उसके द्वारा पदार्थ उत्पादन करने में आदर्श है। बडङा की अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है जबकि कोटा मित्त और चाकू बनाते हैं और उसका प्रबन्ध इनके पर आधारित है। कुर्म्क्का जनजाति जंगली पदार्थ, संसारी फल तथा शहद एकत्र करती है। यह लोग जात्रा आदि की भी अच्छी जान रखते हैं। इसमें से प्रत्येक जनजाति अपने द्वारा बनाई गई वस्तु के बदले दूसरी जनजाति द्वारा बनाई गई
बस्तुओं का आदान प्रदान करते हैं और एक दूसरे के साथ सेवाभाव से विनिमय करते हैं। इन जनजातियों के अन्य उपभोक्ता या पारस्परिक संबंध को इस चित्र के माध्यम से प्रदर्शित किया जा सकता है। कोटा मित्तु के बरतन तथा बालक बनाने और वाद यंत्र दोनों को उत्पादन कृषि करना अनाज उत्पादन जंगली कंदमूल शहद जादू-टोना तथा अभिसार का ज्ञान।

3.4.11 सरल तथा जितिल अर्थव्यवस्था में तुलनात्मक अंतर

<table>
<thead>
<tr>
<th>सरल अर्थव्यवस्था</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>उत्पादन का सीट प्राकृतिक</td>
</tr>
<tr>
<td>मुख्य अर्थव्यवस्था</td>
</tr>
<tr>
<td>मांग एवं पूर्ति के नियम का अभाव</td>
</tr>
<tr>
<td>उत्पादन उपभोक्ता के लिए</td>
</tr>
<tr>
<td>जीवन निवासों की अर्थव्यवस्था</td>
</tr>
<tr>
<td>कल्याण विनिमय</td>
</tr>
<tr>
<td>सामाजिक हाट बाजार</td>
</tr>
<tr>
<td>परिवार निवासीत्व या नवाचार का अभाव</td>
</tr>
<tr>
<td>आधिक प्रौढ़गोपीकी</td>
</tr>
<tr>
<td>सरल अर्थ विवाह</td>
</tr>
<tr>
<td>विविध अवधारणा का अभाव</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रतिष्ठान का अभाव</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>जितिल अर्थव्यवस्था</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>उत्पादन का सीट उद्योग</td>
</tr>
<tr>
<td>मुख्य अर्थव्यवस्था</td>
</tr>
<tr>
<td>मांग एवं पूर्ति के नियम के प्राधिक अधिकार</td>
</tr>
<tr>
<td>उत्पादन उपभोक्ता तथा लाभ के लिए</td>
</tr>
<tr>
<td>अधिकार अर्थव्यवस्था</td>
</tr>
<tr>
<td>मुख्य विनिमय</td>
</tr>
<tr>
<td>विनिमय बाजारों का संख्यात्मक रूप</td>
</tr>
<tr>
<td>परिवार निवासीत्व अधिक</td>
</tr>
<tr>
<td>आधुनिक प्रौढ़गोपीकी</td>
</tr>
<tr>
<td>जितिल अर्थ विवाह</td>
</tr>
<tr>
<td>अधिकार विविध अवधारणा</td>
</tr>
<tr>
<td>प्रतिष्ठान आवश्यक</td>
</tr>
</tbody>
</table>

3.4.12 सारांश (Summary)

इस इकाई में आप ने यह पढ़ा कि प्रचुर मात्रा में भोजन और अन्य संसाधनों वाले क्षेत्रों में रहने वाले आदिम समाज विशिष्ट उपभोक्ता के मिश्र लिंग में सरल अर्थव्यवस्था के संस्करण का अभाव है। सदस्यों के पास उच्च स्तर की उपलब्धि कि प्रशंसा का अभाव है। क्योंकि आधिक अधिकार के संघ कोई न्यूजिलैंड नहीं है। अधिकारों के अधिक गतिविधियाँ भंडारण या संचय से बजाय साझा करने पर जोर देती हैं। उत्पादन के साधनों का वित्तीय स्वामित्व अस्तित्व नहीं है। घरेलू अर्थव्यवस्था और सामाजिक अर्थव्यवस्था के बीच कोई स्पष्ट अलगाव नहीं है। क्योंकि वे अलग-अलग अंश में परस्पर व्यास हैं। जादू-धार्मिक विचारों से गुरु पवित्र व्यवस्था में आधिक व्यवस्था हावी है। नवाचार दुर्लभ है और परिवर्तन धीमा है। प्रशासन प्रथाओं और मानवता मात्र और सेवाओं के उत्पादन और विनिमय को विनिमय करते हैं।

इस प्रकार अर्थव्यवस्था को एक संस्थागत और मानक संरचना के रूप में समझा जा सकता है। जो लोगों के समूह के बीच आधिक संबंधों को नियंत्रित करते हैं। यह समूह एक आदिवासी गाँव से लेकर एक आधुनिक राष्ट्र यहाँ तक कि पूरी दुनिया में हो सकता है। इस प्रणाली द्वारा आर्थिक विकास और आधुनिकता के क्षेत्रों में आवश्यकता का समर्पण करते हैं।
मानव अस्तित्व और जीविका के लिए आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं का अधिग्रहण, उत्पादन और 
वितरण है।

3.4.13 बोध प्रश्न

वहुविकल्पीय प्रश्न

1. ट्रेक्ट्रीयांड दीप दो वाकी जनजातियों का अध्ययन किस मानवशास्त्रीय द्वारा किया गया?
   (क) फ्रेजर (ख) टाइलर (ग) मैलिनोवस्की (घ) एस. एस. दुबे
2. निम्न में से कौन सी जनजाति ओपियोमागिक श्रमिक है?
   (क) कालर (ख) चेचू (ग) विरहार (घ) गोंड
3. ट्रेक्ट्रीयांड दीप दो वासियों में वर्ष में एक बार भाई अपनी विवाहित बहन के पति को लगभग 3 चौथाई 
फसल भेंट करता है उसे क्या कहते हैं?
   (क) उरगुबे (ख) पोटलैच (ग) वासी (घ) गिमवाली
4. टोड़ा जनजाति का प्रमुख व्यवसाय क्या है?
   (क) पशुपालन (ख) ओपियोमागिक श्रमिक (ग) खाद्य संग्राहक (घ) दस्तकारी
5. अनुदा जनजाति का अध्ययन किस विद्वान द्वारा किया गया?
   (क) फ्रेजर (ख) टाइलर (ग) मैलिनोवस्की (घ) दुखम

उत्तर- 1. (ग) मैलिनोवस्की, 2. (घ) गोंड, 3. (क) उरगुबे, 4. (क) पशुपालन, 5. (घ) दुखम

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. जनजातियों की अर्थव्यवस्था की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. विभिन्न कारों में संलग्न भारतीय जनजातियों पर प्रकाश डालिए।
3. जनजातियों की विनिमय प्रणाली की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
4. ओपियोमागिक अर्थव्यवस्था को स्पष्ट कीजिए।
5. वस्तु विनिमय एवं साधारण विनिमय को सविस्तर समझाए।
लघु उत्तरीय प्रश्न

1. आदिम अर्थव्यवस्था की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
2. जनजातीय अर्थव्यवस्था के वर्गीकरण का वर्णन कीजिए।
3. सरल तथा जटिल अर्थव्यवस्था में तुलनात्मक अंतर लिखिए।
4. शिक्षा एवं संकलन स्तर की अर्थव्यवस्था की व्याख्या कीजिए।
5. जनजातीय अर्थव्यवस्था पर प्रकाश डालिए।

3.4.14 संदर्भ ग्रंथ सूची


खण्ड (4) आदिम समाज
इकाई : 1 जनजाति : अर्थ, वर्गीकरण, वितरण एवं परिवर्तन
इकाई की रूपरेखा
5.1.0 उदेश्य
5.1.1 प्रस्तावना
5.1.2 जनजाति की अवधारणा
5.1.3 जनजाति की विशेषताएँ
5.1.4 जनजातियों का वर्गीकरण
5.1.5 जनजातियों का भौगोलिक वितरण
5.1.6 जनजातीय जीवन में परिवर्तन
5.1.7 सारांश
5.1.8 बोध प्रश्न
5.1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.1.0 उदेश्य

प्रिय विद्यार्थियों,

एम.ए. समाजशास्त्र पाठ्यक्रम (प्रथम सत्र) के मानव विज्ञान में आपका स्वागत है। चौथे खण्ड में आदिम समाज के अंतर्गत जनजाति की अवधारणा को रखा गया है, जिसमें जनजाति का अर्थ, भारत में जनजातियों की स्थिति, उनमें विवाह के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है एवं भारत की कुछ जनजातियों का प्रस्तावना, जनजातियों की प्रमुख समस्याओं तथा उनके विकास हेतु योजनाओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी निम्नलिखित में सक्षम हो सकेंगे-

- जनजाति की अवधारणा को स्पष्ट कर पाएंगे।
- जनजातियों का प्रजातीय वर्गीकरण समझ पाएंगे।
- जनजातीय भाषाई वर्गीकरण को रेखांकित कर पाएंगे।
- जनजातियों के भौगोलिक वितरण से परिचित होंगे।
- जनजातीय जीवन में हो रहे परिवर्तन का विश्लेषण कर सकेंगे।
4.1.1 प्रस्तावना

प्रागैतिहासिक काल से समाज का विकास प्रारंभ हुआ, जो कि सरलता से जटिलता की ओर बढ़ा, उसमें विविधता भी बढ़ती गई। अपने विकास के प्रारंभ से वर्तमान तक उसमें बहुत अधिक परिवर्तन भी हुआ है, जिसके परिणाम स्वरूप जटिलता एवं विविधता भी बढ़ गई है। इन विशेषताओं से युक्त समाज को हम आधुनिक समाज के रूप में जानते हैं। वे समाज जो अपेक्षाकृत सरल और समरूप (Homogeneous) हैं, आदित्य समाज कहलाते हैं। जनजाति समाज भी सरल प्रकृति का समाज है। विश्व के अधिकांश देशों में जनजातीय समूह निवास करती है, अलग-अलग देशों में अलग-अलग जनजातीय समुदाय पाए जाते हैं। इन समुदायों को नृजातीय समूह (Ethnic Group), आदिवासी (Aboriginals) एवं जनजाति (Tribe) के नामों से संबोधित किया जाता है। हमारे देश में इन्हें जनजाति (Tribe) नाम से संबोधित किया जाता है।

हमारे देश में जनजातियों को भी विकास की दृष्टि से विशेष आवश्यकता बाले समुदायों (Weaker section) में शामिल किया गया है। भारतीय संविधान की 5वीं अनुसूची में इन समुदायों को सूचीबद्ध किया गया है।

4.1.2 जनजाति की अवधारणा

जनजाति शब्द, Tribe का हिंदी रूपांतरण है। विश्व के अलग-अलग देशों में इन समुदायों के लिए अलग-अलग शब्द प्रयुक्त होते हैं, जैसे नृजातीय समूह (Ethnic Group), मूल निवासी (Aboriginals) एवं जनजाति (Tribe) इत्यादि। ब्रिटेन में इस समुदायों के लिए जनजाति शब्द प्रयुक्त होता है, और औपनिवेशिक काल से हमारे देश में भी इन्हें जनजाति कहा गया। यद्यपि भारत में विवाद एवं समाज सुधारकों ने इन्हें बहुत से नाम दिये हैं जैसे गिरिजन, वन्य जन, आदिवासी, वनवासी, मूलविवासी, एवं जनजाति इत्यादि। जनजाति वे समुदाय हैं, जिन्हें किसी क्षेत्र विशेष में उन्हे वहां का मूल
निवासी माना जाता है एवं उन्हें उनकी नृजातीयता के आधार पर पहचाना जाता है। भारत में ‘जनजाति’ की अवधारणा को समझने के लिए दो परिप्रेक्ष्य हैं, एक समाज वैज्ञानिकों का और दूसरा संवैधानिक परिप्रेक्ष्य।

समाज वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य विशेषताओं पर आधारित है, अर्थात समाज वैज्ञानिक (समाजशासी एवं मानववादी) कुछ सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक विशेषताओं के आधार पर किसी समुदाय को जनजाति के रूप में चिह्नित करते हैं। संवैधानिक परिप्रेक्ष्य, समाज वैज्ञानिक आधार पर ही निर्भर करता है, अर्थात् हमारे देश के संविधान में जिन जनजातीय समुदायों को सूचीबद्ध किया गया है, वह समुदाय अनुसूचित जनजाति है। वास्तव में औपनिवेशिक काल से ही जनजातीय विकास के प्रवास प्रारंभ हो गए थे। व्यापक इन प्राचीन समुदायों का मुख्य उद्देश्य जनजातियों का विकास नहीं था बल्कि जनजातीय समुदायों के ब्रिटिश शासन के प्रति असंतोष को दबाना इन प्राचीन समुदायों का वास्तविक उद्देश्य कहा जा सकता है। स्वतंत्रता के पश्चात् इने समाज वैज्ञानिक परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु, विकास की प्रक्रिया में पीछे छूट गए समुदायों को पिछड़े समूहों (Weaker section) के रूप में चिह्नित किया गया। इसी क्रम में जनजातियों को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के अंतर्गत अनुसूचित किया गया। इस प्रकार वे जनजातियों जो संविधान में सूचीबद्ध हैं अनुसूचित जनजातियों कहलाते हैं। संविधान की 5वीं एवं 6वीं अनुसूचि जनजाति से संबंधित हैं। जिन समाज वैज्ञानिकों ने ‘जनजाति’ की अवधारणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया है, यदि हम उनके विचारों को एक साथ देखते हैं तो यह स्पष्ट होता है कि जनजाति वह समुदाय है, जिनमें संस्कृति एवं सामाजिक संथाओं अपनी समानता है, संबंध नातेदारी पर आधारित है, आर्थिक एवं राजनैतिक संबंधों का स्वरूप सरल है, तथा अनौपचारिक संबंधों एवं व्यवहार की प्रमुखता है। निम्नलिखित विनिमयों ने जनजातियों को इस प्रकार परिभाषित किया है:-

डी.एन. मजूमदार के अनुसार - “जनजाति कुछ परिवार या परिवारों के समूह का संकलन है, जिसका एक नाम होता है, जिसके सदस्य एक विशेष भूमिका में रहते हैं। समान भाषा बोलते हैं एवं विवाह, व्यवसाय आदि में कुछ निषेधों का पालन करते हैं”।

हाउबल के अनुसार - “एक जनजाति एक सामाजिक समूह है, जिसकी एक विशेष भाषा होती है। जो एक विशेष संस्कृति का अनुसरण करता है। वह संस्कृति उसे अन्य जनजातियों से दूर कर सकता है।”

इम्पीरियल गजेिटयर के अनुसार - “जनजाति आदि आति परिवारों का वह समूह है, जिसका एक सामान्य नाम होता है, जिसके सदस्य एक सामान्य भाषा बोलते हैं, एक सामान्य क्षेत्र में रहते हैं। सामान्यतः वे समूह अंतर्विवाहै नहीं होते।”

रेमप्ल फर्थ के अनुसार - “जनजाति एक ही संस्कृतिक शृंखला का मानव समूह है, जो साधारणतः एक ही भूखंड पर रहता है, उसे एक भाषा बोलता है तथा एक ही प्रांत की परंपराओं का पालन करता है।”

जॉन पीटर मॉडल के अनुसार - “जनजाति एक सामाजिक समूह है जिसकी अलग भाषा होती है तथा भिन्न संस्कृति एवं एक स्वाधीन राजनैतिक संगठन होता है।”
विचार ने जनजाति को परभाषित करते हुए लिखा है- “जनजाति एक साधारण कोटि का सामाजिक समूह है, जिसके सदस्य एक सामान्य भाषा बोलते हैं, उनकी एक शासन प्रणाली होती है तथा जो सामान्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए युद्ध आदि में एकता का प्रदर्शन करते हैं।”

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यदि हम “जनजाति” की अवधारणा को स्पष्ट करने का प्रयास करें तो, हम कह सकते हैं कि “जनजाति” वह समुदाय है, जो अपनी संस्कृति, भाषा, सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था एवं राजनीतिक संगठन के आधार पर गैर-जनजातीय समुदायों से भिन्न एवं विशेष है। वर्तमान परिस्थिति में परिवर्तन के व्यापक प्रभाव एवं नियोजित विकासों के फलस्वरूप जनजाति बदलती है, आज जनजातीय जगत वैसा नहीं है जैसा कि वतन्त्र के पूर्व था, परंतु आज भी कुछ मौलिक विशेषताएं हैं, जिनके आधार पर “जनजाति” को चिह्नित किया जा सकता है।

4.1.3 जनजाति की विशेषताएं

जनजाति को वस्तुतः उनकी विशेषताओं के आधार पर ही, एक विशेष सामाजिक समूह के रूप में चिह्नित किया जाता है। जनजाति की प्रमुख विशेषताएं निम्नानुसार हैं-

(1) परिवारों का समूह - प्रत्येक जनजातीय समुदाय कुछ परिवारों का समूह है, इन समुदायों में भी सबसे छोटी इकाई परिवार ही है। किसी भी जनजातीय समुदाय के सभी परिवारों में एकरूपता पाई जाती है। यह एकनुसार संरचना, सत्ता, वंश, परंपरा इत्यादि के माध्यम से देखी जा सकती है।

(2) निजीत भू-भाग - एक जनजाति विशेष का संरक्षण, एक स्थान विशेष में होता है, अर्थात् वे एक निजीत भू-भाग में निवास करती हैं। भारत में विभिन्न जनजातीय समुदाय, अलग-अलग स्थानों पर निवास करते हैं। साथ ही एक ही जनजाति जब अलग-अलग स्थानों पर निवास करती है, तो इन्हें स्थान विशेष के नाम पर अलग सामाजिक-सांस्कृतिक समुदाय के आधार पर पृथक किया जा सकता है। जैसे मध्य प्रदेश के गोंड एवं आंध्र प्रदेश के गोंड, अलग समुदाय के रूप में जाने जाते हैं।

(3) विशिष्ट नाम - प्रत्येक जनजातीय समुदाय की, विशिष्टता उसके नाम में परिलिखित होती है, प्रत्येक जनजाति के नाम के साथ उसकी समुदाय संस्कृति का भी बोध होता है अर्थात् प्रत्येक जनजाति का एक विशिष्ट नाम होता है, जिससे उन्हें पहचाना जाता है। समुदाय के “नाम” का अपना इतिहास भी होता है, उप-जनजातियों के नाम में, मुख्य समुदाय के साथ उसके जुड़वाएं भी बोध होता है।

(4) सामान्य भाषा - प्रत्येक जनजाति की एक भाषा या बोली होती है, जो सामान्य रूप से पूरे समुदाय के सदस्य बोल-चाल में उपयोग करते हैं। यह भाषा या बोली, दूसरे समुदाय से भिन्न होती है। जैसे गोंड जनजाति की बोली गोंडी, भोल जनजाति की बोली भोली है।

(5) सामान्य संस्कृति - सामान्य संस्कृति से तात्पर्य है कि एक जनजाति की संस्कृति, उसके समस्त सदस्यों द्वारा अनुकूलणी होती है। प्रत्येक जनजाति समुदाय की अपनी संस्कृति होती हैं, जिसका पूरा समुदाय
अनुसरण करता है। परिवार का आकार-प्रकार, विवाह का स्वरूप, पद्धति एवं प्रकार, नातेदारी, धर्म, जीवन यापन की विधि इत्यादि इनकी संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है।

(6) राजनीतिक संगठन - परंपरागत सामाजिक संरचना में प्रत्येक जनजातीय समुदाय की अपनी राजनीतिक व्यवस्था होती थी। ऐतिहासिक रूप से प्रत्येक जनजातीय समुदाय का एक राजनीतिक संगठन होता था, जिसमें समुदाय की परंपरागत पंचायत महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। इसमें समुदाय के बुजुर्ग व्यक्ति, ओझा, धार्मिक क्रियाकलाप देखने वाले एवं गुरुकुलों की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी।

(7) आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था - जनजातियों की अर्थव्यवस्था प्रारूपिक संसाधनों के चारों तरफ घूमती थी। वर्तमान में यह आत्म निर्भर अर्थव्यवस्था नहीं है, परंतु समुदाय की अधिकांश आवश्यकताएँ आज भी प्रारूपिक संसाधनों पर ही निर्भर हैं।

(8) विशेष धार्मिक व्यवस्था - जनजातीय समुदाय अपनी विशेष धार्मिक पद्धति के लिए भी जाने जाते हैं। जनजातीय धर्म में प्रारूपिक संसाधनों (प्रायःवन) का विशेष स्थान है। जनजातीय धर्म अपने आप में स्वतंत्र धार्मिक व्यवस्था है जिसमें प्रारूपिक संसाधनों की पूजा एवं क्रिया-कलापों का केंद्रीय स्थान होता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक समुदाय की अपनी विशेष धार्मिक गतिविधियों एवं क्रियाकलाप होते हैं।

इस प्रकार जनजाति भौगोलिक स्थिति, भाषा, परिवार, धर्म, संस्कृति एवं आजीविका के स्वरूप इत्यादि से संबंधित विशेषताओं के आधार पर चिह्नित होती है।

4.1.4 जनजातियों का वर्गीकरण

भारतीय समाज में विविधता की तरह यहां के जनजातीय परिवृक्ष में भी पर्याप्त विविधता है, अर्थात् हमारे देश में जनजातीय संरचना में पर्याप्त मिलता है। यहां प्रजातीय, भाषाई, सामाजिक-संस्कृतिक, भौगोलिक संक्रमण एवं आर्थिक स्थिति आदि के आधार पर जनजातीय समुदायों में मिलता है। भारतीय जनजातीय वर्गीकरण को प्रमुख रूप से निम्न आधारों पर देखा जा सकता है -

A. भौगोलिक वर्गीकरण
B. प्रजातीय वर्गीकरण
C. भाषाई वर्गीकरण
D. आर्थिक गतिविधियों के आधार पर वर्गीकरण
E. वंश एवं सत्ता के आधार पर वर्गीकरण
F. आकार के आधार पर वर्गीकरण
g. विकास के स्तर के आधार पर वर्गीकरण
भौगोलिक वर्गीकरण को आगे बढ़ाने के लिए, जनजातियों के भौगोलिक वितरण के अंतर्गत देखें, अतः यहां हम भारतीय जनजातियों के प्रजातीय एवं भाषाई वर्गीकरण को समझें।

प्रजातीय वर्गीकरण - प्रजातीय अध्ययनों के आधार पर विविध के समस्त जातियों में कुछ जनजातियों को क्रमशः का वर्गीकृत किया गया है, जनजातीय समुदाय भी इसका अपवाद नहीं किया गया है। हमारे देश में प्रजातीय अध्ययन का प्रारंभ सन् 1890 में हरबट रजले के अध्ययन से माना जाता है। रजले ने शरीर मापन और विज्ञान का प्रयास किया। रजले 1891 की जनगणना कार्य के प्रमुख थे, जगत जनसंख्या से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्यों को अपनी पुस्तक "The Peoples of India" में प्रकाशित किया, जो 1915 में प्रकाशित हुई थी। इस अध्ययन में रजले ने जनजातियों का कोई पृथक अध्ययन नहीं किया था, हर भारत जनसंख्या के साथ जनजातियों का भी प्रजातीय अध्ययन प्रस्तुत किया।

रजले के विषयक अनुसार, भारत के अधिकांश जनजातीय समुदाय "प्रजातीय जनजाति" के हैं। जै.एच. हन्न ने भारत के जनजातीय समुदायों को मीडियो, प्रोटो अस्ट्रेलियाई एवं मंगोलियाई तीन श्रेणियों में रखा है। इसी प्रकार, सी. सी. गुहा भी मीडियो, प्रोटो अस्ट्रेलियाई एवं मंगोलियाई तीन प्रजातीय श्रेणियों का उल्लेख किया है। नजूमदार एवं मदान का मत है कि भारत की जनजातियों का संबंध द्रविड़ एवं मंगोलियाई प्रजाति से है।

प्रजातीय वृत्तवर्धन से संबंधित भारत के जनजाति के प्रजातीय वर्गीकरण प्रस्तुत किए हैं, हर क्रियापदार्थ प्रजातीय जनजातियों को मुख्यतः तीन प्रजातीय समूहों में वर्गीकृत किया गया है।

1. भारत एक संयुक्त देश है, जहाँ प्रचीन काल से ही अनेक संस्कृतियों का सम्पर्क हुआ है, संस्कृतियों के संपर्क में आने के परिणामस्वरूप प्रजातीय मिश्रण भी हुआ है, अतः भारत की जनसंख्या में बहुत से प्रजातीय तत्व समय-समय पर जुड़ते एवं विनाश होते रहे हैं, जनजातीय जनसंख्या भी इसका अपवाद नहीं किया है।

2. भाषा संस्कृतियों का माध्यम बोली होती है, वह संस्कृति के मूल एवं प्रकृति को भी इंगित करती है, यह वजह है कि भाषाई अध्ययन प्रायः सांस्कृतिक-सांस्कृतिक अध्ययनों का दिशा प्रदान करते रहे हैं। जनजातीय समुदायों की अन्य विषय भाषा (अथवा बोली), उन्हें विशेष पहचान प्रदान करती है। अपवाद: प्रत्येक समुदाय के अलग भाषा अथवा बोली है, तो अपवादस्वरूप एक ही समुदाय जो अलग-अलग क्षेत्रों में निवास करते हैं, क्षेत्र के अनुसार उनकी भाषा अथवा बोली में भी परिवर्तन होता है।

(अ) नीड्रो- इस प्रजाति के लोगों का कद छोटा, तच्छा का रंग काला एवं बाल उनी होते हैं।

(ब) प्रोटो अस्ट्रेलियाई- इस प्रजाति के लोगों की नाक चपटी, तच्छा का रंग गहरा भूरा-काला एवं बाल पुंछराले होते हैं।

रेखासमूह – सामाजिक मानविकी
दूर िशा िनदे
शालय
महा मा
गांधी अंतररा
य िहंदी िव व
िवालय
एम
ए
समाजशा
ितीय सेमे
ट
र
–
सामािजक मानविवान

मंगोलॉयड- इस प्रजाति के शारीरिक लक्षणों में मध्यम कद, त्वचा का रंग नीला, चपटी नाक एवं गोल आंखें तथा भूरे रंग के चीजें वाल प्रमुख हैं। भारत की उत्तर-पूर्व की जनजातियों में इस प्रजाति के लक्षण पाए जाते हैं। भारत एक ऐसा देश है, जहाँ प्रभावित नहीं होकर यह अनेक संस्कृतियों का समाधान हुआ है। संस्कृतियों के संपर्क में आने के परिणामस्वरूप प्रजातियाँ स्वभावित भी हुआ है। अतः भारत की जनसंख्या में बहुत से प्रजातियाँ तथा समाज-सम्बन्धि व विलुम होते रहे हैं, जनजातीय जनसंख्या भी इसका अपराजित नहीं है।

2. भाषाई वर्गीकरण - जनजाति के प्रमुख विभागों में एक विशेषता भाषा अथवा बोली का होना भी है। अर्थात प्रत्येक जनजातीय समुदाय की अपनी एक भाषा अथवा बोली होती है। भाषा सम्प्रेसण का माध्यम होता है। वह सांकृतिक मूल एवं प्रकृति को भी इंगित करती है। यही वजह है कि भाषाई अद्वयताप्रयास: सामाजिक, सांकृतिक अवधारणाओं को दिशा प्रदान करते हैं। जनजातीय समुदाय की अपनी विशिष्ट भाषा इन्हें विशिष्ट पहचान भी प्रदान करते हैं। प्रयास: प्रत्येक समुदाय की अलग भाषा अथवा बोली होती है। तो अन्य भाषा स्वरूप एक ही समुदाय जो अलग-अलग क्षेत्र में निवासित है क्षेत्र के अनुसार इसीकी भाषा अथवा बोली में भी परिवर्तन होता है।

भाषा के आधार पर भारत की जनजातियों को निम्न श्रेणियों में रखा जा सकता है:-

(अ) द्विविध भाषा परिवार- इस भाषा परिवार की जनजातियों जो भाषा अथवा बोली व्यवहार में लाती हैं वह कुंग, तमिल, तेलुगू, कन्नड, मलयालम आदि भाषाओं के शब्दों का समावेश करती हैं। केवल की कार कार जनजाति में व्यस्त बोली मलयालमी उपबोली है। मध्य भारत की गोंड जनजाति की बोली गोंडी भी तमिल, तेलुगू एवं मलयालम भाषा के शब्दों से संबंधित है। दक्षिण एवं मध्य भारत की जनजातियाँ इस भाषा परिवार के अंतर्गत आती है।

(ब) ऊष्ट्रक भाषा परिवार - इस ऊष्ट्रक एशियाइतिक भाषा परिवार भी कहते हैं। मध्य एवं पूर्वी भारत की जनजातियों की भाषा एवं बोली इस परिवार के अंतर्गत आती है। जैसे मध्य क्षेत्र के कोल युद्धव बोली, निश्चित द्रुप समूह के निश्चित एवं बिहार तथा संसार के संघ युद्धव की बोली कोरकू, गदावा आदि जनजातियों की बोली इस भाषा परिवार से संबंधित मानी जाती है।

(स) सिनोटिकलिवन भाषा परिवार - इसे चीनी तिब्बती भाषा परिवार भी कहते हैं। ००-०१ भारत की जनजातियां इस भाषा परिवार के अंतर्गत मानी जाती हैं। मणिपुरी, नागा, असमी, बम्बी तथा अन्य भाषा एवं बोलियों जो उत्तर-पूर्व में प्रवाल हैं इसी भाषा परिवार के अंतर्गत आती हैं। इस प्रकार, भारत के जनजातीय समुदायों में, आशिया के लगभग सभी महत्वपूर्ण भाषा-परिवारों के तत्त्व विद्वान भी जानते हैं। वर्तमान में भाषाई स्वभावित एवं एक साथ एकाधिक भाषाओं का प्रयोग जनजातीय समुदायों में भी देखा जा सकता है।

3. आर्थिक गतिविधियों के आधार पर वर्गीकरण

किसी भी समुदाय की अर्थव्यवस्था या आजीविका का प्रारंभिक स्वरूप, प्रत्यक्ष रूप से उसके आस-पास के पत्तियाँ (प्रारंभिक संसाधनों) पर निर्भर रही है, विकास के उत्तर के साथ ही यह प्रत्यक्ष
निर्भरता कम होती गईं, परंतु जनजातीय समुदायों की अर्थव्यवस्था, एवं प्राकृतिक संसाधनों के बीच घनिष्ठ एवं अनन्योपहरण संबंध रहे हैं। यही कारण है कि अलग-अलग क्षेत्रों के जनजातीय समुदाय अलग-अलग प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलग्न रहकर अपनी आजीविका अर्जित करते रहे हैं।

भारत के जनजातीय समुदायों को उनकी आर्थिक गतिविधियों के आधार पर निम्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है:-

A. आधेक्टक एवं खाद्य संग्राहक जनजातियां - कुछ जनजातीय समुदाय मुख्यतः आधेक्टक एवं बनों से खाद्य पदार्थ संग्रहण के द्वारा अपनी आजीविका चलाते रहे हैं। आज भी कुछ समुदाय इस प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलग्न हैं जैसे बनों से शहद, चिराओं, मूल आदि एकजीत करते हैं तथा मछली फक्तना केंद्रूल, जंगली जानवरों एवं पक्षियों के पंख इत्यादि एकजीत करते हैं वाले समुदाय जैसे ग्रीष्म, कोरवा, बेगा, कादर, चेंचू आदि समुदाय हैं।

B. कृषिक जनजातियां - कुछ जनजातियों की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है। यद्यपि पूर्व में इनके बीच स्थानांतरित व्यवस्था की प्रचलित थी परंतु वर्तमान में यह स्थाई कृषि है, क्योंकि स्थानांतरित व्यवस्था अब संभव नहीं है। बेगा, सन्ताल, नागा, गोंड आदि इस श्रेणी के अंतर्गत रखे जा सकते हैं।

C. पशुपालक जनजातियां- पशुपालन के द्वारा अपनी आजीविका को अर्जित करने वाले समुदाय, चीखालक जनजातियों को वर्गीकृत किया जा सकता है। टोडा, खस एवं कोरवा जनजातियां पशुपालक जनजातीय समुदाय हैं।

D. औद्योगिक अर्थिक - स्वतंत्रता के पश्चात देश में बड़े पैमाने पर औद्योगिकीयकरण हुआ, ज्यादातर समूह क्षेत्रों में जनजातीय बसाहतों के नजदीक स्थापित हुए एवं जनजातीय समुदाय के लोग बड़ी संख्या में इन उद्घोषों में आर्थिक कार्य करने लगे। वर्तमान में बहुत से जनजातीय समुदाय इस श्रेणी में आते हैं।

E. दैनिक अर्थिक - अधिकांश जनजातीय समुदायों में दैनिक अर्थिक के रूप में कार्य कर अपनी आजीविका चलाते हैं, जिसमें स्थानीय तर पर, गैर जनजातीय समुदायों में दैनिक अर्थिक का कार्य करते हैं। जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू, जैसे गोंड, कोरकू,
इस प्रकार आर्थिक गतिविधियों के आधार पर भारत में निवासरत जनजातीय समुदायों में पर्याप्त भिन्नता है।

4. वंश एवं संता के आधार पर वर्गीकरण

वंश परंपरा एवं संता, किसी भी समुदाय की पारिवारिक संरचना को निर्धारित करती है। भारत की जनजातियों को इस आधार पर देखें, तो कुछ समुदाय पितृवंशीय, कुछ मातृवंशीय हैं। इस प्रकार कुछ जनजातियाँ पितृसंतात्मक तो कुछ मातृसंतात्मक हैं। इस आधार पर प्रमुख प्रकार निर्माणित हैं।

अ. मातृवंशीय एवं मातृसंतात्मक समुदाय- भारत की जनजातियों में कुछ स्थानों की जनजातियाँ मातृवंशीय समुदाय हैं उन्हें पूर्व की खासी एवं गारो इस प्रकार की जनजातियों हैं। इनके परिवार में वंश परंपरा न करता है वंश रूप से निर्धारित होती है प्रायः वंश परंपरा से ही संता निर्धारित होती है। खासी एवं गारो समुदाय में मातृ संतात्मक परिवार देखे जा सकते हैं अर्थात् इनके परिवार में मुखिया महिला होती है। यही महत्वपूर्ण निर्णय लेती है।

ब. पितृवंशीय एवं पितृसंतात्मक समुदाय- भारत में निवासरत अधिकांश जनजातीय समुदाय पितृवंशीय एवं पितृ संतात्मक हैं। इन समुदायों में परिवार की वंश परंपरा पुरुष के वंश से निर्धारित होती है एवं परिवार का मुखिया पुरुष होता है। उत्तर एवं मध्य क्षेत्र की जनजातियों जैसे गोड़, संथाल इत्यादि इस प्रकार की जनजातियों हैं।

5. आकार के आधार पर वर्गीकरण - भारत में निवासरत जनजातीय समुदायों में कुछ समुदायों की जनसंख्या बहुत अधिक है। तो कुछ की बहुत कम है अर्थात् इनके आकार के प्रायः भिन्न होता है। आकार के आधार पर भारत की जनजातियों को मुख्यतः तीन प्रकारों में रखा जाता है।

अ. लघु समुदाय - इस श्रेणी में हम समुदाय रखे जा सकते हैं जिनकी जनसंख्या कम है। अडमान एवं निकोदारी के जार्जिया, ग्रेट अडवानी एवं मध्य प्रदेश के खेचर तथा पारधी ऐसे ही लघु समुदाय हैं।

ब. मध्यम समुदाय- कुछ जनजातीय समुदाय ऐसे भी हैं जिनकी जनसंख्या में ही बहुत कम है और न ही बहुत अधिक है। ये मध्यम समुदाय कहे जा सकते हैं जैसे मध्य प्रदेश में बारेली, पटेलिया, जोकि भील जनजाति की उप जनजातियाँ हैं।

स. बृहद समुदाय - जनसंख्या के आधार पर कुछ जनजातियों समुदाय बड़े समुदाय है इनके बृहद समुदाय कहा जा सकता है जैसे भील, गोड़, मुडा, संथाल, इत्यादि।

6. विकास के स्तर के आधार पर वर्गीकरण

विकास के मानदंडों के आधार पर कोई समुदाय किस स्तर पर है। यह भी वर्गीकरण का एक प्रमुख आधार है। इस आधार पर भारत की जनजातियों को निम्न तीन प्रकारों में रखा जाता है।
अ. आदिम जनजाति (अति पिछड़ी जनजातियों)- इस श्रेणी में वे समुदाय रखे जाते हैं जो सामान्यतः विकास की प्रक्रिया में काफी पीछे रह गए हैं। हमारे देश में इस प्रकार के 75 जनजातियों समुदाय हैं। मध्य प्रदेश के बैगा, भारती, एवं सहारीया ऐसे भी समुदाय हैं।

ब. विकास की प्रक्रिया में शामिल जनजातियों- इस श्रेणी में वे जनजातीय समुदाय आते हैं जिन्होंने विकास की प्रक्रिया में सहभागिता की है। इसमें लाभ लिया है जैसे उत्तर एवं मध्य क्षेत्र की जनजातियों तथा दक्षिण भारत की जनजातियाँ जैसे मुण्डा, गोड, टोडा, इत्यादि।

स. विकास की प्रक्रिया में अग्रणी जनजातियों- हमारे देश में कुछ जनजातीय समुदाय ऐसे भी हैं जिन्होंने विकास का अधिक से उन्नति की है एवं वे अधिक जागरूक समुदाय भी हैं। जैसे उत्तर पूर्व के जनजातियों, नागालैण्ड के नागा इसी प्रकार के समुदाय हैं।

3.1.5 जनजातियों का भौगोलिक वितरण

भारत के विभिन्न अंचलों में अलग-अलग प्रकार के जनजातीय समुदाय निवास करते हैं। एक स्थान की जनजाति एवं दूसरे स्थान की जनजातियों में भिन्नता है। यहाँ तक की एक ही जनजाति समुदाय अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग विशेषताएं रखती हैं, जैसे मध्य क्षेत्र के गोड एवं दक्षिण भारत के गोड समुदाय। अतः भौगोलिक दृष्टि से जनजातियों का स्वरूप, जनजातीय अवधारणा का महत्वपूर्ण आयाम है। प्रमुख मानवशास्त्रियों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा प्रस्तुत जनजातियों का भौगोलिक वितरण निम्न प्रकार है।

(1) मयूरमंद तथा मदन द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण

मयूरमंद तथा मदन ने भौगोलिक स्थिति के आधार पर भारत में तीन जनजातीय क्षेत्र बताए हैं।

1. उत्तर, एवं उत्तर-पूर्वी क्षेत्र - इस क्षेत्र के पश्चिम में शिमला और लेह तथा पूर्वी छोर पर लुशाई पहाड़ियाँ एवं मिझमी पढ़ी स्थित है। यह क्षेत्र किनारों पर चौड़ा और बीच में संकरता है। कसन्मी, पूर्वी पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तरी उत्तर प्रदेश, और असम के जनजातीय क्षेत्र इसके अंतर्गत आते हैं, सिकिकम भी इसी क्षेत्र में है। नागा, कूकी, लुशाई, मिझमी, मिजो, गारो, खासी, अबीरा, होटिया, धार, खस, गौड़ी, आदि इस क्षेत्र की प्रमुख जनजातियाँ हैं।

2. मध्य क्षेत्र - बंगाल, बिहार, दक्षिणी उत्तर प्रदेश, दक्षिणी राजस्थान, मध्य प्रदेश, और उड़ीसा इस क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। उत्तरी राजस्थान और बस्तर (छत्तीसगढ़) इस क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। क्षेत्र विस्तार एवं जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से मध्य क्षेत्र का स्थान तीनों क्षेत्रों में सर्वप्रथम है। संधाल, उद्ध्व, लो, खंड, खड़ा, गाड़ा, कमार, कोरकू, भील, मीणा, गरासिया, सहारिया, दुबला, बाराली, आदि इस क्षेत्र की प्रमुख जनजातियाँ हैं।

3. दक्षिणी क्षेत्र - दक्षिणी क्षेत्र में भारत का दक्षिणी पूर्वी भाग स्थित है। हैदराबाद (आंध्र प्रदेश), मैसूर-कुर्नू (कर्नाटक), टावनकोट-कोचीन (केरल) आंध्र प्रदेश और मद्रास (तमिलनाडु) इसी क्षेत्र में आते हैं। चेंू, कोया, कापू, अनाडी, टोडा, कोटा, बडागा, कुरुआ, इल्ला, पनियन, नादर आदि इस क्षेत्र
की प्रमुख जनजातियाँ हैं। अंडमान एवं निकोबार द्वीपो में भी जनजातीय समुदाय निवास करते हैं जैसे ओंगे, जारवा, निकोबारी आदि।

बी. सी. गुहा द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण

गुहा ने भारतीय जनजातियों को तीन भौगोलिक क्षेत्रों में बांटा है।

1. उत्तरी एवं उत्तर-पूर्वी क्षेत्र - यह क्षेत्र लेह से लेकर पूर्व में लुशाई पर्वत तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र में असम, मणिपुर, उपजातक, पूर्वी कश्मीर, पूर्वी पंजाब तथा उत्तरी उत्तर प्रदेश के आदिवासी आते हैं।

2. मध्यपश्चिम क्षेत्र - यह क्षेत्र गंगा नदी के दक्षिण तट से कृष्णा नदी के उत्तर तक फैला हुआ है। नर्मदा तथा गोदावरी नदियों के बीच पर्वतीय प्रदेश में अप्राचीन काल से जनजातियों के निवास का पता चलता है। इस क्षेत्र में हो, बिरहोर, कोल, भील, मुरी, महेश्वर, तथा गोंड, जनजातियाँ रहती हैं।

3. दक्षिणी क्षेत्र- यह कृष्णा नदी के दक्षिण का क्षेत्र है। इस क्षेत्र में दक्षिण भारत की नमकता जनजातियों आती है। इरुला, पनियन, कुरुम्ब, कादर, आदि इस क्षेत्र की प्रमुख जनजातियाँ हैं।

शामाचरण दुबे द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण

दुबे के अनुसार भौगोलिक दृष्टि से आदिवासी भारत को चार प्रमुख भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. उत्तर और उत्तर-पूर्व क्षेत्र
2. मध्य क्षेत्र
3. पश्चिम क्षेत्र
4. दक्षिण क्षेत्र

1. उत्तर तथा उत्तर-पूर्व क्षेत्र - पूर्व क्षेत्र के मध्य आदिवासी समूह है। भोटिया, थारु, लेपचा, नागा, गारु, खासी, डापला, कुकी, अबोर, मिकिर, मुरुग आदि। उपयुक्त समुहों में प्रथम दो उत्तर प्रदेश के हिमालय से सन्तुलन क्षेत्र में निवास करते हैं। लेपचा सिनिकम और समवती भारतीय क्षेत्रों के निवासी हैं, शेष समूह असम उत्तर, उत्तर-पूर्वी सीमान्त क्षेत्र तथा नागालैण्ड में पाए जाते हैं।

2. मध्यक्षेत्र - आदिवासी समसंख्या की दृष्टि से मध्य क्षेत्र अत्यधिक महत्वपूर्ण है। बिहार के संथाल, मुण्डा, ओरिया और बिरहोर, उत्तर के चौंदो, हिंदो, तथा जुआंग, मध्य प्रदेश के गांड, बैगा, कोल, कोरकु, कमार, सहरया, भारिया, भुजिया आदि। राजस्थान के बील, कोया एवं राजगंड समूह आदि इस विस्तृत आदिवासी क्षेत्र के निवासी है।

द्वितीय सेमेस्टर – सामाजिक मानवविज्ञान
3. पद्मिन क्षेत्र- पद्मिन क्षेत्र में सहायता के आदिवासी समूह, जैसे- वाणी, कटकरी, महादेव, कोली तथा भीलों के करियों में समूह आते हैं।
4. दक्षिण क्षेत्र- दक्षिण क्षेत्र में अनेक अल्पसंख्यक आदिवासी समूह पाए जाते हैं। इनमें टोडा, बूडागा, कोटा, इरुला, कादाद, कुंभु, इत्यादि उल्लेखनीय हैं।

जनजातियों की अपनी अलग-अलग संस्कृति एवं अपनी बोली-भाषा हैं तथा अनेक विशेषताएं हैं, जो एक जनजाति को दूसरी जनजाति से पृथक करती है। इस प्रकार आर्थिक गतिविधियों के आधार पर भारत में निवासास्त जनजातीय समुदायों में पर्याप्त भिन्नता है।

3.1.6 जनजातीय जीवन में परिवर्तन

परिवर्तन एक सावधान प्रक्रिया है, अर्थात् यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। प्राकृतिक परिवर्तन की ही तरह सामाजिक परिवर्तन भी निरंतर होता है। सामाजिक परिवर्तन से तात्पर्य सामाजिक संरचना एवं सामाजिक संबंधों में होने वाला परिवर्तन से है। यह सामाजिक परिवर्तन स्वतंत्र एवं नियोजित दोनों तरह से होता है। जनजातीय समाज भी, परिवर्तन का अपवाद नहीं है यद्यपि ये समुदाय सूचक क्षेत्र में रहने के कारण, गैर-जनजातीय समुदायों की तुलना में काफी बाद में परिवर्तन की प्रक्रिया में शामिल हुए।

भारत के संदर्भ में जनजातियों में परिवर्तन ब्रिटिश काल में शुरू हुआ, जब ब्रिटिश शासन ने मिशनरीज के माध्यम से जनजातीय समुदायों के बीच काम शुरू किया। यद्यपि इन प्रयासों के पीछे जनजातीय विकास मुख्य भावना नहीं थी, बल्कि ब्रिटिश शासन ने जनजातीय तनाव को समाप्त कर अपने प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के उद्देश्य से मिशनरीज को जनजातियों के बीच भेजा। इन मिशनरीज ने शिक्षा, एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में, जनजातीय समुदायों को न सिर्फ जागरूक किया, बल्कि उन्हें आधारभूत विद्याधार एवं विद्यालय एवं स्वास्थ्य सेवा भी उपलब्ध कराए। उनके बीच खान-पान एवं सामाजिक मेल-जोल बढ़ाया जिसका एक परिणाम जनजातियों का बड़ी संख्या में धर्म परिवर्तन हुआ। आज भी हमारी जनजातीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग क्रिकेट धर्म का अनुयायी है। स्वतंत्रता के पश्चात् नियोजित एवं अनियोजित दोनों प्रकार के परिवर्तन तेज हुए। जनजातीय विकास नियोजित परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है परिवर्तन की प्रक्रियाओं के जैसे औद्योगिक, नगरीक, आधुनिक, पश्चिमीकरण एवं वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप तथा गैर-जनजातीय समुदायों से संपर्क के फलस्वरूप जनजातीय समुदायों में होने वाला तीव्र परिवर्तन अनियोजित परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है। उपर्युक्त सभी कारकों के प्रभाव से आज जनजातीय समुदायों में आमूल-चूल परिवर्तन दिखाई देता है। इस परिवर्तनों को नम बिंदुओं में देखा जा सकता है।

1. शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन - जनजातीय जीवन में स्वागतिक रूप से दिखाई देने वाले परिवर्तनों में, उनकी शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन है। जब हम उनकी शैक्षणिक स्थिति की बात करते हैं तो यह ध्यान रखना जरूरी है कि शैक्षणिक स्थिति से तात्पर्य आधुनिक औपचारिक शिक्षा से है अन्यथा
जनजातियों में अनौपचारिक शिक्षा पूर्व में भी प्रचलित रही है, जिसके माध्यम से उन्हें जीवन के लिए आवश्यक कौशल एवं तकनीकी का ज्ञान कराया जाता था। प्रत्येक समुदाय के ‘युवागृह’ इस प्रकार की अनौपचारिक शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्मांक करते रहे हैं।

गैर आवज्ञाती समुदायों के संपर्क एवं बदलते सामाजिक एवं राष्ट्रीय परिवर्तन में इन समुदायों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने हेतु शिक्षा को महत्वपूर्ण कड़ी माना गया है एवं इस हेतु प्रयास किए गए व्याख्या जनजातीय क्षेत्रों में आदर्श विचारधारा की व्यवस्था की गई, छात्रवृत्ति, गणेरण, पुस्तकें, उच्च शिक्षा संस्थानों में स्थांत्र्य के आरक्षण आदि। इन प्रयासों के फलस्वरूप आज जनजातीय समुदाय के व्यक्ति न सिर्फ शिक्षित हो रहे हैं बल्कि उन्हें शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं एवं शासनीय तथा गैर-शासनीय प्रतिभाओं में नौकरी भी कर रहे हैं।

2. सामाजिक-सांकृतिक परिवर्तन - जनजातियों के सामाजिक सांकृतिक जीवन में बहुत अधिक परिवर्तन परिलक्षित हुए हैं, उनकी सामाजिक संगठन एवं व्यवस्थाएं जहां एक और समायुक्त हुई हैं वहीं अन्यत्र उसी भाषा में व्यवस्थाएं को स्थानिक मिला है। जनजातीय संस्थान एक विशेष एवं पुरूष संस्थान रही है। जिसमें जनजातीय धर्म, उत्सव, लुटाया विवाह आदि की विशेष प्रक्रिया एवं प्रचलन रहे हैं, आज उनमें परिवर्तन हुआ है। जनजातीय समुदायों में हिंदू धर्म के अनुसार पूजा-पाठ, कर्मकाण्ड एवं विवाह पद्धति बहुत सामान्य हैं। आज वस्तु मूल्य के स्थान पर दहेज भी उनके शीघ्र दिखाई देती है। होली, कीसी आदि गैर जनजातीय समुदाय का साथ मनाने लगे हैं अथवा उनके सामाजिक एवं सांकृतिक जीवन में बहुत अधिक परिवर्तन हुए हैं।

3. आधिकारिक जीवन में परिवर्तन - जनजातीय अर्थव्यवस्था स्वायत्त एवं आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था रही है। जो मूलतः वनों एवं प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर थी तथा वह समुदाय की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम थी। वर्तमान में उनकी अर्थव्यवस्था प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर थी एवं उनकी संस्थान इन संसाधनों का संरक्षण करने वाली थी। विभिन्न प्रकार के कारकों ने जनजातीय अर्थव्यवस्था को बदला है, आज उनकी आधिकारिक क्रियाएं एकाधिक साधनों पर निर्भर हैं यथा- कृषि, मजूरी, व्यवसाय एवं नौकरी। आज इनकी अर्थव्यवस्था स्वायत्त एवं आत्मनिर्भर नहीं है जिसके नकारात्मक प्रभाव भी है।

4. राजनीतिक जीवन एवं परिवर्तन - प्रत्येक जनजातीय समुदाय की एक राजनीतिक व्यवस्था होती थी, उनके परंपरागत राजनीतिक संगठन जैसे सामुदायिक पंचायत होते थे। जिसमें मुख्य एवं अनुपवर्ती व्यक्ति मिलकर निर्णय लेते थे। वर्तमान में वे संगठन एवं व्यवस्था समाज हो गई है। हमारे देश की राजनीतिक व्यवस्था को जहां एक तरफ इन समुदायों ने आत्मसात किया है, तो दूसरी ओर वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था ने भी इन समुदायों की सहभागिता सुनिश्चित करने हेतु अनेक प्रयास किए हैं। 20वे संविधान राजस्थान के तहत जनजातियों को आरक्षण दिया गया है जिसके इनकी
भागीदारी को सुनिश्चित किया है। आज जनजातीय समुदाय का प्रतिनिधित्व पी.आर.आई. के निचले स्तर ग्राम पंचायत से लेकर लोकसभा एवं विधानसभा तक व्यापक है।

A. जनजातीय समुदायों में परिवर्तन के कारक

जनजातीय समुदायों के जीवन में परिवर्तन के लिए उत्तरदायी कारक निम्न इस प्रकार हैं-

1. गैर-जनजातीय समुदायों से संपर्क - जनतातीय जीवन में परिवर्तन का सबसे बड़ा कारण गैर-जनजातीय समुदायों से संपर्क है। यह संपर्क परिवर्तन की तमाम प्रक्रियाओं का परिणाम एवं जनजातियों के बीच उनकी संस्कृति में बदलाव लाने वाला सबसे बड़ा कारक है। जनजाति-जाति सातय भी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रामाणिक है।

2. औद्योगीकरण - औद्योगीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें वस्तुओं का उत्पादन हस्त-उपकरणों के स्थान पर संचालित मशीनों के आधार पर किया जाता है। विभिन्न संचालित मशीनों का प्रयोग न केवल कारखाने अपितु यातायात, संचार, परिवहन, तथा खेती आदि में किया जाता है। औद्योगीकरण को उड्डयन जीवन की स्थापना की प्रक्रिया के रूप में भी परिभाषित किया जाता है। उड्डयन के औद्योगिकीकरण दोनों ही उत्पादन की ऐसी विधियों के संक्रमण का संकेत देती हैं जो पारंपरिक व्यवस्था की तुलना में आधुनिक समाजों में अधिक धन समपदा को अर्जित करने की क्षमता विकसित करता है।

3. नगरीकरण - नगरवाद के लक्षणों के विकास एवं प्रसार की प्रक्रिया नगरीकरण कहलाती है। इस नगरवाद के नगर में बदलने की प्रक्रिया को नगरीकरण की संज्ञा दी जाती है। इसी प्रकार सुख निवासों ने ग्रामीण जनसंख्या के नगर की ओर नष्टशील की प्रक्रिया को नगरीकरण का नाम दिया है, वार्तालाप में नगरीकरण की प्रक्रिया का प्रयोग कई अंशों में किया जाता है। इसी नगरीकरण ने, नगरों की ओर जाने, कृषि कार्य को छोड़कर अन्य कार्यों को अपनाने तथा व्यवहार-प्रतिमाओं में समानता परिवर्तन करता है।

4. आधुनिकीकरण - आधुनिक जीवन शैली को अपनाने की प्रक्रिया को आधुनिकीकरण की संज्ञा दी जाती है। वर्तमान में जनजातियों के बीच आधुनिकीकरण को उनके जीवन में अमूलचूल परिवर्तन लाने वाली प्रक्रिया कहा जा सकता है।

5. संस्कृतिकरण - जाति व्यवस्था भारतीय समाज का अभिन्न अंग है। जाति व्यवस्था में रहकर जब कोई व्यक्ति या समूह उच्च जाति के क्रिया-कलापों को अपनाता है तो इस प्रक्रिया को संस्कृतिकरण कहते हैं।

एम.ए. श्रीनिवास ने अपनी पुस्तक ‘Religion And Society Among The Coorgs of South India’ में जाति के गतिशीलता की प्रक्रिया को व्यक्त करते हुए संस्कृतिकरण की अवधारणा दी और
बताया कि जब कोई निम्न जाति अपने रीति-रिवाजों, कर्मकाण्डों एवं विचारधारा को उच्च जाति के अनुसार करने लगता है, तो उसे संस्कृतिकरण कहते हैं। जनजातीय समुदाय भी परिवर्तन की इस प्रक्रिया से गुजर रही है जिसे दूसरे शब्दों में गैर-जनजातीकरण (Detribalization) कहते हैं।

6. वैश्वीकरण - सामाजिक-आधिक संबंधों के सम्पूर्ण विश्व तक विस्तार को वैश्वीकरण कहा जाता है।

वर्तमान में मानव जीवन के अनेक पक्ष, जिन समाजों में हम रह रहे हैं, उनसे हजारो मील दूर स्थित संगठनों और सामाजिक तान-बाने से प्रभावित होने लगे हैं। इस प्रकार विश्व एक एकीकरण समाज का रूप धारण करता जा रहा है। इस संबंध में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि विषयवाद के द्वारा एक ऐसी नवीन चेतना का उदय हो रहा है, जिसमें विश्व एक गाँव की तरह प्रतीत होता है। इस प्रक्रिया ने जनजाति जीवन में भी परिवर्तन लाया है।

7. जनजातीय विकास नीति एवं योजनाएँ - हमारे देश में विकास हेतु नियोजित परिवर्तन के मॉडल को अपनाया गया जिसके तहत जनजातीय विकास हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आजीविका के क्षेत्र में नीति एवं योजनाएं लागू की गईं। इन नीतियों एवं योजनाओं के परिणामस्वरूप जनजातीय जीवन में व्यापक परिवर्तन हुआ।

4.1.7 सारांश

इस इकाई में हमने ‘जनजाति’ की अवधारणा को समझने का प्रयास किया, जिसमें जनजाति से आशय, अनुसूचित जनजाति की अवधारणा, जनजाति की परिभाषा एवं विशेषताओं पर विस्तार से चर्चा की गई। जनजातियों के वर्गीकरण के अंतर्गत उनके प्रजातीय, भाषाई एवं आधिक वंश एवं सत्ता के आधार पर वर्गीकरण, आकार के आधार पर वर्गीकरण एवं विकास के स्तर पर वर्गीकरण को समझा गया। जनजातीय जीवन में भी परिवर्तन एक महत्वपूर्ण आयाम है, अत: उसे समझने का प्रयास भी किया गया है।
4.1.8 बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जनजाति से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2. जनजाति एवं अनुसूचित जनजाति में अंतर लिखिए।
3. जनजाति को परीक्षण करते हुए, इसकी विशेषताएं लिखिए।
4. जनजातियों के प्रजातीय वर्गीकरण को स्पष्ट कीजिए।
5. जनजातियों के भाषाई वर्गीकरण का वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पशुपालक जनजातीय समुदाय पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।
2. जनजातीय जीवन में परिवर्तन का वृहद विशेषण कीजिए।
3. वंश पंरपरा के आधार पर भारत की जनजातियों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
4. विकास की प्रक्रिया एवं जनजाति पर एक निवंध लिखिए।
5. भारत के संदभ में जनजातीय जीवन में परिवर्तन लाने वाले प्रमुख कारकों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

4.1.9 संदभ ग्रंथ सूची

3. एलिनेन, वैरियर. (1944). द एबोम्बीनियस. बॉम्बे: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
5. मनोमदार, डी.एन. एवं मादन, टी.एन. (1956). एन्ट्रोड्रेक्शन टू सोशल एनोपोलोजी. बॉम्बे: एंन इंटरोड्कशन टू सोशल एनोपोलोजी.
7. रिचर्ड, एच.एच. (1903). रिचर्ड ऑफ इंडिया रिपोर्ट. शिमला: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया प्रेस.
10. राजस्थान, एच.ए. (1944). अप्रोच टू ट्राइबल वेलफेयर इन पोस्ट इंडियन्स एस एंड एचप्लोलॉजिस्ट.


इकाई : 2 विवाह : परिभाषा, प्रकार एवं सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

4.2.0 उद्देश्य

4.2.1 प्रस्तावना

4.2.2 विवाह की अवधारणा एवं परिभाषा

4.2.3 विवाह के उद्देश्य

4.2.4 विवाह के सिद्धांत

4.2.5 विवाह के प्रकार

4.2.6 विवाह संबंधी नियम

4.2.7 जनजातियों में जीवन साथी चयन की पद्धतियाँ

4.2.8 सारांश

4.2.9 बोध प्रश्न

4.2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के लिए- निम्नलिखित विषयों में उत्तर के साथ विवाह के अध्ययन करने के लिए कार्यरत होते हैं।

- विवाह नामक सामाजिक संस्था के अवधारणा स्पष्ट कर पाएं। एवं उसे परिभाषित कर सकें।
- विवाह के उद्देश्य स्पष्ट कर पाएं।
- विवाह की उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांतों का विश्लेषण कर सकें।
- विवाह के प्रकार एवं उनके उपप्रकारों समझें।
- विवाह संबंधी नियमों को स्पष्ट कर सकें।
- जनजातियों में प्रचलित विवाह की पद्धतियों की विवेचना कर पाएं।

4.2.1 प्रस्तावना

विवाह एक सार्वभौमिक संस्था है, अर्थात यह विवाह के सभी समाजों में पाई जाती है। इसके स्वरूप एवं प्रकार भिन्न-भिन्न समाजों में भिन्न हो सकते हैं। समाज वैज्ञानिकों की धारणा है कि समाज जब विकास के प्रारंभिक चरण में था, तब जिन संस्थाओं का पादर्भाव एवं विकास हुआ, विवाह उनमें प्रमुख है। विवाह की उत्पत्ति के मूल रूप में व्यक्ति की यौन संबंधी आवश्यकता है। मनुष्य की आवश्यकताओं को मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है-
1. जैविक आवश्यकताएँ
2. आर्थिक आवश्यकताएँ
3. सामाजिक-सांस्कृतिक आवश्यकताएँ

जैविक आवश्यकताओं में चीन संबंधी आवश्यकता एवं नवजात शिशु का पालन पोषण प्रमुख आवश्यकताएँ है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विवाह का संबंध, मनुष्य की जैविक आवश्यकताओं से है।

अलग-अलग समाजों यथा पश्चिमी देशों के समाज एवं पूर्वी देशों के समाज में विवाह का स्वरूप अलग होता है, जो उस समाज विरोध की संस्कृति एवं प्रकृति पर आधारित होता है। हमारे देश में भी पर्याप्त सामाजिक-सांस्कृतिक एवं भौगोलिक भिन्नता है, अर्थात हमारे देश में बहुत सी संस्कृतियाँ प्रचलन में है, जैसे उत्तर-पूर्व की संस्कृति, मध्य क्षेत्र की संस्कृति, पश्चिमी भारत एवं दक्षिणी भारत की संस्कृति। समुदायों के आधार पर भी एक सांस्कृतिक विविधता पाते हैं जैसे बांग्ला समुदाय की संस्कृति, पंजाबी, महाराष्ट्रीय एवं अन्य समुदायों की संस्कृति। जनजातीय एवं गैर जनजातीय समुदायों की संस्कृति इत्यादि।

धर्म के आधार पर भी सांस्कृतिक विविधता है, जैसे हिंदू धर्म की संस्कृति, इस्लाम, पारसी, सिंहज एवं ईसाई धर्म की संस्कृति अलग-अलग है। इस प्रकार हमारे देश में विवाह के स्वरूप में भी विभिन्नता है।

इसके बावजूद विवाह की अभिव्यक्ति सभी समाजों में है। अतः विवाह नामक संस्था, सामाजिक विधि-वस्तु में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

4.2.2 विवाह की अवधारणा एवं परिभाषा

विवाह एक सामाजिक संस्था है जिसकी अवधारणा को सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है। मानव को अन्य जीव धारियों से विरोध एवं पृथक स्थान, उसके विकास के कारण प्राप्त है, इस विकास में सामाजिक-सांस्कृतिक विकास बहुत महत्वपूर्ण है, जिससे उसे अपने समाज के संस्कृति के समाज के सुधार संचालन हेतु सहायता मिलती है, जो कृति के रूप से सरलता को अंकित करने में सहायता का पात है। परिवार, नातेदारी, धर्म संस्कृति इत्यादि का विकास मुख्यतः समाज में अराजकता को समाप्त कर समाज के सुधार संचालन हेतु हुआ, जो कृतिक रूप से सरलता से जिटला की ओर विकसित हुआ। अर्थात ये संस्थाएँ आज जिस स्वरूप में हैं वह विकास के तामाम सोपानों के पात्र है। प्रारंभ में यह अपने सरल स्वरूप में थी, विवाह भी इसका अपवाद नहीं था। विवाह ने परिवार एवं नातेदारी को विकसित किया। विवाह एक ऐसी संस्था है जो व्यक्ति की चीन आवश्यकता की पूर्ति के साथ-साथ शिशु के जन्म को सामाजिक स्वीकार करते हैं एवं वैधानिकता प्रदान करते हैं, जो किसी भी राष्ट्र एवं समाज के विकास हेतु आवश्यक है। यही कारण है कि विवाह एक सार्वभौमिक संस्था है। ‘विवाह’ का शाब्दिक अर्थ है ‘उद्ध’ अर्थात वर के द्वारा पत्नी को अपने घर लाना।
सामाजिक एवं मानवशास्त्र में विवाह एक संस्था के रूप में स्थापित अवधारणा है। किसी भी अवधारणा (समाज में प्रचलित प्रक्रिया) के निर्माण की प्रक्रिया संस्था के निर्माण की प्रक्रिया से होकर पूर्ण होती है, एवं उसमें संस्था की विशेषताएं विविधता होती हैं। तब वह संस्था के रूप में स्वीकार्य होती है। विवाह भी एक ऐसी ही अवधारणा है, जो विविध समाज समर्थन द्वारा प्रस्तुत संस्था के निर्माण की प्रक्रिया से होकर पूर्ण हुई है एवं जिसमें विवाह की विशेषताएं विविधता हैं।

जब कोई विचार, समूह की स्वीकृति के साथ समूह की आदत बन जाती है, और पूरे समूह में पीढ़ी दर पीढ़ी इसकी पुनरावृत्ति होती है, तब वह परिपक्व बनती है। परंपरा में जब कुछ नियमों का समावेश होता है, तब वह प्रथा के रूप में परिवर्तित हो जाती है, और जब प्रथाओं के नियमों की एक स्थायी संरचना बनकर होती है, तब 'संस्था' निर्मित होती है। संस्था का निर्माण की प्रक्रिया एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है।

विवाह अपने परम्परागत स्वरूप में बहुत से सोपानों के पश्चात आई संस्था है। सामाजिक संस्था के कुछ आधारभूत तत्त्व हैं, जैसे धारणा, उद्देश्य, संरचना आदि। विवाह को निम्नलिखित विद्वानों ने इस प्रकार परिभाषित किया है:

- बोगार्डस के अनुसार – “विवाह श्री एवं पुरुष को पारिवारिक जीवन में प्रवेश कराने वाली संस्था है। अर्थात् विवाह करने वाले श्री-पुरुष एक नवीन पारिवार का निर्माण करते हैं।”
- वेस्टमार्क के अनुसार – “विवाह एक या अधिक पुरुषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह संबंध है जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और जिसमें इस संगठन में आने वाले दोनों पक्षों एवं उनसे उत्पन्न बच्चों के अधिकार एवं कर्तव्य का समावेश होता है। विवाह कहलाता है।” वेस्टमार्क ने अपनी पुस्तक 'History of Human Marriage' में विवाह की इस प्रकार परिभाषित करते हुए उसके बाद विवाह एवं समूह विवाह के स्वरूपों को इंगित किया है एवं विवाह के फलस्वरूप परीक्षा में सदस्यों के अधिकार एवं कर्तव्यों पर प्रकाश डालता है।
- मिलिन एवं मिलिन के अनुसार – “विवाह एक प्रजनन रूपक परिवार की स्थापना का समाज द्वारा स्वीकृत तरीका है।”
- मोज़मदार एवं मदान के अनुसार – “विवाह संस्था में नवीन या धार्मिक आयोजन के रूप में उन सामाजिक स्वीकृतियों का समावेश होता है। जो विषम त्रिगुणों को योनि क्रिया और उससे संबंधित धार्मिक संबंधों में सम्मिलित करने का आधार प्रदान करती है। इस प्रकार विवाह जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ सामाजिक-धार्मिक अधिकारों एवं कर्तव्यों का भी निर्धारण एवं नियमण करता है।”
- मेलिनोवस्की के अनुसार – “विवाह बच्चों की उत्पत्ति एवं पालन-पोषण के लिए इकारारामा है।”
उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि विवाह समाज की वह महत्वपूर्ण संस्था है जो परिवार के नियमन को संभव बनाती है।

4.2.3 विवाह के उद्देश्य

विवाह समाजों में विवाह के उद्देश्य यद्यपि समान हैं, लेकिन सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक विशेषताओं में भिन्नता होने के कारण इन उद्देश्यों की प्राथमिकता के रूप में कुछ अंतर पाया जाता है। विवाह के इन उद्देश्यों में चार उद्देश्यों को प्रमुख महत्व दिया जाता है -

(क) यौनिक इच्छाओं की पूर्ति
(ख) परिवार का निर्माण
(ग) आर्थिक सहयोग की स्थापना
(घ) बच्चों के पालन पोषण के द्वारा मातृ मूल प्रवृत्ति की संतुलित

विवाह के ये चारों ही उद्देश्य समान रूप से महत्वपूर्ण हैं, लेकिन इन्हें भिन्न-भिन्न आधारों पर एक दूसरे से अधिक महत्वपूर्ण दिखाने का प्रयत्न किया जाता है। पश्चिमी समाजों की भौतिकवादी संस्कृति में विवाह का सबसे प्रमुख उद्देश्य यौन संबंध स्थापित करने का कार्य का प्राप्ति करना और बच्चों के जन्म को वैध रूप में प्रदान करना है। इन समाजों में परिवार का महत्व अपेक्षाकृत कम होने और व्यक्तिवाद का प्रोत्साहन मिलने के कारण विवाह जैसी संस्था का संबंध संपत्ति अधिकारों से बहुत कम है। इसके बिस्तार विश्वरूप सरल और अद्वितीय समुदायों में विवाह का उद्देश्य केवल दो व्यक्तियों के बीच ही संबंध को स्थापित करना नहीं बल्कि दो परिवारों के संबंध को तुलना बनाना होता है। बहुत से आदिवासी समुदाय ऐसे हैं जिनमें यौन संबंधों के बारे में नियम न हो और अधिक कठोर है। इससे बहुत पदयाप्त लगातार आधार और अद्वितीय समुदायों में विवाह का उद्देश्य केवल दो व्यक्तियों के बीच ही संबंध को स्थापित करना नहीं बल्कि दो परिवारों के संबंध को दूसरे बनाना होता है। अद्वितीय अद्वितीय समुदायों में विवाह नहीं करने का अधिकार देना विवाह का बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है। अंततः अद्वितीय समुदायों में विवाह का अधिकार देना विवाह का बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है। अंततः अद्वितीय समुदायों में विवाह का अधिकार देना विवाह का बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है। अंततः अद्वितीय समुदायों में विवाह का अधिकार देना विवाह का बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है। अंततः अद्वितीय समुदायों में विवाह का अधिकार देना विवाह का बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है। अंततः अद्वितीय समुदायों में विवाह का अधिकार देना विवाह का बहुत महत्वपूर्ण उद्देश्य है।
हमारे समाज में यौन-संतुष्टि को विवाह का सबसे गौरव उद्देश्य माना गया है। हिंदू जीवन में गृहस्थ-जीवन को सबसे अधिक महत्व दिया जाता है क्योंकि व्यक्ति केवल परिवार में रहकर ही विभिन्न व्यक्तियों और समूहों के लिए अपने कर्तव्यों का पालन सबसे अच्छे रूप में कर सकता है। इस दृष्टिकोण से परिवार का निर्माण करना और परिवार में धार्मिक त्रिविषयों की पूर्ति करना अथवा दूसरे शब्दों में अन्य व्यक्तियों के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करना ही विवाह का एक सांस्कृतिक विशेषताओं को स्थिर बनाए रखना है ऐसा इस कारण है कि विवाह के उद्देश्य है इसके अतिरिक्त भारतीय समाज में विवाह के एक प्रमुख द्वारा ही बच्चों को सांस्कृतिक विशेषताओं की सीख दी जा सकती है। और उसी संस्था के द्वारा यह सीख वंश परंपरा के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त हो सकती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विवाह के उद्देश्यों को केवल जैविकीय आधार पर नहीं समझा जा सकता बल्कि इन्हें सामाजिक और सांस्कृतिक आधार पर ही स्पष्ट किया जाना चाहिए।

इस प्रकार विवाह के निम्नांकित उद्देश्य हैं जिन्हें यह संस्था पूरा करती है:-

1. यौन संबंधों का निष्पादन एवं नियमन।
2. परिवार का निर्माण एवं नातेदारी का विस्तार।
3. बच्चों के जन्म को वैधानिकता प्रदान करना।
4. सामाजिक-सांस्कृतिक सुरक्षा।
5. आर्थिक सुरक्षा।

वेस्टरमार्क ने विवाह के पांच उद्देश्य बताए हैं- हैं:-

1. वैध संतानोपि
2. परिवार की स्थापना
3. युवावस्था में भावनात्मक स्थिरता
4. आर्थिक उत्तरदायित्व
5. सामाजिक उत्तरदायित्व

इसी प्रकार मुर्डॉक ने विवाह के निम्नांकित सीन उद्देश्य बताए हैं, उन्होंने 250 समाजों का अध्ययन कर कहा है कि ये उद्देश्य सभी समाजों में पाए जाते हैं -

1. यौन संतुष्टि
2. आर्थिक सहयोग
3. संतानों का समाजीकरण एवं लालन पालन
4.2.4 विवाह की उत्पत्ति के सिद्धांत

समाज वैज्ञानिक अध्ययनों में विवाह की उत्पत्ति से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांत निम्न प्रकार हैं-

1. शास्त्रीय सिद्धांत- इस सिद्धांत के प्रतिपक्षों में प्लेटो एवं अर्स्तु प्रमुख हैं। भारतीय धार्मिक ग्रंथ भी विवाह के इस सिद्धांत पर बल देते हैं। बाद में सर हेनरी मेन ने विवाह के विविध समाजों का अध्ययन कर इस सिद्धांत को विस्तारित किया। इस सिद्धांत के अनुसार विवाह का प्रारंभिक स्वरूप पितृसंतात्मक या विवाहेशांत पितृसंतात्मक पितृवंशीय परिवार का विस्तार होता है।

2. यौन साम्यवाद का सिद्धांत - इस सिद्धांत के समर्थकों में मॉगन, फ्रेजर एवं ब्रिफाल्ट प्रमुख हैं। इस सिद्धांत के अनुसार जब समाज विकास की प्रक्रिया के प्रारंभिक चरण में था, तब कोई भी पुरुष किसी भी महिला से वैदिक संबंध स्थापित कर सकता था। इस अवस्था को उन्होंने यीन साम्यवाद कहा है। इस चरण में प्रितृत या प्रीतित का निर्धारण करना कठिन था। इसलिए मातृसंतात्मक परिवारों का असंतत्व था। इस सिद्धांत के अनुसार विवाह का प्रारंभिक स्वरूप यीन साम्यवाद का था।

3. एक विवाह का सिद्धांत - इस सिद्धांत के समर्थकों में वेस्टरमार्क प्रमुख हैं। वेस्टरमार्क के अनुसार जब पुरुष संपत्ति की भांति थी तब एकाधिकार के प्रवास में सफल हुआ तो विवाह असंतत्व में आया। अर्थात विवाह अपने असंतत्व में एक विवाह के स्वरूप में ही आया। मैलिनोवस्की का भी यही मत है कि मनुष्य प्रथम अवस्था सें ही परिवार को अपने साथ लाया है और वह एक विवाही परिवार था।

4. मातृसंतात्मक सिद्धांत - इस सिद्धांत के समर्थकों में क्रिचफील्ड और बैकोफन भी है। इस सिद्धांत के अनुसार जब पुष संपत्ति के संबंधों से अंधकार मजबूत माता बन पूर्व भारत की भारतीय धार्मिक ग्रंथ में तब यौन संबंध स्थापित कर सकता था। इस सिद्धांत के अनुसार यही विवाह का प्रारंभिक स्वरूप था।

5. उद्घोषकार्य सिद्धांत - इस सिद्धांत की विपरीत याचिका मॉगन ने की है। इसके अतिरिक्त हैवीलैड, क्रिचफील्ड तथा बैकोफन भी है। इस सिद्धांत के समर्थकों में हैं। इस सिद्धांत के अनुसार विवाह नामक संस्था एक ही बार में अपने वतमान स्वरूप में नहीं आई बल्कि उसका कृमिक रूप से उद्घोषक बुरा है। अर्थात यह यीन साम्यवाद के चरण से एक विवाह के स्वरूप तक उद्घोषक की प्रक्रिया से जुड़ा है। इस सिद्धांत के समर्थकों को एक साथ मिलाकर देखा है कि अन्य अवधारणाओं की भांति विवाह की उत्पत्ति के संबंध में भी विचारों में मतभेद है। इन सिद्धांतों को और अधिक विश्लेषण रूप से हम समाज वैज्ञानिकों के विचारों के आधार पर देख सकते हैं जैसे हैं- 

A. मॉगन का उद्घोषकार्य सिद्धांत - मॉगन का मत है कि समाज की प्रारंभिक अवस्था में विवाह नामक संस्था का अभाव था, प्रारंभ में समाज में यीन साम्यवाद की स्थिति थी। पुरुष को किसी भी खी से एवं खी को किसी भी पुरुष से यीन संबंध स्थापित करने की स्वतंत्रता थी। धीर-धीरे मानव
समाज का विकास तेज हुआ और विवाह संस्था का प्रारंभिक स्वरूप विकसित हुआ, यह विकास कुछ अवस्थाओं में हुआ। जो निम्न प्रकार है:

1. समूह विवाह
2. सिंधेमियन विवाह
3. व्यवस्थित विवाह

इसी प्रकार बेकोफेरन ने भी विवाह रूपी संस्था के विकास की तीन अवस्थाओं का उल्लेख किया है:

1. बहुपति विवाह
2. बहुपती विवाह
3. एक विवाह

B. वेस्टर्नकर्क का एक विवाह का सिद्धांत - वेस्टर्नकर्क का मानना है कि मनुष्य एवं पशु में अंतर है, मनुष्यों में भावनाएं एवं संसंदेय जैसे अपनाल एवं इंस्या पाए जाते हैं अतः प्रारंभ में भी चीन स्वाम्यवाद की स्थिति नहीं थी। व्यक्ति (सी एवं पुरुष) भावनाओं के साथ एक दूसरे से जुड़े होते थे। इस प्रकार एक विवाह ही विवाह का प्रारंभिक स्वरूप था, और आगे भी रहेगा। वेस्टर्नकर्क बहुपति एवं बहुपती विवाह को विवाहित आदेश का उल्लघन मानते हैं।

4.2.4 विवाह के प्रकार (Types of Marriage)

विभिन्न समाजों में विवाह का स्वरूप भिन्न-भिन्न है, इन्हें मुख्यतः दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:-

1. एक विवाह (Monogamy) - एक विवाह, विवाह का वह स्वरूप है, जिसमें एक समय में एक श्री एवं पुरुष एक एक श्री एवं एक श्री से विवाह करते हैं। वर्तमान में एक विवाह को विवाह का सर्वश्रेष्ठ स्वरूप माना जाता है एवं अधिकांश समाजों में यही स्वरूप प्रचलित है। हमारे देश में भी हिंदू विवाह अधिनियम 1955 के द्वारा एक विवाह को आवश्यक माना गया है। अर्थात् हमारे जनजातीय समाज का अपवाद नहीं है। उनके बीच भी विवाह का यही स्वरूप दिखाई देता है। यद्यपि उनके परिप्रेरण सामाजिक संस्थान में अन्य स्वरूपों का अतित्व अभी बचा हुआ है।

पिप्पिंगटन का कथन है “एक विवाह, विवाह का वह स्वरूप है जिसमें किसी एक समय कोई भी पुरुष एक से अधिक बिंदुओं से विवाह नहीं कर सकता।” इससे स्पष्ट होता है कि एक विवाह जीवन में केवल एक बार ही विवाह करना नहीं है बल्कि यह वह नियम है जिसके अंतर्गत एक मात्र अथवा एक पति के रहते हुए कोई पता दूसरी श्री अथवा दूसरे पुरुष से विवाह नहीं कर सकता। एक विवाह प्रचेयक समाज में विवाह का सबोंतम नियम माना जाता है। मुस्लिम अमृतस्रोतों में बहुत से शिया लोग एक विवाह को मानते हुए भी इसे अस्थायी
रूप देने में संकोच नहीं करते वास्तविकता यह है कि एक निश्चित समय के लिए किए गए अस्थायी विवाह को एक विवाह की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। एक विवाह में स्थायित्व का गुण होना सबसे अधिक आवश्यक है। साधारणतया जिन समाजों में एक विवाह को सर्वोच्च सामाजिक मूल्य के रूप में देखा जाता है। वहाँ सभी व्यक्तियों पर चीन के केंद्र में कठोर नियंत्रण लगाए जाते हैं। इस पद्धति से किए गए विवाह को सीमित अन्य समाजिक कठिनाई तो होता ही है साथ ही ऐसा करना सामाजिक रूप से अनुचित भी समझा जाता है। इस आधार पर एक विवाह की व्यापकता को सप्त करते हुए वेस्टर्नर्स ने लिखा है कि मनुष्य तो क्या पशु और पक्षी भी हमेशा से एक विवाही ही रहे हैं।

A. एक विवाह के कारण

एक विवाह के निम्नलिखित कारण इस प्रकार हैं-

1. एक विवाह का सबसे प्रमुख कारण सभी श्री और पुरुषों में ईर्ष्य की भावना होना है। किर्ति भी व्यक्ति यह नहीं चाहता कि उसके दाम्पत्य-अधिकार का बंटवारा अनेक व्यक्तियों में हो जाए इस व्रत्ति से एक विवाह को प्रोत्साहन मिलता है।

2. कुछ समाजों को छोड़कर, लगभग सभी समाजों में श्री और पुरुषों का अनुपात लगभग समान होता है। ऐसी स्थिति में एक व्यक्ति को केवल एक जीवन साथी का चुनाव करने की ही सुविधा मिल पाती है।

3. प्रथम व्यक्ति पारिवारिक संघर्ष से दूर रहने का प्रयत्न करता है। इस इच्छा के कारण भी एक विवाह की संख्या में निरंतर वृद्धि होती जा रही है।

4. एक विवाह का एक अन्य प्रमुख कारण समाज में आर्थिक साधनों की कमी होना भी है।

5. अंत में हमेशा सामाजिक नियम और वर्तमान कानून भी एक विवाह को ही समाज के लिए आवश्यक समझते हैं।

इन्हीं कारणों के फलस्वरूप कुछ समय पहले के बहुविवाही समूह भी अब एक विवाही बनते जा रहे हैं।

B. एक विवाह के लाभ

एक विवाह के निम्नलिखित लाभ इस प्रकार हैं-

1. विवाह के सभी स्तरों में एक विवाह सबसे अधिक न्यायपूर्ण ही नहीं है बल्कि इसमें श्री-पुरुष के पारस्परिक अधिकार भी सबसे अधिक सुरक्षित रहते हैं।

2. एक विवाह से बनने वाले परिवार कहां अधिक स्थायी और संगठित होते हैं। क्योंकि उनमें संघर्ष होने की सम्भावना बहुत कम रहती है।

3. ऐसे परिवारों में बच्चों की देख-रेख शिक्षा और अनुशासन का सबसे अच्छा प्रबंध सम्भव हो पाता है।
4. इन विवाहों के द्वारा समाज में सियों को उच्च सामाजिक स्थिति प्राप्त होती है। ऐसा इस कारण है कि विवाह से संबंधित दोनों पक्तों को एक दूसरे को समझने का काफी अवसर मिल जाता है।

5. एक विवाह ने मानसिक स्थितियों को बदलने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसका कारण यह है कि एक विवाह से ही व्यक्ति अपने साधनों और अवश्यकताओं के बीच संतुलन स्थापित कर पाता है।

C. एक विवाह की हानियाँ

यद्यपि एक विवाह अधिकांश सामाजिक गुणों से बुरा है। लेकिन तो भी कुछ विचारकों का कहना है कि एक विवाह के कारण समाज में अनेकांक संघर्ष और व्यक्तिगत परेशानी होती है। इसका कारण यह है कि व्यक्ति को प्रत्येक समय अपना जीवन कठिन संयम में व्यतीत करना कभी-कभी अधिक समस्याशील होता है। यह भी खतरनाक है कि एक विवाह एकाधिकारी व्यक्ति के समाज के समान है और इसमें सियों का शोषण होने की संभावना भी बढ़ जाती है। वास्तविकता यह है कि एक विवाह की ऐसी आलोचनाएं उचित नहीं है। यह प्रमाणित हो चुका है कि विवाह की सभी पद्धतियों में केवल एक विवाह ही ऐसी पद्धति है जिसमें सामाजिक जीवन अधिक प्रगतिशील बन सकता है।

2. बहुतरी विवाह (Polygamy) - बहुतरी विवाह, विवाह के वह स्वरूप है जिसमें एक पुरुष एक से अधिक सियों से अथवा एक से अधिक पुरुषों से विवाह करती/करती है। बहुविवाह मुख्यतः दो प्रकार से होते हैं -

1. बहुपत्री विवाह (Polygyny) - जब एक पुरुष एक समय में एक से अधिक सियों से विवाह करता है, तो इसे बहुपत्री विवाह कहते हैं। इस प्रकार के विवाह गोंड, भील, वैगा, टोडा, लुशाई एवं नागा जनजातियों में पाए जाते हैं।

बहुपत्री विवाह का सबसे प्रमुख कारण किसी समाज में पुरुषों की अपेक्षा सियों की संख्या का अधिक होना है। उदाहरण के लिए अधिकांश जनजातियों में सियों का अनुपात पुरुषों से अधिक होने के कारण वहां बहुपत्री विवाह का प्रचलन पाया जाता है। इस प्रथा का दूसरा कारण पुरुष में नवीनता और साथ ही एकाधिकारी भावना का आधिकारिक होना है। कभी-कभी पहली पत्नी से संतान न होने के कारण भी बहुपत्री विवाह को प्रोत्साहन मिलता है। अनेक समाजों में अनेक पत्नियों का होना सामाजिक समान और प्रतिष्ठा के सूचक बन जाता है। जिसके कारण सम्पन्न व्यक्ति एक से अधिक सियों से विवाह करने का कारण होता है। अनेक मानव समूह ऐसे हैं जिनमें सियों की आत्मक उपाय प्राप्त करते हैं जिसमें पुरुषों की प्रतिष्ठा से हानि पाने के लिए अनेक सियों से विवाह करने का प्रयास करते हैं।

इस प्रथा के अनेक लाभों को जैविक और आर्थिक क्षेत्र में स्पष्ट किया जा सकता है। इस प्रथा के कारण किसी समूह में अच्छे वंशानुग्रह की संभावना बढ़ जाती है। इसका कारण यह है कि बहुपत्री विवाह व्यवस्था उच्च स्थिति के व्यक्ति होते हैं। स्वाभाविक है कि उनकी
संतानों से भी गुणवत्ता होने की आशा की जा सकती है। एक परिवार में अधिक सियार होने से बच्चों के पालन-पोशण में सरलता रहती है। तथा परिवार में अधिक विभाजन के द्वारा सभी दायित्वों को जल्दी ही पूरा कर लिया जाता है। साधारणतया बहुपित विवाह से संबंधित समस्यों में अभिव्यक्ति की समस्या बहुत कम होती है क्योंकि ऐसे समाजों में पुनर्गठन के नवीनता की इच्छा परिवार के अंदर ही पूर्ण हो जाती है।

इस प्रथा से लाभ की अपेक्षा हानियाँ बहुत अधिक हैं जिन्हें प्रमुख रूप से परिवारिक और सामाजिक क्षेत्रों में देखा जा सकता है। ऐसे विवाहों में वियूर्यों को परिवार में कोई भी समानपूर्ण स्थान नहीं मिल पाता ये केवल कामवासना को संतुष्ट करने का एक साधन बनकर रहती हैं। ऐसे विवाहों में संबंधित परिवारों में पारस्परिक तलाश, पशुया और मतभेद की संभावना कहीं अधिक होती है। जिसके फलस्वरूप अक्षर बच्चों के व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता। बहुपित विवाह की प्रथा सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से भी उचित नहीं है। यह प्रथा पुरुषों की विरोधधिकार देखकर वियूर्यों का शोषण करती है। इस प्रथा के कारण परिवार में बच्चों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है। सीमित साधनों के कारण उनकी उचित देख-रेख भी नहीं हो पाती जिसके फलस्वरूप एक नरकुश के शिक्षक अशिक्षित शिक्षा का निर्माण होता है।

वास्तव में बहुपित विवाह की प्रथा आज तेजी से उभरती है जा रही है। इसका प्रमुख कारण वर्तमान सामाजिक अधिनियम, बंदना और बहुपित विवाह में जनजाति तथा श्रेणी में सामाजिक जागरूकता की वृद्धि होना है। यद्यपि अनेक समय समाज आज भी प्रथम अथवा संकुचित नाम पर बहुपित विवाह को बनाए रखने के पक्ष में है लेकिन इसके फलस्वरूप ऐसे समाजों की सामाजिक प्रगति बिल्कुल रुक गयी है। बहुपित विवाह को आज प्रमुख रूप से जनजातीय जीवन तथा मुस्लिम समाज की ही विशेषता का जिराफा जाता है।

2. बहुपित विवाह (Polyandry) - जब एक श्री एक समय में एकाधिक पुरुषों से विवाह करती है तो इसे बहुपित विवाह कहते हैं। बहुपित विवाह अंतर्गत एक बहुसंख्यक पुरुषों के द्वारा एक श्री और उनकी स्त्रियों की जीवन देखकर उन्हें योजना दिखाते है। अंतर्गत बहुपित विवाह अंतर्गत पुरुषों के द्वारा एक श्री की जीवन में समान काम करते हैं।

भारत की खस, टोड, कोटा, कुम्भ और कमल जनजातियों में बहुपित विवाह आज भी देखने की मिलता है। लेकिन अधिकांश जनजातियों ऐसी हैं जो धीरे-धीरे इस प्रथा को छोड़ती जा रही हैं। बहुपित विवाह की विशेषताओं को प्रमुख रूप से इस प्रकार समझा जा सकता है:

1. इस प्रथा के अंतर्गत एक श्री के अनेक पति आपस में भाई-भाई हो सकते हैं अथवा उनका आपस में कोई संबंध नहीं भी हो सकता है।
2. बहुपति विवाह में भी लड़की के सबसे बड़े पति को दूसरे पति की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त होते हैं।

3. यदि एक लड़की का विवाह अनेक भाइयों के साथ होता है तो पारिवारिक अथवा वैनिक अधिकारों के क्षेत्र में भी छोटे भाइयों को बडे भाई के आदेशों का पालन करना अनिवार्य समझा जाता है।

4. मातृ प्रधान जनजातियों में लड़की अपनी इच्छानुसार अनेक पुत्रों का पति के रूप में चयन करती है जबकि पितृ प्रधान जनजातियों में अनेक पुत्रों मिलकर एक लड़की का पति के रूप में चुनाव कर लेते हैं।

5. सामान्यतः इस प्रथा के अंतर्गत बच्चों के पिता का निधारण सामाजिक रूप से होता है।

6. विवाह की इस रीति से साधारणतः पुत्रों की अपेक्षा दिस्तियों की स्थिति अधिक उचित होती है।

बहुपति विवाह भी दो प्रकार का होता है -

1. भातृ बहुपति विवाह

2. अभातृ बहुपति विवाह

1. भातृ बहुपति विवाह (Fraternal Polyandry)- भातृ बहुपति विवाह वह है जिसमें एक लड़की के अनेक पति आपस में भाई-भाई होते हैं। विवाह का यह रूप ‘खस’ जनजाति में बहुत स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। खस जनजाति में जब बडा भाई किसी लड़की से विवाह करता है तब उसकी पत्नी सभी छोटे भाइयों की पत्नी मान ली जाती है। यदि छोटे भाई की आयु बहुत कम है तो बडा होने पर उसे एक अन्य लड़की से भी विवाह करने की अनुमति दी जा सकती है। लेकिन इस नई लड़की को भी सभी भाइयों की पत्नी के रूप में रहने आवश्यक होता है इससे स्पष्ट होता है कि भातृ बहुपति विवाह में पत्नी पर वास्तविक अधिकार सबसे बडे भाई का ही होता है यदि कोई भाई एक पृथक पति रखने का प्रयास करता है तो उसे परिवार की संपत्ति के बंचित किया जा सकता है। पत्नी से उत्पन्न संतानों का भरण-पोषण करना भी सबसे बडे भाई का ही दायित्व है। इस प्रथा की प्रमुख विशेषता यह है कि इसके अंतर्गत साधारणतः सबसे पहली संतान का पिटा सबसे बडे भाई को दूसरी संतान का पिटा उससे छोटा भाई की और इसी प्रकार आगे होने वा संतानों के पितृत्व का निधारण सामाजिक रूप से होता रहता है।

2. अभातृ बहुपति विवाह (Non-fraternal Polyandry)- यह विवाह का यह रूप है जिसमें अनेक पतियों के बीच किसी प्रकार का रूप संबंध होना आवश्यक नहीं होता विवाह की यह प्रथा नीलगिरी पहाड़ियों की टोडा जनजाति में पायी जाती है। इस जनजाति में लड़की के अनेक पति भिन्न-भिन्न स्थानों के निवासी होते हैं और अपनी इच्छानुसार किसी भी पति के साथ रह सकते हैं। तकनी व्यावसायिक रूप से एक पति के साथ रहने की अवधि एक माह से अधिक नहीं होती। इस जनजाति में लड़की को पुत्र की अपेक्षा अधिक अधिकार मिले होते हैं। बड़ी मनोरंजक बात यह है कि यदि पत्नी की मृत्यु हो जाय तो उसके सभी
पतियों को विषुर जीवन की समस्याओं का सामना करना पडता है। अभाव में बहुपति विवाह की सबसे बड़ी समस्या यह है कि बच्चे के पितृवृत्त का निधारण कैसे किया जाए इसके लिए टोडा जनजाति में ‘पर्स्युतपिमिम’ संस्कार किया जाता है। अर्थात बच्चे के जन्म के बाद जो पति अपनी पत्नी को धनुष बाण देकर बच्चे का दायें लेने की घोषणा करता है उसी को उस बच्चे का पिता स्वीकार कर लिया जाता है।

इसके पश्चात भी वास्तविकता यह है कि टोडा जनजाति में भी ऐसे विवाहों का विरोध लगाया जा रहा है। कुछ समय पहले की बहुपति विवाही नायर जनजाति भी अब एक विवाही समूह के रूप में बदलती जा रही है।

बहुपति विवाह के कारण - सर्वप्रथम समूह में पुरुषों की अपेक्षा चिंताओं के अनुपात में कमी होने से इस प्रथा को प्रोत्साहन मिलता है। कुछ जनजातियों में एक पुरुष को विवाह करने के लिए लड़की के पिता को कुन्या मूल्य देना पड़ता है। इसके फलस्वरूप अनेक निर्धन पुरुष मिलकर एक स्थल से विवाह करते हैं। इस प्रथा का एक प्रमुख कारण जनजातियों का संख्या से भरा हुआ नागरिक जीवन है। जनजातियों परिवार के आकार को छोटा रखने और परिवार में मेहनत करने वाले सदस्यों की संख्या अधिक रहने के लिए भी बहुपति विवाह का समर्थन करते हैं।

कपाडों का विचार है कि जनजातियों में पुरुष साधारणतया घर से दूर ही रहते हैं। ऐसी स्थिति में चिंता की सुरक्षा के दृष्टिकोण से भी बहुपति विवाह को प्रोत्साहन मिला होगा अंत में, बहुपति विवाह का एक मुख्य कारण पैतृक संपत्ति को विभाजन से बचने की इच्छा भी है। जब अनेक चिंताओं की एक ही पत्नी हों तो उनके बीच संपत्ति के विभाजन का कभी प्रश्न ही नहीं उठ सकता।

बहुपति विवाह के गुण - इस प्रथा के जनजातियों के सामाजिक जीवन को संगठित रखने में अस्वस्त्र कार से सहयोग दिया है। जिन जनजातियों में बहुपति विवाह का प्रचलन है वहां सामाजिक संघर्ष की मात्रा बहुत कम है क्योंकि वहाँ यीन के आधार पर संघर्ष की समभावना बहुत ही कम रह जाती है। ऐसे विवाहों ने परिवार के आर्थिक साधनों को भी अधिक होने में उद्देश्य दिया है। बहुपति विवाहों के फलस्वरूप परिवार में बच्चों की संख्या बहुत सीमित रहती है। इसके फलस्वरूप परिवार में उद्धरण निर्धनता के बाद भी अपने आर्थिक संतुलन को बनाए रखती है। जनजातियों में भूमि, पशु और थोड़े से वापसी ही उनकी संपत्ति होती है। इस प्रथा के द्वारा संपत्ति को अनेक और दीवार तक सुरुकिया बनाए रखने में जनजातियों की सहायता की है।

बहुपति विवाह के दोष - इस प्रथा के मुख्य दोष सामाजिक और जीवनीय आधार पर देखा जा सकता है।

बहुपति विवाह के फलस्वरूप चिंताओं के साथ एक विशेष बाण है जबकि खून में अनेक भीमारों की होने का रहता है। इस प्रथा के कारण इसमें आपस में बच्चे की संख्या में वृद्धि होती है। इस प्रथा के कारण इसमें आपस में संघर्ष में आंदोलन होता है जिसे परिणाम यह होता है कि समूह में कभी-कभी अनैतिकता और कामाचार का समय बढ़ा लेता है। ऐसे विवाह पुरुषों के लिए संघर्ष की एक खुली चुनौती देते हैं जिसके परिणामस्वरूप परिवार और समूह में ही पारस्परिक मतभेद अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाते हैं। परिवारिक विपण इसका स्वभाविक परिणाम होता
है। बहुपति विवाह के कारण लड़कियों की अपेक्षा लड़कों का जन्म अधिक संख्या में होता है और इस प्रकार खियों का अनुपात पुरुषों से कम हो जाने के कारण यह प्रथा स्थाई रूप ले लेती है। इससे सब दोषों का परिणाम है कि वर्तमान युग में सम्पत्ति के संपर्क में आने वाली कोई भी जनजाति बहुपति विवाह की प्रथा को अच्छा नहीं समझती।

3. समूह विवाह (Group Marriage) - समूह विवाह में, पुरुषों का एक समूह खियों के एक समूह से विवाह करता है, इस प्रकार समूह का प्रत्येक पुरुष प्रत्येक खिय का पति एवं समूह की प्रत्येक खिय प्रत्येक पुरुष की पत्नी होती है। यह विवाह भी दो प्रकार का होता है- समवृपुष्त एवं विवृपुष्त समूह विवाह।

वर्तमान में समूह विवाह प्रचलन में नहीं है। बहुपति टोड़ा जनजाति में बहुपति एवं बहुपति विवाह के समय अवधारणा को कुछ विवाह समूह विवाह का ही प्रकार मानते हैं।

4. अधिमान्य विवाह (Preferential Marriage) - विवाह का एक अन्य स्वरूप अधिमान्य विवाह भी है। इस प्रकार के विवाह के लिए किसी एक समूह विशेष को प्राथमिकता (वरीयता) दी जाती है। अथात व्यक्ति को पूर्व से ही जात होता है कि उसे किस समूह से जीवन साथी प्राप्त होगा। इस प्रकार के विवाह को अधिमान्य: तीन प्रकारों में बांटा जा सकता है-

1. सहोदर विवाह (Cousin Marriage) - भाई-भाई एवं भाई-बहन तथा बहन-बहन की संतानों के बीच होने वाला विवाह सहोदर विवाह कहलाता है। इस प्रकार का विवाह मस्तीम समुदाय में पाया जाता है। जमू-कश्मीर एवं राजस्थान की कुछ जनजातियों में भी इस प्रकार के विवाह का प्रचलन है।

2. देव विवाह/भाभी विवाह (Levirate) - इस प्रकार के विवाह म मृतक यि के छोटे भाई से उसकी पत्नी का विवाह होता है। भारतीय समाज की जाति संरचना में बहुत सी जातियों में इस प्रकार के विवाह प्रचलित है। इसके अतिरिक्त गोंड, संथाल एवं खरया जनजाति में भी विवाह का यह स्वरूप प्रचलित है।

3. साली विवाह (Sororate) - जब किसी पुरुष की पत्नी का देहांत हो जाता है, तो उसकी पत्नी की बहन से विवाह होता है। अपवाद स्वरूप पत्नी के जीवन रहते हुए भी उसकी बहन से विवाह होता है, संतान प्राप्त इसका प्रमुख कारण होता है। गोंड एवं खरया जनजाति में विवाह का यह स्वरूप प्रचलित है।

4.2.6 विवाह संबंधी नियम

विवाह से संबंधित एक अन्य अवधारणा विवाह संबंधी नियम भी महत्वपूर्ण है। ये नियम निम्नलिखित इस प्रकार हैं-

1. अंतिववाह (Endogamy) - अंतिववाह से तात्पर्य है व्यक्ति अपने जीवन-साथी का चुनाव अपने ही समूह से करे। यह समूह अलग-अलग समाजों में अलग-अलग हो सकता है जैसे जाति, प्रजाति, समुदाय इत्यादि। हिंदू धर्म में अपनी ही जाति के अंदर विवाह करना अंतिववाह का उदाहरण है।
2. बहिर्विवाह (Exogamy) - बहिर्विवाह से तात्पर्य है कि एक व्यक्ति जिस समूह का सदस्य है उस समूह से बाहर विवाह करें। यह समूह भी अलग-अलग समाजों में अलग-अलग हो सकता है। हिंदुओं में बहिर्विवाह के निम्नांकित स्वरूप हैं:

1. गोट्र बहिर्विवाह (Clan Exogamy) - हिंदू धर्म के अनुसार एक गोट्र के व्यक्ति आपस में विवाह नहीं कर सकते, एक गोट्र के खी-पुरुष आपस में भाई-बहिन माने जाते हैं। यदापि हिंदू विवाह अधिनियम 1955 इससे प्रतिबंध समाप्त कर चुका है, फिर भी यह निषेध प्रचलन में है।

2. सप्रवर बहिर्विवाह (Sapvar Exogamy) - समान पूजल एवं समान ऋषय को मानने वाले व्यक्ति स्वयं को एक ही प्रार न का सदस्य मानते हैं एवं एक प्रवर के व्यक्ति आपस में विवाह नहीं कर सकते हैं। यदापि हिंदू विवाह अधिनियम 1955 द्वारा इस पर से निषेध हटाया गया है।

3. सपिंड बहिर्विवाह (Sapind Exogamy) - सपिंड का तात्पर्य है एक ही मृत यि को पिंडदान देने वाले लोग या उसके रक्त कण से संबंधित लोग। मिताक्षर के अनुसार वे सभी जो एक ही शरीर से पैदा हुए हैं सपिंडी हैं। सपिंड बहिर्विवाह के अनुसार पिता की ओर से एवं माता की ओर से कई पीढ़ियों तक विवाह को निषेध माना गया है। बंधुत्व ने पिता की ओर से आठ एवं माता की ओर से पांच पीढ़ियों तक विवाह को निषेध नहीं किया गया है। सपिंड विवाह के अनुसार पिता की ओर से आठ एवं माता की ओर से छः पीढ़ियों तक आपस में विवाह को प्रतिबंधित माना है।

हिंदू विवाह अधिनियम 1955 ने सपिंड बहिर्विवाह को मान्यता प्रदान की है। इस अधिनियम ने भी माता एवं पिता दोनों ओर से तीन-तीन पीढ़ियों के सदस्यों के सपिंडों में परस्पर विवाह को प्रतिबंधित किया है, परंतु यह भी प्रावधान किया है कि किसी समुदाय विशेष के परस्पर अथवा पारंपरिक प्रथा विनिषेध नहीं मानती है तो ऐसा विवाह वै भी माना जाएगा।

4. ग्राम बहिर्विवाह (Village Exogamy) - हिंदू धर्म के कुछ समुदायों में ग्राम बहिर्विवाह भी प्रचलित रहा है। जैसे पंजाब, हरियाणा, एवं दिल्ली में उस गांव में भी विवाह वर्जित था, जिसकी सीमा स्वयं के गांव से लगी है। यदापि वर्तमान में यह समासाप्राय है। कुछ जनजातीय समुदायों जैसे असम एवं नागलैण्ड के नागाओं में वह खेल बहिर्विवाह के नाम से प्रचलित है।

5. टोटम बहिर्विवाह (Totem Exogamy) - भी जनजातियों में प्रचलित है। अर्थात् एक ही टोटम को मानने वाले आपस में विवाह नहीं करते।

3. अनुलोम विवाह (Hypogamy) - जब किसी उच्च सामाजिक समूह के पुरुष का विवाह निम्न सामाजिक समूह की सी से होता है, तो इसे अनुलोम विवाह कहा जाता है। जैसे किसी उच्च जाति, उपजाति, वर्ण, गोत्र एवं कुल के पुरुष का निम्न जाति, उपजाति, वर्ण, गोत्र एवं कुल की महिला से विवाह। के.एम.कपाड़िया ने इस प्रकार के विवाह को प्रतिबंधित विवाह की संज्ञा दी है।
4. प्रतिलोम विवाह (Hyergamy) - इस प्रकार के विवाह में श्री उच्च सामाजिक समूह की एवं पुरुष निम्न सामाजिक समूह का होता है। जब उच्छ जाति, उपजाति, वर्ण, गोत्र अथवा कुल की श्री का विवाह निम्न जाति, उपजाति, वर्ण, गोत्र अथवा कुल के पुरुष से होता है तो इसे प्रतिलोम विवाह कहते हैं। हिंदू शास्त्रों ने इस प्रकार के विवाह को निषिद्ध माना है। वर्तमान में प्रतिलोम विवाह की संख्या काफी कम रही है।

4.2.7 जनजातियों में जीवन-साधनी चरण की पद्धतियाँ

जनजातीय संस्कृति एक समूह संस्कृति है, जिसकी प्रकृति मीठनी एवं अनौपचारिक है। जनजातीय समुदायों की संस्कृति, भौगोलिक स्थिति एवं आधिक गतिविधियों को एक-दूसरे से पूर्णत: पृथक्त होती है। इसका साक्षरता अर्थात् जहां पुरुष एवं महिला के तीर्थ एवं सहभागिता की सामग्री थी जब उच्छ जाति, उपजाति, वर्ण, गोत्र अथवा कुल के पुरुष से होता है, तो इसे प्रतिलोम विवाह में जीवन-साधनी चरण का रूप माना गया था। इस प्रकार, जनजातीय समुदाय में जीवन-साधनी चरण की पद्धतियाँ विविधता की गई थीं।

1. क्रय विवाह (Marriage by Purchase) - जनजातियों में प्रचलित विवाह का वह रीति, जिसमें वर पशु को कन्या मूल्य (Bride Price) चुराना होता है क्रय विवाह कहलाता है। यह भारत की लगभग सभी जनजातियों में पाया जाता है। पवित्र रूप से गोड, भील, कुँकी, ओरांव, हो, संदूल तथा नागा जनजातियों में प्रचलित है। पत्नियों के ख्याते तथा सभी प्रदेश (अलीराजपुर एवं कुछी जिले) के भील, भिलाला बारेली तथा भंडालिया समुदायों में यह आज भी बहुत अधिक प्रचलन में है।

2. सेवा विवाह (Marriage by Service) - जब विवाह करने वाले पुरुष, लड़की के घर रहकर परिवार के कार्यों में सहयोग करते हैं और अपनी सेवा दान करते हैं, तो इस प्रकार के विवाह की रीति को सेवा विवाह कहा जाता है। गोड जनजाति में 'सेवा' प्रदान करने वाले व्यक्ति को लमसेना एवं बैगा जनजाति में इसे रमसेना नाम से जाना जाता है।

3. हरण विवाह (Marriage by Capture) - कुछ जनजातियों में लड़कीं का हरण कर विवाह करने की पंचमा रही है। जैसे गोड, भील, विरहोर, खरिया, नागा, घुंडा आदि। गोड जनजाति में हरण विवाह को ‘पोसिंटु’ नाम से जाना जाता है। कुछ समुदायों में इस प्रतीकात्मक रूप से प्रचलित है, वास्तविक हरण विवाह प्रचलन में नहीं है।

4. विनिमय विवाह (Marriage by Exchange/Negotiation) - इस प्रकार के विवाह में एक परिवार के लड़के एवं लड़की का विवाह दूसरे परिवार के लड़के एवं लड़की से होता है। गोड जनजाति में इस प्रकार के विवाह को ‘लूध लौटवा’ कहा जाता है।

5. पलायन विवाह (Ellopment Marriage) - इस प्रकार के विवाह में एक परिवार के लड़के एवं लड़की का विवाह दूसरे परिवार के लड़के एवं लड़की से होता है। गोड जनजाति में इस प्रकार के विवाह को ‘लूध लौटवा’ कहा जाता है।
जाता है। गोड़, भील, हो तथा भील जनजाति की उप-जनजातियों में प्रचलित है। हो जनजाति में इसे राजी-खुशी विवाह के नाम से जाना है।

(6). हठ विवाह (Marriage by Intrusion) - जनजातियों में प्रचलित विवाह के तरीकों में यह भी एक प्रमुख तरीका है, जिसमें विवाह का इच्छुक लड़का अथवा लड़की, उस घर में जाकर रहने लगता है जिस घर की लड़की अथवा लड़के से उसे विवाह करना होता है। उस घर के लोग उसे निकालते बस तो वह हठ पूर्वक उस घर में निर्धारित समयावधि तक रहता एवं रहती है। निर्धारित समय तक सफलता पूर्वक उस घर में रह जाने के बाद समुदाय उन दोनों का विवाह कर देता है। कभी-कभी घर के लोग यात्रा भी कर देते हैं। अलग-अलग समुदायों में हठपूर्वक रहने की अवधि अलग-अलग है। यह सामान्यतः एक वर्ष से तीन वर्ष तक होती है। यह उरांव एवं हो जनजातियों में प्रचलित है। हो जनजाति इसे अनादर विवाह एवं उरांव इसे निर्भूलक कहते हैं।

(7). परीक्षा विवाह (Trial Marriage) - कुछ जनजातियों में यह तरीका, विवाह करने वाले युवक के साहस एवं शौर्य की परीक्षा हेतु प्रचलित है। इसका एक आशय यह भी है कि विवाह निम्न समय तक पूर्ववाह अथवा पति-पत्नी विवाह प्रारंभ कर देते हैं एवं बाद में विवाह कर लेते हैं या अलग हो जाते हैं। यह परीक्षा अवधि कुछ समुदायों में सुनिश्चित होती है, कुछ में सुनिश्चित नहीं होती है, जैसे की गोड़ जनजाति में इस प्रकार के तरीके से साथ रहने वाले व्यक्ति कई बार अपने बच्चों के विवाह के साथ अपना विवाह करते हैं। मणिपुर की कूली जनजाति में इसका विशेष रूप से प्रचलन है।

(8). परवीा विवाह (Probation Marriage) - कुछ जनजातियों में विवाह का यह तरीका प्रचलित है, जिसमें विवाह करने के इच्छुक लड़का एवं लड़की विवाह पूर्व पति-पत्नी विवाह प्रारंभ कर देते हैं एवं बाद में विवाह कर लेते हैं या अलग हो जाते हैं। यह परवीा अवधि कुछ समुदायों में सुनिश्चित होती है, कुछ में सुनिश्चित नहीं होती है, जैसे की गोड जनजाति में इस प्रकार के तरीके से साथ रहने वाले व्यक्ति कई बार अपने बच्चों के विवाह के साथ अपना विवाह करते हैं। मणिपुर की कूली जनजाति में इसका विशेष रूप से प्रचलन है।

A. विवाह के संस्था का महत्त्व

विभिन्न समाजों में विवाह के रूप में चाहे कितनी भी भिन्नता क्यों न पायी जाती हो लेकिन एक संस्था के रूप में विवाह सर्वथा प्रचलित है और अपने महत्त्व के कारण यह सबसे महत्वपूर्ण संस्था का एक अनिवार्य संरक्षण है। विवाह संस्थापक महत्व का इसके उद्देश्यों तथा कारणों में निहित है जिसे विद्वानों में देखा जा सकता है।

1. पारिवारिक जीवन की स्थापना - यदि हम प्रश्न करें कि विवाह की उत्तमत क्यों हुई तो हमें सर्वाधिक स्नाता ज्ञात हो जाता है कि संस्था के रूप में विवाह का महत्व कितना सर्वथा प्रचलित है। वैदिक और मौर्यन ने यह स्पष्ट किया कि आदिकाल में स्त्री-पुरुष के धर्मिक संबंध विशेषक किया गया था। तब ऐसे किसी भी नियम का अभाव था जिससे व्यक्तियों के जीवन को नियंत्रण में रखा जा सके।
इससे न केवल संघर्ष अपनी पराक्राम पर पहुँच गए बल्कि बच्चे के पितृत्व का निर्धारण करना भी लगभग असंभव था। इन्हीं परिस्थितियों में विवाह की एक लम्बी प्रक्रिया के द्वारा विवाह जैसी संस्था की उत्पत्ति हुई तथा इसी के द्वारा व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों को व्यवस्थित किया जा सका। विवाह के द्वारा ही परिवार का निर्माण संभव हो पाता है और वैवाहिक संबंधों के द्वारा ही नातेदारी व्यवस्था के अंतर्गत प्राथमिक समूहों का निर्माण होता है। इस प्रकार विवाह एक केंद्रीय संस्था है। विवाह में होने वाला कोई भी परिवर्तन सामाजिक संगठन और दूसरी संस्थाओं की त्रिक्षयाशीलता को प्रभावित करता है।

2. बच्चों का वैधता प्रदान करना - एक संस्था के रूप में विवाह का सम्भवत: रूप सबसे महत्वपूर्ण कार्य बच्चों को वैध रूप प्रदान करना है। विवाह की अनुपस्थिति में यदि बच्चे के पितृत्व को ज्ञात न किया जा सके तो इससे बच्चों को समाज में एक समानार्थी पद मिलने में ही कठिनाई नहीं होती बल्कि समूह के नैतिक नियम भी कमजोर पड़ जाते हैं। इससे बच्चों ने अनुभवका में वृद्धि होने की सम्भावना रहती है। विवाह इस समस्ती का समाधान करके बच्चों को वैध रूप प्रदान करता है और उन्हें एक दृढ़ पारिवारिक परंपरा से संबंध करता है। जिन समाजों में धार्मिक विवाह तथा पत्रविवाह की धारणा का महत्व अधिक है वहाँ बच्चों की वैधता ही उनकी सामाजिक स्थिति का सबसे बड़ा आधार बन जाती है। इस प्रकार हमारे जैसे समाज में तो विवाह के बिना जन्म लेने वाले बच्चों का अविश्वसनीय भावना सम्भव नहीं है।

3. सामाजिक संबंधों की सुधारता - सामाजिक संबंधों की व्यवस्था को प्रभावित करने में भी विवाह संस्था का प्रमुख योगदान रहा है। वैवाहिक संबंधों की पूर्वभूमि में ही बच्चा कुछ दूसरे व्यक्तियों से अपनी एक रूपता स्थापित करता है। इसका प्रत्यय है कि व्यक्ति को अपने रूप संबंधियों, नातेदारों व दूसरे व्यक्तियों के बीच भेद करना सिखाता है। विवाह से संबंधित आदर-नियम ही व्यक्ति में उचित और अनुचित की धारणा का विकास करते हैं। उचित और अनुचित की यही धारणा बाद में समाज को एक नैतिक व्यवस्था में परिवर्तित कर देती है। यदि विवाह जैसी कोई संस्था समाज में न होती तो सम्भवत: परिवार का निर्माण न होता और यदि अभिशिष्ट प्रकृति के परिवार बन भी जाते तो उनकी कामधेयता से रक्षा करना लगभग असंभव हो जाता। इस प्रकार सामाजिक संबंधों की व्यवस्था को दूर बनाने अथवा दूसरे शब्दों में समाज का निर्माण करने में विवाह के महत्व उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसी आधार पर हॉवेल का कथन है कि विवाह का प्रमुख कार्य व्यक्तियों के संबंधों को उनके रूप संबंधियों और नातेदारों के प्रति परिभाषित करना तथा उन पर नियंत्रण रखना है।

4. व्यक्ति का समाजीकरण - व्यक्ति के समाजीकरण में भी विवाह संस्था अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यह व्यक्ति को अपने से भिन्न विचार धाराएं परंपरा और रहन-सहन के व्यक्तियों से अनुकूलन करना
सिखाती है। विवाह संस्था व्यक्तियों को व्यक्तिवादिता की संक्षिप्तता से बाहर निकालकर पारिवारिक कल्याण की भावना को अधिक दुःख बनाती है। यह त्योग का बढावा देती है और पारस्परिक कर्तव्य के प्रति निष्ठा उल्लिख्त करती है। यही गुण एक मानव प्राणी को सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित करते हैं।

5. संस्कृति का संचरण - विवाह संस्था का एक प्रमुख कार्य संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संचरित करने में सहायता देना और इस प्रकार संस्कृति को स्थायी बनाना है। विवाह की अनुस्थिति में व्यक्ति के अनुभव पूर्णता व्यक्तिगत होते हैं। विवाह के द्वारा एक वंश परिवारका निर्माण होता है और सांस्कृतिक विशेषताओं पिता से उसके पुत्र को मिलाये से यह लगातार आगामी पीढ़ी को संचरित होती रहती है। इस प्रकार विवाह केवल जैविकीय आधार पर ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन को व्यवस्थित रखने में भी इसका महत्वपूर्ण योगदान है।

6. यौन संबंधों की नियमनवज्ञता - यौन संबंध की जीवनिकी आवश्यकता है तथा विवाह के बिना इस संस्थागत रूप से पूरा नहीं किया जा सकता। विवाह के द्वारा स्त्री व पुरुष के स्वतंत्र संबंधों की सम्बन्धता को ही कम नहीं किया जाता बलि बच्चों और उनके माता पिता के संबंध को एक सुदृढ़ आधार प्रदान किया जाता है। यही संबंध व्यक्तिगत तथा सांस्कृतिक जीवन को संगठित बनाते हैं और सांस्कृतिक विकास के लिए अनुकूल तत्तावरण का निर्माण करते हैं। इस प्रकार विवाह केवल एक संस्था ही नहीं है बल्कि सभी सामाजिक संस्थाओं में इसका महत्व केंद्रीय है।

B. विवाह में आधुनिक परिवर्तन

सभी समाजों में आज विवाह संस्था नए परिवेश प्राप्त कर रही है। यह सच है कि कुछ समाजों में विवाह के रूप में होने वाला परिवर्तन अपेक्षाकृत कम है। जबकि कुछ समाजों में विवाह से संबंधित मान्यताएं, निषेध और आधारभूत सिद्धांत पूर्णता बदल चुके हैं। वर्तमान युग में विवाह के सभी नए परिवेशों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। विवाह का पहला परिवेश वह है जो रोमांटिक प्रेम की आधुनिक सत्य के कारण हमारे सामने आया है। जो सामाजिक वर्तमान शिक्षा और औद्योगिक परिवर्तन का परंपरा है। विवाह का दूसरा परिवेश वह है जो सामाजिक विधि की आधुनिक सत्य के कारण हमारे सामने आया है। जो सामाजिक वर्तमान शिक्षा और औद्योगिक परिवर्तन का परिणाम है। रोमांटिक प्रेम की आधुनिक सत्या ने वैवाहिक संबंधों की स्थिति को सबसे अधिक प्रभावित किया है। यदि हम सामाजिक समाज के उदाहरण लें तो ज्ञात होगा कि यह स्थिति हमारे वैवाहिक और पारिवारिक जीवन को प्रभावित करने में सबसे अधिक महत्वपूर्ण रही है। रोमांटिक प्रेम एक विशेष वैवाहिक प्रेम है जो विवाह को एक शास्त्रीय न मानक उसे स्त्री-पुरुष का सुविधाजनक बंधन मानती है। इस वैवाहिक प्रेम के कारण विवाह से पहले ही लोग और पुरुष एक दूसरे के निंदित संशय में आना बुरा नहीं समझते बल्कि कभी-कभी तो विवाह से पूर्व के संबंधों को सुसंगीत पारिवारिक जीवन का आधार तक मान लिया जाता है। इसलिए कि इस वैवाहिक प्रेम के प्रभावित विवाहों में जाति सम्प्रदाय
अथवा परिवार की कुलीनता आदि को अधिक महत्व नहीं दिया जाता। कभी-कभी भी भिन्न धर्मों के व्यक्ति भी प्रेम संबंधों के कारण विवाह कर लेना अच्छा समझते हैं। इसका तत्त्वार्थ यह नहीं है कि रोमांस से प्रभावित विवाह अथवा दूसरे शब्दों में प्रेम विवाह को हम अनैतिक अथवा अनुचित कह दे। इससे इतना अवशय ख़ुश होता है कि ऐसे विवाहों के कारण हमारी परम्परागत सांस्कृतिक विशेषताओं और सामाजिक मूर्तियों के सामने गम्भीर समस्याएं उत्पन्न हो जाती है। ऐसे विवाह व्यक्तिवादिता और एकांकी परिवार को प्रोत्साहन देते हैं जिससे संयुक्त परिवार व्यवस्था को बनाए रखना कठिन हो जाता है। प्रेम विवाह वास्तव में दो व्यक्तियों का संबंध है, दो परिवारों का नहीं। वास्तविकता यह है कि प्रेम भावना अपने आप में एक उद्धर्त है जिसमें तर्क और विवेक का अधिक महत्व नहीं होता। इस भावना से प्रभावित परिवार भी साधारणतया अधिक धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर पाते। इसका एक कारण यह है कि प्रेम विवाह के अंतर्गत दोनों पक्ष अपने-अपने अवधिकारों का दावा अधिक करते हैं जबकि उनमें कर्त्य का बोध बहुत कम होता है। दूसरा कारण यह है कि वैधात्मिक जीवन की अपनी कुछ प्रमुख आवश्यकताएं होती हैं जिनको पूरा करने के लिए पारस्परिक सहानुभूति और व्यक्ति की आवश्यकता होती है। रोमांटिक प्रेम में इस प्रकार परिवारिक व्यवस्था कठिनता से ही पैदा होती है। यदि विविध समाजों में सांख्यिकीय एकत्रित की जाय तो मातृभूमि होगा कि जिन समाजों में रोमांटिक प्रेम के द्वारा विवाह जितनी अधिक मात्रा में होते हैं वहाँ विवाह-विच्छेद की संख्या भी उतनी ही अधिक होती है। इसका मुख्य कारण यह है कि रोमांटिक प्रेम के अनुगमन पति और पत्नी की स्थिति विवाह से पहले और विवाह के बाद बिल्कुल भिन्न-भिन्न हो जाती है। इसकी भिन्नता कि कभी-कभी इसका अनुमान लगाना भी कठिन होता है। संभावित है कि इसके वैवाहिक संबंधों की स्थिता ही कम नहीं होती बल्कि बच्चों पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

उपर्युक्तविवेचन का तत्त्वार्थ यह नहीं है कि प्रेम विवाह वैवाहिक संबंधों की स्थिता की हमेशा प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं। वास्तविकता यह है कि ऐसे विवाहों के फलस्वरूप पति और पत्नी की एक-दूसरे की भावनाओं को समझना और एक-दूसरे से अनुकूल करने का सबसे अधिक असर मिलता है। साधारणतया ऐसे विवाहों में पति-पत्नी की योग्यता रूचि और आयु में अधिक अंतर नहीं होता। इसके फलस्वरूप समाज में वैवाहिक समस्याएं पैदा नहीं हो पाती जिनका सामना हम पिछले सैकड़ों वर्षों से करते आ रहे हैं। इस दृष्टिकोण से रोमांटिक प्रेम से प्रभावित विवाह अक्सर वैवाहिक संबंधों की स्थिता को बढ़ाने में भी सहायक हैं। शिक्षा और आधुनिकताओं के प्रभाव से रोमांटिक प्रेम के फलस्वरूप भी विवाह के रूप में आज क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। सर्वप्रथम अब कोई भी शिक्षित व्यक्ति विवाह को जन्म-जन्मांतर का एक अन्तरंग धार्मिक बंधन नहीं समझता। अब जब कभी भी पति-पत्नी के बीच सहयोग पृष्ठभूमि अपने आप है तो विवाह-विच्छेद कर लेना अधिक अधिक बढ़ जाता है। हमारे समाज में विवाह का प्रमुख उद्देश्य धार्मिक दाहित्यों को पूरा करना अथवा पुनःप्राप्ति आदि करना नहीं रह गया है। इसके अतिरिक्त सामाजिक जीवन में यज्ञ आदि तथा तर्थ जैसी क्रियाओं के प्रति उदासीनता बढ़ने के कारण भी विवाह से संबंधित परंपरागत मनोवृत्ति बहुत तेजी
से बदल रही है। शिक्षा संस्थाओं में सह-शिक्षा में वृद्ध होने तथा मनोवृत्तियों में परिवर्तन हो जाने से अंतरजातीय विवाहों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। वास्तविकता यह है कि हमारे समाज में स्वतंत्रता के बाद बनने वाले सामाजिक विधानों ने भी विवाह के रूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। इन विधानों के कारण केवल एक विवाह को ही मान्यता दी गयी तथा विवाहितों की सभी नियमित्वताओं तथा जाति संबंधी बंधनों को कानून के द्वारा समाप्त कर दिया गया है। सामाजिक विधानों के सामने गोत्र, प्रजा अथवा सप्तशाला का कोई विषय महत्व नहीं है। इन सब परिवर्तनों के फलस्वरूप विवाह से संबंधित पुरातन समस्या जरूर समाप्ति हो गयी है। लेकिन आज की समस्या बड़ी समस्या है कि विवाह का धीरे-धीरे व्यापारीकरण हो रहा है। इस व्यापारीकरण का स्थापना हमें देखने की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के रूप में देखने की मिल रही है। इन सब परिवर्तनों को देखते हुए हम यह समझ सकते हैं कि भविष्य में विवाह के रूप में और भी अधिक जातिकर्मी परिवर्तन हो जाएंगे।

4.2.8 सारांश

इस इकाई के अंतर्गत हमने ‘विवाह’ नामक सामाजिक संस्था की अवधारणा को विस्तार से समझा। विवाह की परिभाषा एवं उद्देश्य जानने तथा विवाह की उत्पत्ति संबंधी प्रमुख सिद्धांतों को समझा। विवाह के प्रकार (स्वस्वरूप) एवं विवाह संबंधी नियमों और भी इस इकाई में विस्तार से चर्चा की गई है। जनजातियों में विवाह के तरीकों (पद्धतियों) को उनके सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में समझने का प्रयास किया गया है।

4.2.9 बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न
1. विवाह को परिभाषित कीजिए।
2. विवाह के उद्देश्य लिखिए।
3. विवाह की उपत्ति से संबंधित प्रमुख सिद्धांतों के नाम बताइए।
4. विवाह की उपत्ति के एक विवाह सिद्धांत का वर्णन कीजिए।
5. मोर्गन के संदर्भ में विवाह के उद्भवक्रियाय सिद्धांत की व्याख्या कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
1. ‘एक विवाह’ से आशय पक्ष कीजिए।
2. बहुविवाह की व्याख्या कीजिए एवं इसके उप प्रकारों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
3. अंतर्विवाह एवं बहिविवाह की अवधारणा का विस्तृत वर्णन कीजिए।
4. जनजातियों में विवाह के तरीकों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
5. परीक्षा विवाह किन-किन जनजातियों में प्रचलित है? स्पष्ट कीजिए।
6. विनिमय विवाह को गाँठ जनजाति के उदाहरण के साथ स्पष्ट कीजिए।
4.2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

5. मनोमयन, डी.एन. एंड मदन, टी.एन. (1956). एन इंटरोड्क्शन टू सोशियल एंड्रोपोलॉजी. बॉम्बे: एशियन पिलिशिंग हाउस.
7. रोजले, एन.एच. (1903). संस्कृति ऑफ इंडिया रिपोर्ट. शिमला: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया प्रेस.
8. साह, बी.एन. (1998). एन टू ट्राइव्ह्यूल वेल्फेयर इन पोस्ट इंडेव्हेंस एण्ड एंड्रोपोलॉजिस्ट. वोल.25, नं.1, पप. 73-81.
10. श्रीनवास, एम.एन. (1952). रिलेजन एण्ड सोसाइटी एमजं कटूट ऑफ साउथ एंडरिया. बॉम्बे: एशियन पिलिशिंग हाउस.
11. श्रीनवास, एम.एन. (1966). सोशियल चेंज इन मोर्नर इंडिया. बर्लिन: यूनिवर्सिटी ऑफ केजिनिऻोर्निया प्रेस.
इकाई: 3 भारत की जनजातियां: भील, गोंड, संथाल, थारू, खासी, गारो, जैंतिया एवं नागा

इकाई की रूपरेखा
4.3.0 उद्देश्य
4.3.1 प्रस्तावना
4.3.2 भील जनजाति
4.3.3 गोंड जनजाति
4.3.4 संथाल जनजाति
4.3.5 थारू जनजाति
4.3.6 खासी जनजाति
4.3.7 गारो जनजाति
4.3.8 जैंतिया जनजाति
4.3.9 नागा जनजाति
4.3.10 सारांश
4.3.11 बोध प्रश्न
4.3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.3.0 उद्देश्य
इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप-

- भारत की कुछ जनजातियों से भली-भांति परिचित हो सकेंगे।
- भील जनजाति की सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना को समझ पाएंगे।
- गोंड जनजाति के सामुदायिक, सामाजिक संगठन से परिचित होंगे।
- संथाल जनजाति को जान पाएंगे।
- थारू जनजाति को समझ पाएंगे।
- खासी जनजाति को समझ पाएंगे।
- गारो जनजाति को समझ पाएंगे।
- जैंतिया एवं नागा जनजाति को समझ पाएंगे।
4.3.1 प्रस्तावना

भारत, विविधता प्रधान देश है। हमारे सामाजिक- सांस्कृतिक, भौगोलिक परिदृश्य में तो पर्याप्त भिन्नता है ही, साथ ही “जनजातीय परिदृश्य” भी व्यापक एवं विविधतापूर्ण है। एक तरफ हमारे यहाँ जनजातियों की संख्या अधिक है, अर्थात् बहुत से जनजातीय समुदाय हैं, तो दूसरी तरफ भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर एक ही जनजाति में भिन्नता दिखाई देती है, जैसे मध्य भारत की गंगा जनजाति एवं दक्षिण भारत के गंगा समुदाय में भिन्नता है। इसके अतिरिक्त उत्तर-पूर्व की जनजातियाँ जैसे खासी, गायर, नागा, जयंतिका इत्यादि मध्य भारत की जनजातियाँ जैसे गोंड, भील, बैगा, भारिया इत्यादि एवं दक्षिण की जनजातियाँ जैसे नाभा, टोड़ा इत्यादि के बीच क्षेत्र के आधार पर विविधता है।

इस प्रकार भारत में जनजातीय समुदाय की विविधता, जहाँ एक ओर उनसे संबंधित अध्ययन को विस्तार देती है, वहाँ दूसरी ओर अलग-अलग समुदायों के लिए विशेष अध्ययनों की आवश्यकता को इंगित करती है।

4.3.2 भील जनजाति

भील जनजाति की प्रमुख उप-जनजातियाँ (Sub group) निम्न प्रकार हैं- गमेटिया, कलारिया, माया भील, डूंगरी गयिसया, भिलाला, मावची, तड़वी, वसावे, भारया इत्यादि।

भारत की दूसरी बड़ी जनजाति भील, पूरा पश्चिमी भारत में फैली हुई है, परंतु इसका मुख्य स्थान दक्षिणी राजस्थान, पश्चिमी मध्य प्रदेश, गुजरात एवं उत्तरी महाराष्ट्र में है। भील जनजाति के सदस्य त्रिपुरा में भी निवास करते हैं, जो कि चाय के बगानों में, अप्रवासी श्रमिकों की तरह काम करते हैं। संस्कृत साहित्य में ‘भील’ शब्द का अर्थ है भेदना या बेढ़ना। त्रिविध याद भील ‘वील’ का शाब्दिक अर्थ है धनुष अथवा धनुष एवं तीर धारण करने वाला व्यक्ति। भील जनजाति के लोग आपस में ‘भीली बोली’ में संवाद करते हैं जो ‘इडो-आयन’ भाषा परिवार की बोली है। यदापि वे दूसरी केंद्रीय बोली एवं भाषा भी बोलते हैं, जैसे राजस्थानी, गुजराती, मराठी, हिंदी आदि।

भील जनजाति की उत्पत्ति से संबंधित विद्वानों में जताया है। टोड़ (1881) के अनुसार भील अरावली पर्वत श्रृंखला के मूल निवासी हैं। यह जनजाति आज भी इसी क्षेत्र में ज्यादा संक्रेमित है। सेलेन एवं हीरालाल (1916) के अनुसार “भील” राजस्थान, गुजरात एवं मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में शासन करते थे (कुलगइड़, बांसवाड़ा, कोटा, सगुरा, रेबाकांता इत्यादि) जिनके स्थान पर राजपूतों ने अपने राज्य स्थापित किया। भील एवं राजपूतों में संगित्व एवं सहयोग के उद्देश्य इतिहास में मिलते हैं। महाराष्ट्र प्रताप को भीलों के सहयोग के सम्बंधित उदाहरण मिलते हैं। इसके बदले राजपूत शासक भी उन्हें सहयोग एवं सम्मानित करते थे। मेवाड़ के राज्य चिन्ह में, एक तरफ भील कबीले के मुख्या (भीलू रागा) एवं दूसरे तरफ महाराष्ट्र प्रताप तथा मध्य में चित्तौड़ के किला को दर्शाया गया है। बहुत से राजपूत राज्यों के, राजतिलक समारोह में
भी, भील महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे, उदयपुर, कृष्णगढ़, राजपीपला इत्यादि राज्यों में राजा के राजतिलक में, भील मुखिया के आंगूठे के रूप से तिलक लगाया जाता था राजपूत शासक जनजातीय कबीलों के मुखिया (गमेटी) का चुनाव करते थे, भीलों के बीच भी राजनैतिक रूप से राजपूत शासकों का महत्वपूर्ण हस्तक्षेप था। इस प्रकार राजपूतों एवं भीलों के प्रगति संबंधों का हस्तक्षेप मिलता है।

भील जनजाति पर हुए जैव-मानव वैज्ञानिक अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि भील सामाजिक छोटे, एवं मध्यम कद के होते हैं, इसके चेहरे का आकार गोल अथवा चपटा होता है तथा नाक चपटी होती है। भील जनजाति को उसके क्षेत्र, नातेदारी, संस्कृति, एवं धर्म के आधार पर एक विशेष सामाजिक समूह माना जाता है। भील में सामान्य तौर पर एक निरंतर (केन्द्रित परिवार) होते हैं। परंतु ये बहुपत्री विवाह वाले परिवार होते हैं। विवाह, ज्यादातर एक विवाही ही होते हैं, परंतु बहुपत्री विवाह भी प्रचलित हैं। विवाह में वधू मूल्य (दापा) का प्रचलन है।

राजपूत एवं भील के गाढ़ संबंध का हस्तक्षेप बनता है। भील जनजाति पर हुए जैव-मानव वैज्ञानिक अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि भील सामाजिक छोटे, एवं मध्यम कद के होते हैं, इसके चेहरे का आकार गोल अथवा चपटा होता है तथा नाक चपटी होती है। भील जनजाति को उसके क्षेत्र, नातेदारी, संस्कृति, एवं धर्म के आधार पर एक विशेष सामाजिक समूह माना जाता है। भील में सामान्य तौर पर एक निरंतर (केन्द्रित परिवार) होते हैं। परंतु ये बहुपत्री विवाह वाले परिवार होते हैं।

भील जनजाति पर हुए जैव-मानव वैज्ञानिक अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि भील सामाजिक छोटे, एवं मध्यम कद के होते हैं, इसके चेहरे का आकार गोल अथवा चपटा होता है तथा नाक चपटी होती है। भील जनजाति को उसके क्षेत्र, नातेदारी, संस्कृति, एवं धर्म के आधार पर एक विशेष सामाजिक समूह माना जाता है। भील में सामान्य तौर पर एक निरंतर (केन्द्रित परिवार) होते हैं। परंतु ये बहुपत्री विवाह वाले परिवार होते हैं।

भील जनजाति पर हुए जैव-मानव वैज्ञानिक अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि भील सामाजिक छोटे, एवं मध्यम कद के होते हैं, इसके चेहरे का आकार गोल अथवा चपटा होता है तथा नाक चपटी होती है। भील जनजाति को उसके क्षेत्र, नातेदारी, संस्कृति, एवं धर्म के आधार पर एक विशेष सामाजिक समूह माना जाता है। भील में सामान्य तौर पर एक निरंतर (केन्द्रित परिवार) होते हैं। परंतु ये बहुपत्री विवाह वाले परिवार होते हैं।

भील जनजाति पर हुए जैव-मानव वैज्ञानिक अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि भील सामाजिक छोटे, एवं मध्यम कद के होते हैं, इसके चेहरे का आकार गोल अथवा चपटा होता है तथा नाक चपटी होती है। भील जनजाति को उसके क्षेत्र, नातेदारी, संस्कृति, एवं धर्म के आधार पर एक विशेष सामाजिक समूह माना जाता है। भील में सामान्य तौर पर एक निरंतर (केन्द्रित परिवार) होते हैं। परंतु ये बहुपत्री विवाह वाले परिवार होते हैं।
4.3.3 गोंड जनजाति

गोंड जनजाति की, उप-जनजातियाँ इस प्रकार हैं- अरख, आरख, अगारिया, असुर, बड़ी मारिया, छोटी मारिया, भटोला, भीमा, भुता, कोहली, भुली, भार, बिसोनहारन, मारिया, दंडवी मारिया, धुरा, धुरवा, डोरला, गायकी, गढ़ा, गावरी, हिल मारिया, कंद्र, कलंग, खाटोला, कोइतार, कोया, खिरवार, खैरार, कूच मारिया, कुचाकी मारिया, मडिया, माना, मानेवार, मोंघरा, मुडिया, मुरिया, नगरौंची, नागानंची, ओझा, राज, सोझारी, झरेका, ठाटिया, ठोटया, डोरोई हैं।

गोंड, जनजाति, भारत की जनजातीय संरचना में प्रमुख स्थान रखती है। गोंड जनजाति प्रवृत्तिय विषय दर्शन की जनजाति है। महत्वाकांक में, मध्य भारत के गढ़ा (जबलपुर) को गोंड शासक की राजधानी के तौर पर उल्लेख मिलता है। गोंड, उत्तर प्रदेश के मिर्ज़पुर के आदिवासी से लेकर आंध्र प्रदेश के तेलगू त्रिकोण तक फैले हुए हैं। अलग-अलग स्थानों पर इनकी अलग-अलग उप जनजातियाँ की बहुतता है। जैसे मणिला के गोंड, बंगाल के मुरिया एवं मारिया, आदिवासी के राजागोंड, बांगल के कोयास इत्यादि।

वंशानुगत आधार पर गोंड कुल एवं वंश परम्परा के आधार पर वर्णित होते हैं। गोंड जनजाति, संविदायक आधार पर एक प्रमुख जनजाति तो है ही, साथ ही यह बहुत बड़े क्षेत्र तक निवासता जनजाति भी है, उत्तर से लेकर दक्षिण भारत तक इस जनजाति का स्तरहृदय है। क्षेत्र के अनुसार इनके सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में भिन्नता भी दिखाई देती है, जैसे- परिवार, विवाह, नातेदारी एवं धार्मिक गतिविधियों में भिन्नता। जैसे क्षेत्र भारत के गोंड, अन्य समुदायों की तरह पुनर्विवाह को अनुमति देते हैं, पर वे देवर- भाभी विवाह (Levirate Marriage) की अनुमति नहीं देते, परंतु उत्तर भारत के गोंड न सिर्फ इसकी अनुमति देते हैं, बल्कि इसको प्राथमिकता देते हैं। सामाजिक व्यवस्था: ये एक विवाही समुदाय रहते हैं, परंतु परिवार अपना अलग परिवार बनाता है, जो प्रायः भाभी विवाह का स्वरूप एक समर्थ परिवार का है, विवाह के पश्चात उन्होंने अपने अलग परिवार बनाता है, जो प्रायः मूल परिवार के आस- पास ही घर बनाकर रहता है।

गोंड, समुदाय की बोली “गोंडी” है, जो प्रवृत्तिय भाषा परिवार की बोली है। ये आपस में गोंडी में वातावरण करते हैं, परंतु वलसम में ये हिंदी एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का भी प्रयोग करते हैं। गोंड जनजाति के परिवार भाषा में, महिलाओं के गहरे संग्राम की ताकद, एवं पुरुषों के सफेद धोती एवं सीगी कुटुंबों बहुत आकर्षक परिवार हैं, परंतु आधुनिकीकरण एवं अन्य प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरूप अन्य समुदायों की तरह इसके बीच भी अन्य परिवार लोकप्रिय हैं।

ये गोंड-शाकाहारी समुदाय है, अर्थात इनके भोजन में मछली, मांस प्रमुख स्थान रखते हैं, अनन्य में चावल एवं ज्वार परिपालन रूप से प्रमुख स्थान रखते हैं, परंतु वलसम में लोक वितरण प्रणाली से मिलने वाले अनन्य तथा अन्य खाद्य सामग्री भी इनके खाद्य सामग्री में शामिल है। जैसे जनजातीय धर्म प्रकृतिवाद पर आधारित है, परंतु गोंड, हिंदू धर्म की धार्मिक गतिविधियों का भी अनुभव करते हैं। आज इनके घरों में शिव, एवं देवी आराधना, सत्संग, गुरुद्वारा जैसी प्रक्रियाएँ भी देखी जा सकती है।
गोंद, जनजाति की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है, जो मुख्यतः कृषि हैं, परंतु इसके अतिरिक्त मजदूरी, छोटे-मोटे व्यवसाय (जैसे किराना दुकान चलाना, ढाबों होटलों में काम करना) एवं नौकरी भी इनकी अर्थव्यवस्था में शामिल है। पशुपालन भी इनकी आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

गोंद जनजाति, में परंपरागत रूप से उनकी पंचायत व्यवस्था होती है, प्रत्येक उप-समुदाय की अपनी परंपरागत पंचायत व्यवस्था होती है, जिसका प्रमुख मुखिया होता है एवं कुछ व्यक्ति उसके सहयोगी होते हैं। इसके अतिरिक्त भारत शासन की पंचायती राज व्यवस्था ने इनको राजनैतिक सहभागता को सुनिश्चित किया है।

गोंद जनजाति की अपनी समुदाय संस्कृति है जिसमें कला, कारीगरी, गोदना, दीवार एवं फसल पर कलाकृतियों का निर्माण, मिठी के बर्तन एवं बांस के बास्केट आदि का निर्माण, बांस यंग्रों का निर्माण, नृत्य एवं लोकगीत एवं संगीत प्रमुख है।

### 4.3.4 संथाल जनजाति

भारत की तीसरी बड़ी जनजाति संथाल है, जो बिहार, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और त्रिपुरा में निवासित है। असम, में भी यह जनजाति निवास करती है, परंतु असम के संथाल अनुसूचित जनजाति नहीं हैं। संथाल स्वयं को हो चुके हैं, जिसका मतलब है मुनुष। संथाल के अन्य नाम भी प्रचलित हैं- जैसे साओवार, खैरवार, साफाहोर, मंडल, मोंझी, परधान एवं सरदार इत्यादि इनके उपनाम हैं।

बिहार एवं झारखंड में संथाल, जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बड़ी जनजाति है। यहां संथाल मोटे तोर पर दो समूहों में विभक्त हैं, प्रथम देसावली संथाल एवं दूसरा खरवार। देसावली संथाल अपने संथाली विचारधारा को मूलप से वीकार करता है जबकि खरवार सुधारवादी पंथ के समर्थक हैं।

झारखंड के अनुसार संथाल का मूल निवास छोटा नागपुर के पठार और दामोदर नदी के आस-पास का क्षेत्र था। सन 1770 के अकाल के बाद ये समुदाय अपने वर्तमान निवास बीरभूम में आए, जो आगे चलकर कुछ जिलों को मिलाकर संथाल परगना के रूप में स्थापित हुआ। वर्तमान में इनकी ज्यादातर संख्या संथाल परगना, धनबाद, बोकारो, कोडमा पूर्वी सिंहभूमी, पश्चिमी सिंहभूम, हजारी बाग, चतरा, धनबाद भागलपुर और पूर्वी सिंहभूम के निवासित हैं।

प्राकृतिक दृष्टि से ‘संथाल’ प्रोटो-स्ट्रॉलॉयड प्रजाति के सदस्य हैं। संथाल 12 पितृवंशी गोट्रों में विभाजित हैं। ये गोट्र इस प्रकार हैं- घुमु, हंसदा, सोरंग, किसकु, बासेर, हमरम, पाके, मेडुआ, मरांडी, चौड़े, पोरया एवं टुडू। प्रत्येक गोट्र का अपना प्रतीक या टोटेम है, जिसको हानि पहुंचना वर्जित है। ये सभी गोट्र बहिष्करणीय गोट्र हैं अर्थात् ये एक ही गोट्र में विवाह नहीं करते, गोट्र से बाहर विवाह करते हैं।
झारखंड एवं बिहार के संथाल सुन्दरविस्थत गाँवों में रहते हैं। अर्थात इनके गाँवों की संख्या एवं विन्यास सुपृष्ठ एवं सूक्र होता है। सामूहिक पूजा स्वल्प मांजीथाना गांव के बीच में रखी होता है। जहां पर इनके देवता बोझा की पूजा होती है। मांजीथाना में ही गांव के मुखिया मांजी का घर होता है। गांव के बाहर की तरफ जोहर धान नामक स्थान होता है जिसमें इनके सर्वोच्च देवता मांजीकु र की पूजा होती है।

संथाल भी अन्य जनजातियों समुदायों की भारतीय प्रकृति के पूजक हैं एवं प्रकृति से गहरा लगाव रखते हैं। इनकी संस्कृति पर्यावरण का संरक्षण एवं सम्बंधित करने वाली संस्कृति है। संथाल जनजाति के प्रमुख ल्याणरों में बड़ा, सुहाई, कर्मी, वंधार, सहृद, एंरोक, मागिसम, हरीधर अतिधिय हैं। संथाली अपने अनुसार समस्त संथाल दो श्रेणियों में बंटा है- प्रथम होर अथवा संथाल और दूसरा दीकू। होर संथाल समुदाय है और दीकू का तात्पर्य है जो संथाल नहीं है। इस प्रकार संथाल समुदाय के लिए वे सभी व्यक्ति जो संथाल समुदाय के नहीं हैं दीकू कहलाते हैं।

पारंपरिक रूप से संथाल जनजाति की अपनी एक सुंदर राजनैतिक, प्रशासनिक एवं व्यक्तिक व्यवस्था होती है। गांव के स्टॉर पर ग्राम पंचायत होती है। जिसका प्रमुख मांजी होता है। गांव के स्टॉर पर प्रशासनिक एवं व्यक्तिक व्यवस्था की देखरेख मांजी करता है। गांव में किसी भी प्रकार की समस्या अपराध के लिए मांजी के मामले में मांजी संबंधित व्यक्ति या परिवार को दण्ड देता है। यह दण्ड सामाजिक, आर्थिक अथवा दोनों प्रकार का हो सकता है। “परामर्श” मांजी को सहायता करता है। यह गांव के स्टॉर पर दूसरा महत्वपूर्ण पद है। इस प्रकार गांव के स्टॉर पर एक तीसरा पद भी है जिसको जोग मांजी कहते हैं।

जोग मांजी का प्रमुख कार्य युवक-युवतियों के विवाह संबंध तय करना एवं विवाह संपन कराना होता है। गांव के स्टॉर पर ही एक अन्य पद कोडेत होता है। गोडेत का प्रमुख कार्य सुचारुओं को एकत्र कर मांजी तक पहुँचना होता है। गांव के स्टॉर से ऊपर का संगठन, 5-8 गांव का संगठन होता है। जिसका प्रमुख देश मांजी कहलाता है। जब कभी दो या दो से अधिक गांवों के बीच विवाद की स्थिति होती है। तब देश मांजी मामले की सुनवाई करता एवं रणनीति देता है।

15 से 20 गांव का संगठन परगना कहलाता है और इसके मुखियों का परमेन सिऴा जाता है। परगना संथाल समुदाय की समुच्च इकाइयों होती है। इसके माध्यम से समस्त गांवों का विवाह की स्थिति होती है। इनके माध्यम से प्रक्षेपित किया जाता है। जिसकी अपनी एक लिपि ओलिचकिलिपी भी है। झारखंड संथाली समुदाय के साथ विवाह एवं अपहरण का अनुसरण किया जाता है। संथाल जनजाति के लोग आपसी वातावरण संथाली भाषा में करते हैं। जिसकी अपनी एक एवं बंगाली भाषा का प्रयोग करते हैं तथा देवनागरी एवं बंगाली लिपि का प्रयोग करते हैं।
बंगाल में संथाल जनजाति का संकेतन ज्यादातर मिदनापुर जिले में है। यहां के संथाल भी आपस में संथाली भाषा का प्रयोग करते हैं तथा दूसरे समुदायों के साथ बंगाली भाषा का प्रयोग करते हैं। लिपि के रूप में देवनागरी, बांग्ला एवं शिवमुखी लिपि का प्रयोग करते हैं। यहां के संथाल अपने शरीर में (हाथ, गर्दन व पैर) गोदा व टैटू का बहुत अधिक प्रयोग करते हैं।

उड़ीसा में संथाल मांझी नाम से जाने जाते हैं एवं इनकी अधिकांश जनसंख्या बालासोर, क्योंदर एवं मयूरगंज जिलों में निवास करती है। यहां संथाली के साथ-साथ उड़ीसा भाषा भी बोलते हैं जो इंडो-आर्यन भाषा है। ये लोग ज्यादातर उड़ीसा लिपि का प्रयोग करते हैं। यहां पर संथाल मुख्यतः कृषि कार्य एवं शिवमुखक तथा उद्योगों में काम करते हैं।

त्रिपुरा में संथाल जनजाति ने अप्रामाणीय बागान श्रमिकों के रूप में 1916 से रहना आरंभ किया, जब वहाँ पर चाय उद्योग की स्थापना हुई। यहां के संथाल, संथाली एवं बंगाली भाषा का प्रयोग करते हैं तथा लिपि के रूप में बांग्ला लिपि का प्रयोग करते हैं। यहां के संथाल समुदाय के ज्यादातर व्यक्ति चाय बागानों में शिवमुख रूप में कार्य करते हैं, इसके अतिरिक्त इंड-लिपि एवं आवास निर्माण कार्यों में भी ये शिवमुख के रूप में कार्य करते हैं।

जनजातीय भारत में संथाल ऐसी थी जो निवास करती है, जिसमें नागपूर पैमाने पर सुधार आंदोलन, कृषि आंदोलन एवं ब्रिटिश प्रशासन के बिन्दु आंदोलन में हिस्सा लिया। खरवार आंदोलन संथाल समुदाय के द्वारा किया जाना वाला एक बड़ा आंदोलन था जो आगे चलकर स्वतंत्रता संग्राम का हिस्सा बना।

4.3.5 थारु जनजाति

थारु जनजाति मुख्यतः उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश बिहार एवं नेपाल के तराई वाले क्षेत्रों में निवास करती है। इसका संकेतन मुख्यतः उत्तराखंड के कुमाउ जोन में है जहां उत्तराखंड की दूसरी बड़ी जनजाति एवं कुमाउ जोन की सबसे बड़ी जनजाति है। उत्तराखंड के उमसिंह नगर, खटीमा, खोटिमा, कुमाओत, गियरू, अंतरागंज जिलों में यह जनजाति निवास करती है। उत्तर प्रदेश के लखीमपुरकीर्ति एवं बहराईच में इसका निवास स्थान है। इसी प्रकार, नेपाल के तराई वाले क्षेत्रों में यह जनजाति निवास करती है। प्रजातियों की ध्रुतिक्रमण से यह जनजाति मंगोलोयड प्रजाति के अंतर्गत आती है। थारु अपनी विपणियों की रास्ते से मानते हैं। इस समुदाय के लोग अपना मूल निवास स्थान थार के महाराणा प्रताप के वंशज मानते हैं।

थारु का शाब्दिक अर्थ होता है "ठहराव" अर्थात प्रवास न करने की प्रवर्ति। इस समुदाय के लोगों का मानना है कि जब सोलहवीं शताब्दी में अकबर एवं महाराणा प्रताप के बीच हल्दी घाटी का युद्ध हुआ तब उस युद्ध में बड़ी संख्या में महाराणा प्रताप के सैनिक शहीद हुए। इन सैनिकों की पत्नियाँ अपने कुछ मातहतों के साथ कुमाउ जोन एवं लखीमपुर कीर्ति में आकर निवास करने लगी। तबसे इन्होंने अपना निवास स्थान नहीं
बदला है। थारू मातृसामक परिवार का समुदाय है। यह समुदाय 26 गोत्र समूहों में विभक्त हैं जिनके प्रमुख गोत्र दानावारिया, नवालपुरिया, मतरहि, कुलपत्त्या, धांकेट, बतार, धीमार, कुचिला, परधाम एवं बोसा है।

समाजिक संस्तरण के आधार पर यह समुदाय तीन समूहों में विभक्त है-  
1. राणा  
2. डगोरा/डगुरा  
3. कबरेयिया/मलबिड़

थारू जनजाति को अपनी कोई विशिष्ट भाषा नहीं है। ये गोत्रवाल में गढ़वाली कुमाऊँ, भोजपुरी, अवधी एवं नेपाली भाषा का प्रयोग करते हैं। लिपि के रूप में देवनागरी लिपि का प्रयोग करते हैं इस समुदाय के पारंपरिक पहाड़ी में धोती कुर्ता एवं लहंगा ओढ़नी प्रमुख है। इस समुदाय के महिलाएँ एवं पुरुष दोनों ही गोदना या टैटू का व्यापक प्रयोग करते हैं। टैटू इसकी वंशावली का भी प्रतीक है, इसके आवास खेतों के निकट बनाए जाते हैं। ये कुछ एवं पनसे दोनों प्रकार के होते हैं। 20 से 30 धरों का एक कुनबा प्रायःएक स्थान पर रहता है। इन आवासों के बीच में अन्वार्यतः एक मंदिर होता है। थारू महिलाएँ अपने आवास की दीवारों पर चित्रकारी करती है। दीवारों पर चित्रकारी के लिए भी यह समुदाय जाना जाता है। थारू जनजाति का प्रमुख भोजन चावल व मछली है। चावल से एक विशेष प्रकार की मिठाई जाड़ भी है जो इनके भोजन का अभिन्न हिस्सा है। थारू संतोष परिवार में विवाह रहते हैं प्रायः तीन पीढियों के सदस्य एक साथ निवास करते हैं। एतेहासिक रूप से थारू आदित्य एवं खाड़ संग्राही समुदाय है। कृषि एवं पशुपालन इसकी अर्थव्यवस्था का आधार है। इस समुदाय में विवाह में बच्चा मूल्य का प्रचलन है। जो प्रायः नगद के रूप में दिया जाता है। इस समुदाय में विवाह विच्छेद एवं पुनिववाह को स्वीकृति प्राप्त है।

बहपित विवाह खासियत पर सहोदर बहपित विवाह भी इनके बीच प्रचलित है, ये लोग जादू टोपा में विवाह करते हैं। लेकिन विवाह के परिणामस्वरूप इस विवाह में कमी आयी है थारू जनजाति के लोग हिंदू धर्म के लगभग सभी लोग बैठते हैं। परंतु इनका प्रमुख त्वरहर वजह है कि जनजाति अपने परंपरागत विवाह संस्कार और परंपरागत परिवार का अर्थ बदल चुका है। इस समुदाय में दीपावली का चूमा वसंत का प्रमुख योगदान है। इस समुदाय में दीपावली को शोक पव के पारंपरिक रूप में मनाया जाता है। त्वरहर बैठते हैं। थारू जनजाति मातृसामक परिवार एवं दो परांपरिक पंडित के नाम से जाना जाता है। इस समुदाय में दीपावली का शोक पव के पारंपरिक रूप में मनाया जाता है। वहो िवाह वजहर के नाम से जाना जाता है। विवाह जनजाति मातृसामक परिवार एवं दो परांपरिक पंडित के नाम से जाना जाता है। इस समुदाय में दीपावली का चूमा वसंत का प्रमुख योगदान है। इस समुदाय में दीपावली का चूमा वसंत का प्रमुख योगदान है। इस समुदाय में दीपावली का चूमा वसंत का प्रमुख योगदान है।
4.3.6 खासी जनजाति

खासी शाखा आस्ट्रो-एशियाटिक भाषा बोलने वाले मॉन-खामेर निकोबार समूह को इंगित करता है।

जो दक्षिण पूर्व एशिया से उत्तर पूर्व भारत की पहाड़ीय में आकर रहने लगे। खासी प्राप्त: मेघालय की खासी हिल एवं जयौतिया हिल में रहने वाले सभी जनजातियों एवं उप-जनजातियों के लिए प्रयुक्त होता है। खासी वर्तमान में मेघालय के खासी हिल, जयौतिया हिल एवं बाहुबल के उत्तरी ठंडान तथा सुपरिस के अग-पास निवास करते हैं। अपने व्यापक अर्थ में खासी, जयौतिया, पनर, लिंग्याम, भोई, बार तथा खेनराम आदि सभी समुदायों के लिए भी प्रयुक्त होता है। ये समुदाय खासी बोली बोलते एवं रोमन लिपि का प्रयोग करते हैं। कुछ खासी हिंदी, असमी एवं बংगाली बोलते हैं तथा देवनागरी लिपि का प्रयोग करते हैं, यद्यपि खासी जनजाति का अपना परंपरागत ध्वनि है एवं ज्यादातर लोग इसी ध्वनि का अनुसरण करते हैं। परंतु कुछ लोग इंग्लिश, क्रिष्णव, इलाम एवं जैन तथा बौद्ध ध्वनि के भी अनुयायी है। ये खासी विवाह समारोह, बाजार एवं यौहार के माध्यम से दूसरे समुदायों से भी घनिष्ठता एवं जुड़वांग रखते हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात राष्ट्रवाद की धारा के परिणामस्वरूप इनके बीच जनजातीय ध्वनि एवं जनजातीय पहचान के लिए बहुत से आंदोलन भी हुए। किल्ले में रहने वाले खासी आपस में खासी बोली तथा दूसरे से बंगाली भाषा में बात करते हैं। परंपरागत रूप से ये लोग स्थानांतरित कृषि करते रहते हैं, परंतु वर्तमान में ये स्थाई कृषि एवं सांस्कृतिक नौकरी आदि करते हैं। इस समुदाय के लोग धवनी मध्यरात्रि बनाते हैं एवं बड़ी मात्रा में इसका उपयोग भी करते हैं, इनके भोजन में चावल, मांस मछली, जड़ एवं खांड-मूल शामिल है। खासी जनजाति के प्रमुख उप-समुदाय भोई, खेनराम, लिंग्याम एवं बार इत्यादि हैं। इनमें भी सम्पूर्ण विवाह तथा उपसमुदाय बाले दो उपसमुदाय हैं। खेनराम एवं लिंग्याम। यह जनजाति भी मातृभूमि एवं धार्मिक जनजाति है। यह बहुत से मातृभूमि गोत्र समूहों में विभक्त हैं, प्रजातियाँ दृष्टिकोण से ये लोग आस्ट्रो- एशियाटिक प्रजाति के अंतर्गत आते हैं। इनके मूल भोजन में प्राय: सभी प्रकार के मांस, चावल एवं फल-बीज शामिल है। खासी जनजाति के मुख्य उप-समुदाय भोई, खेनराम, लिंग्याम एवं बार इत्यादि है। इनमें भी सम्पूर्ण जनजाति दो उपसमुदाय हैं। यह जनजाति भी मातृभूमि एवं मातृसामक जनजाति है। यह बहुत से मातृभूमि गोत्र समूहों में विभक्त हैं, प्रजातियाँ दृष्टिकोण से ये लोग आस्ट्रो- एशियाटिक प्रजाति के अंतर्गत आते हैं। इनके मूल भोजन में प्राय: सभी प्रकार के मांस, चावल एवं फल-बीज शामिल है। यह गोत्र वाहितवाही समुदाय है, अर्थात एक ही गोत्र में विवाह वर्जित है, क्योंकि ये समुदाय मातृसामक भी है इसलिए परिवार की मुखिया महिला होती है, बच्चे माता एवं पिता दोनों के गोत्र का अनुसरण करते हैं।

खासी जनजाति विविध की रोश बच्ची हुई मातृभूमि जातियों में से एक है। यह भारत के समाजवाद समस्या के साक्षात्कारक समस्या में से एक है, जिनकी अर्थव्यवस्था झोप व्यवसाय, उद्योग तथा नगरीकरण में परिवर्तित हो गयी है। वैकल्पिक रूप से ये भारत के बहुत से जनजातीय समुदायों से अधिक उद्योग स्तरीय हैं तथा देश की उच्च सेवाओं में इनका विशेष प्रतिनिधित्व है। असम के संयुक्त खासी तथा जैनिका पहाड़ी जिले जो खासी जनों के पारंपरिक आवास है, अब नवजात मेघालय प्रदेश के अंतर्गत है जिसे सन् 1972 में पूर्ण प्रदीप घोषित कर दिया गया है। अब मेघालय में बहुसंख्या खासी, गारो तथा अन्य अल्पसंख्यक जनजातियों की है, जिसमें खासीजनों की संख्या अधिक है तथा प्रदेश के राजनीतिक अधिकार भी इनके पास
सामाजिक रूप में खासी चार समूहों में विभक्त हैं यथा- खाइनियन खासी, जैनिया पहाड़ी के पठार, जिले की पथिम तथा दक्षिणी हिलों पर स्थित वारजन तथा नीचे सतह पर स्थित बोड़ जना। इन चार समूहों के अतिरिक्त दो-अथ अन्य मूल्यों हाल में ही खासीजों ने मान्यता प्रदान की है वह है जैनिया पर्वत के हंदेम तथा खासी पर्वत के लंगम। चूँकि उपयुक्त खासियों के सभी समूहों के भूत्काल में अन्तःविवाह की क्षेत्रीय सीमाओं का अनुकरण किया है, अतः इन्हें खासी उप जनजातियों माना जा सकता है।

संयुक्त खासी तथा जैनिया पहाड़ी जिला जो खासीजों का अपना आवास क्षेत्र है, इसका क्षेत्रफल 5,541 वर्ग मील है। उत्तर में यह ब्रह्मपुत्र घाटी से (असम के कामरूप तथा नौगांव जिले) पूर्व में संयुक्त मितकर तथा उत्तरी कदर पहाड़ी जिले से, दक्षिण में सिलहट (अब बांग्लादेश का एक भाग) व दक्षिणमें तथा पश्चिम में गारो पहाड़ी से यह मिः हुआ है। खासी भूमि चार पठारों से निम्नित है जो सिलहट के निचले मैदानों से 4,000 फीट ऊँची है तथा जहाँ विश्व की सबसे भारी वर्षा होती है। उत्तरी भाग में इससे अधिक ऊँची पठार माओफलांग है, जो समुद्र सतर से 6,000 फीट की ऊँचाई पर है जहाँ कुछ गाँव शेष बचे हुए हैं। यह जिले का उच्चतम क्षेत्र है तथा प्रेसी राजधानी शिलांग भी इसी भाग में है।

इस क्षेत्र की विशेषता इसका मनोहारी प्राकृतिक सौंदर्य है। असम के कुछ संयुक्त फलोदारां जहाँ संयुक्त, अनान्यता तथा केले की सर्वोत्तम खेती की जाती है, इसी क्षेत्र की देन है। वास्तविकता का सर्वाधिक आकर्षक रूप इसकी अग्रिमन नदियों, छोटी-छोटी पहाड़ी धाराओं, कल-कल निमाद करते हुए इससे जनजातियों तथा चित्रात्मक परिवेश में है। समस्त क्षेत्र अत्यंत मनोरम है तथा शिलांग एक अत्यावशिष्ट प्राचीन स्वास्थ्य केंद्र के रूप में विकसित हो गया है। यह पहाड़ी क्षेत्र साल, ओक, चीड़ तथा अन्य वनस्पतियों से आच्छादित है। उत्तरी तथा पथिम खासियों के निचले स्थानों पर बौंच उपन तौर पर है। पशुओं में विवाह रूप वा शूकर, हाथी, बनद्र, चीते, हिरन, जंगली कुत्ता आदि पाए जाते हैं।

प्रावश्यकता तौर पर खासी चार ओर बिखरी हिन्द मंगोली जनजातियों से सर्वथा भिन्न है। अधिकांश मतों के अनुसार ये भारतीय मोन जाति की शाखा है जो संयुक्त 4,000 फीट से निकट साहित्य का प्रक्र ट करते हैं। भाषागत रूप में ये “मोनखमेर” परिवार के अंतर्गत आते हैं ज्यांके जिस भाषा का ये प्रयोग करते हैं वह अस्ट्रीक्क परिवार के मोनखमेर शाखा में बोली जाती है। सामान्यतया खासी गाँव पर्वत शिखरों के नीचे बसे हुए हैं, अधिकांशतः सतह से निचले स्तर पर जो पहाड़ी नागा तथा कुकी जनजातियों से सर्वथा भिन्न है। ज्यांके वे पर्वतों के उच्चतम क्षेत्रों में ही रहना पसंद करते हैं। उत्तराधिकारी हेतु ये अपने सीहों से आधिक जीवन के लिए बुझे रहते हैं। इसकी खासी को उपजाति में ही विवाह करना पड़ता है। इसके उपादन में यह अधिकांश अंतर्विश्वासी नहीं होती है। खासी जनजाति की समस्याएं देश के अन्य पहाड़ी लोगो से भिन्न नहीं हैं इनकी अपनी आधिक समस्याओं के अतिरिक्त कोई अन्य समस्या नहीं है।
4.3.7 गारो जनजाति

गारो जनजाति मुख्यतः मेघालय, असम, नागालैण्ड, त्रिपुरा एवं पश्चिम, बंगाल में निवास करती है, बहुत कम संख्या में मिजोरम में भी इस जनजाति को देखा जा सकता है। मेघालय गारो हिंदा से लेकर के खासी हिंदा तक इसके आवास देखा जा सकता है। असम में ब्रह्मपुत्र के आस-पास अंगलो, गोलपारा एवं कामरूप जिलों में इस जनजाति का निवास है, नागालैण्ड के कोहिमा एवं चमकोहिमा क्षेत्र में गारो जनजाति निवासरत है। त्रिपुरा के दक्षिणी क्षेत्र एवं पश्चिम बंगाल के जलपाइगुड़ी तथा खुचबिहार जिले यह जनजाति निवासरत है।

गारो जनजाति की मात्र भाषा गारो है, जो तिब्बत-वर्मन भाषा परिवार के बोडो समूह की भाषा है। लिपि के तौर पर ये लोग रोमन लिपि का प्रयोग करते हैं, गारो के अतिरिक्त असमी, बंगाली एवं हिंदी भाषा का भी इसके द्वारा प्रयोग किया जाता है। प्रजातीय दृष्टिकोण से यह जनजाति मंगोलाइड प्रजाति के अंतर्गत आती है। ये लोग कड़े कठ लगे लोग हैं जिनका माथा चौड़ा, चेहरा गोल, आंख तथा नाक छोटे होते हैं। इसके अतिरिक्त बहुत सी घरेलू एवं जंगली सजीयां कंद मूल इत्यादि का भी प्रयोग किया जाता है, इसके अतिरिक्त गाय एवं सुआ का मांस भी इनके भोजन का मुख्य हिस्सा है। गारो जनजाति के बहुत से उप-समुदायों में विभक्त या जातीय क्षेत्र की तकनीक से एकत्व रखते हैं। इन समुदायों में पिता-पत्नी के विवाह का प्रकार रहता है। गारो जनजाति मातृवंशीय एवं मातृसामक जनजाति है।

मुख्यतः गारो जनजाति पांच मातृवंशीय समूहों में विभक्त है, जिनके नाम इस प्रकार हैं- संगमा, मराक, मोमिन, अरंक और सीरा गोट के आधार पर जनजाति विभिन्न जाति बनते हैं, अर्थात इस समूह में एक ही गोट में विवाह वर्जित है। गारो जनजाति के प्रमुख गोट मंडा, रंगमुधू, रंगी, अर्जीयो, नेगमाईयां, अंगकोम, चियोन, दीयो, दंगो, डारिंग, दांवा, चककोम, रेमा, रहसोम, भोरोम, रंगसा एवं बोलवारी इत्यादि।

गारो जनजाति की गोट संरचना में सबसे महत्वपूर्ण इकाई “महारी” है। जो किसी समूह के मानोम के अंतर्गत विवाह संबंधों को निर्धारित करती है। महारी किसी परिवार के मूखिया के निर्धारण एवं परिवार में पति-पत्नी के दावियों के नियम एवं नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस जनजाति में प्रायः एक विवाह का प्रचलन है परंतु कभी-कभी भुखुलता विवाह भी देखा जा सकता है, इस प्रकार के विवाह प्रथम पति एवं महारी की स्वीकृति से होते हैं। महारी की स्वीकृति से विवाह-विच्छेद एवं पुनर्विवाह को भी स्वीकृति है। विवाह-विच्छेद के बाद बच्चों के लालन-पोषण की जिम्मेदारी मां की होती है, इस समुदाय में विधवा एवं विधु पुनर्विवाह को स्वीकारिता है।

गारो जनजाति में परिवार का स्वरूप एकल परिवार का है। इसके अतिरिक्त भिन्न भिन्न परिवार पाए जाते हैं। क्योंकि गारो जनजाति मातृवंशीय एवं मातृसामक है इसलिए पूरी संपत्ति परिवार की भाषा के
अधिकार में होती है। एवं महारी के द्वारा यह संपत्ति मां से पुत्री को हस्तांतरित होती है सामान्यतः सबसे छोटी पुत्री को संपत्ति का अधिकार मिलता है। इस प्रकार संपत्ति का स्वामित्व महिला के पास है एवं पुरुष इसकी सुरक्षा, नियंत्रण एवं प्रबंधन करता है।

"एक्सिंग" पहाड़ी क्षेत्रों में एक महारी के स्वामित्व के अंतर्गत क्षेत्र की समस्त भूमि को महारी के न्याय अधिकार में मानता है। एक्सिंग का नियंत्रण एवं प्रबंधन समुदाय का मुख्या नोकमा करता है, जो गांव वालों से गहरा समन्वय रखता है। एक्सिंग के अंतर्गत भूमि को छोटे-छोटे हिस्सों में बाटकर गांव के प्रत्येक परिवार को कृषि हेतु दिया जाता है। गायरो परिवार में किसी बच्चे के जन्म के पूर्व बहुत से जनजातियों एवं पशुओं की बच्च दी जाती है। गांव का पुजारी जिसके कमाल कहा जाता है, उसके द्वारा यह कार्य किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्र में पहले स्थानांतरित कृषि की जाति थी परंतु अब स्थायी कृषि की जा रही है। इस जनजाति के अधिकांश लोग धाम, मक्का, जूट, सरसों इत्यादि की खेती करते हैं। कुछ लोग सरकारी नौकरी और कुछ चाय के बगानों में नौकरी करते हैं। इस जनजाति का परंपरागत धर्म सांससरेक है, जो किसी आलोचक सत्ता में विश्वास को स्वीकार करता है। इनके ज्ञान कार्यकारी गतिविधियों आत्माओं को प्रसन्न करने के लिए होती है, ताकि इनके द्वारा परिवार या समुदाय को नुकसान न पहचाना जाए। क्रिश्न धर्म अपने वाले गायरो परिवार के जीवन में व्यापक धार्मिक परिवर्तन हुआ है। यहाँ में लोग भी गोत्र एवं पृथ्वीगत कानून जैसे आधारभूत सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था का अनुसरण करते हैं। पहाड़ी क्षेत्र के गायरो मैदानी क्षेत्र के अन्य जनजातियों तथा विदेशी सांस्कृतिक बातों से अधिक संबंध रखते हैं एवं यहां अपने द्वारा बनाए गए बांस की खचाई अग्रेण, मिर्च, अदरक, टोकरी इत्यादि बेचते हैं। कपड़े की बुनाई इनका परंपरागत कार्य था जिसे हेडलूम ने साधन किया है। इस समुदाय के परंपरागत व्यंग प्राचीन नोकमा तित में समाप्त : है।

इस जनजाति का मूल सूहाने एक खी को माना जाता है। इसके वंश परंपरा पूण्यत: पत्नी पक्ष पर केंद्रित रहती है, अनेकानेक आयामों में यह जनजाति समूह खी प्रथाम है। माँ की संपत्ति की उद्धरणार्थ सामान्यतः छोटी बेटी होती है। इसके पति को "नोक्रोम" कहा जाता है। नोक्रोम अपनी पत्नी और सास की संपत्ति का उपभोग तो कर सकता है, किंतु किसी अन्य को हस्तांतरित करने का उसे कोई अधिकार नहीं है। नोक्रोम का चुनाव अत्यधिक सावधानी से किया जाता है। माँ सबसे छोटी बेटी के पति के चयन हेतु मामा के बेटे को ऋण अधिकार देते हैं। इसके पीछे कारण संपत्ति को परिवार अथवा नातेदार से बाहर जाने से रोकना होता है। इनकी सामाजिक प्रस्तिति अत्यन्त सुदृढ़ है तथा आधिक अर्थों सहित सामाजिक प्रस्तिति का श्रेणि विदु है।
4.3.8 जैतिया जनजाति

जैतिया जनजाति को सिंटेंग अथवा पनार जनजाति के नाम से भी जाना जाता है। वास्तव में यह जनजाति खासी जनजाति की ही एक उप-जनजाति है, जो मेघालय के जैतिया हिल में निवास करती है। इस समुदाय के लोगों के अनुसार उत्तर-पूर्व (मेघालय) में जैतिया का अपना साम्राज्य था जिसे सिंटेंग जनजाति के नाम से जाना जाता था स्वतंत्रता के पश्चात् यही साम्राज्य उत्तर-पूर्व भारत के नाम से जाना जाता है।

इस समुदाय के अन्य भाषा जैतिया है। इसके अतिरिक्त ये लोग खासी, असमी, बंगला एवं हिंदी भी बोलते हैं। खासी जनजाति की ही तरह यह जनजाति भी प्रोटो-आट्रोलायड मोनखेम जनजाति की जनजाति है। यह भी मातृवंशीय एवं मातृसाममक समुदाय है। इस समुदाय में बचचे अपनी माता के नाम से अपना उपनाम प्राप्त करते हैं। परिवार की संपत्ति माता से पुत्र को हृदयारत होती है। यह समुदाय भी गोज वाहिकावाही समुदाय है अर्थात् अपने गोत्र में विवाह बनित है।

इस समुदाय के अधिकांश परिवार अपने परंपरागत धर्म सिंटेंग के अनुयायी हैं, परंतु कुछ लोगों ने चर्चित्यन धर्म भी अपनाया है। इनके भोजन में चावल, मांस-मछली इत्यादि प्रमुख है। ये लोग भी चावल की शराब बनाते हैं, जिसका प्राप्ति धारण करते हैं। इस समुदाय का परधान भी खासी का ही ब्रत है, पुरुष जिंकों एवं धोती पहनते हैं जो महिलाएं कई कपड़ों को लपेटकर साड़ी जैसा पहनाना पहनती हैं, लघुपात्र एवं उत्सव इत्यादि में ये लोग चौथी या सोने का मुकुट भी धारण करते हैं। इस प्रकार ये अपनी पहचान को महान सिंटेंग साम्राज्य से जोड़ते हैं।

4.3.9 नागा जनजाति

नागा तर्क स्थानीय शब्द नोक, नोका एवं नागा से संबंधित है, नागा भाषाओं (कोन्याक, एंओ एवं अन्य) के अनुसार इन शब्दों का तापय है- लोक व्यक्ति या लोकजन है।

असमी साहित्य में भी नागा शब्द पर भी पर्याय वर्णन मिलता है, असमी आज भी इन्हें नागा कहते हैं। जो संस्कृत शब्द लोकों से संबंधित है। ज्यादातर साहित्य नागा को नोक अथवा जनसमुदाय से संबंधित मानते हैं। कुछ तिब्बत-वर्मन भाषाओं जैसे गारो में नोक एक मूल शब्द है और इससे कई महत्वपूर्ण शब्द नोकतार, नोकवा, वानोक इत्यादि बने हैं ये शब्द प्रायः अरुणाचल प्रदेश के तिरंगों जिले में नागाओं के लिए प्रयुक्त होते हैं।

हिंदी एवं बंगला में नागा का तापय व्यक्ति अथवा आवरणरिहत है, जिसका तापय मौलिकता से है। वास्तव में नागा शब्द नागालैण्ड में निवासरत बहुत से जनजातीय समुदायों के एक समूह के लिए प्रयुक्त होता है। अर्थात् नागा एक जनजाति नहीं बल्कि बहुत से समुदायों का समूह है।
दूर किश्य नदे
शालय,
महामा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
एम.ए. समाजशास्त्र

ये समुदाय मानते हैं कि ये पहाड़ों की अलग-अलग दिशाओं से आकर अपने वर्तमान निवास अर्थात नागालैण्ड में हारे लगे। ये मानते हैं कि चीन एवं शरत के बीच व्यापारियों द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली उपरी वर्षा एवं असम के बीच के रस्तों से इनके पूर्व नागालैण्ड आए हैं।

उत्तर-पूर्व के बाल राज्यों- असम, अरुणाचल प्रदेश, नागालैण्ड एवं मणिपुर में नागा समुदाय निवास करते हैं, प्रजातियों आधार पर ये मोंगोलाइड प्रजाति के अंतर्गत आते हैं, नागा समुदायों द्वारा बोली जाने वाली “नागा बोली” तिब्बत-वर्मन भाषा परिवार की बोली है।

असम में तीन नागा जनजातिया जेम, काबोई एवं सेमा निवासरत है, जेम उत्तरी कठार हिल, काबोई कठार जिले में एवं सेमा डिबरुगाड़ में निवास करते हैं।

मणिपुर में सात प्रमुख नागा समुदाय निवास करते हैं ये समुदाय इस प्रकार हैं- तंगखुल, काबोई एवं पुमेई, माओ, कॉवा, अनाल, मराम एवं मोसांग।

नागालैण्ड में सबसे अधिक 16 नागा जनजातिया निवास करते हैं। इनके नाम निम्न प्रकार हैं- आओ, अंगामी, चारोंजुंग, चाँग, चिर, खेननगन, कोलाक, लोथा, मकवार, पूम, तेटा, संगटाय, सेमा, टेिखर, बिंमचूंगरे एवं जेलियांग।

राजनैतिक एवं प्रशासनिक क्षेत्रों के आधार पर नागालैण्ड के जिमोई एवं लिंगमायई जेमी के नाम से जाने जाते हैं तथा मणिपुर के रोमाई के नाम से जाने जाते हैं। मणिपुर के ही जेमई एवं लिंगमई को काशा कहा जाता है जबकि असम में इन्हें ही काबोई कहा जाता है। यह रोमाई एवं जेमई के वर्ण एवं जंग जेमई जाने जाते हैं。

“जेलियांगंवंग” तीन नागा जनजातियों का संक्षिप्त नाम है। ये जनजातियां हैं जेमई, निम्नमोई एवं रोमेई। ये तीनों समुदाय अपनी उपि एक समान पूर्वों से मानते हैं।

जेलियांग रोम की अवधारणा 1930 में असित्व में आई तब से स्वतंत्रता प्राप्ति तक तीन समुदायों के लोग नागालैण्ड, मणिपुर एवं असम में तीन जेलियांग रोम क्षेत्रों के निर्माण की मांग करते रहे हैं।

नागा समुदायों में बन एवं भूमि इनकी अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है। स्थानांतरित कृषि एवं सीडीदार खेतों में कृषि इनकी प्रमुख स्वरूप है। धार इनकी मुख्य फसल है, इसके अतिरिक्त आलू, मकका, सेब, तिलहन, मिरची, गना, अनानाश, संतरा, पिटी, अमृतद इत्यादि की भी फसल होती है। ग्रामीण क्षेत्रों के नागा आखेत एवं वनों से कुछ वस्तुएं जैसे शहद, जंगली फल, जंगली सजिया एवं ईधन इत्यादि एकत्रित करने का काम करते हैं। नागा जनजातियों परिवंत शासन द्वारा सामाजिक नियंत्रण की व्यवस्था की जाती है। प्रत्येक नागा समुदाय इन समुदायों की महिलाओं द्वारा बुने जाने वाले विशाल शाल के लिए भी जाना जाता है। जो अब द्वारा सामाजिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है नागा कुशल कारीगर हैं जो रंगीन वस्तुओं आभूषण एवं आवासों का निर्माण करते हैं। लकड़ी में कारीगर टेटू बनाने एवं वांस तथा केन के बासिकट बनाने में ये लोग कुशल हैं। इन समुदायों में अविवाहित
युवक एवं युवतियों के लिए युवागृह का महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि अधिकांश नागा समुदाय अपने परंपरागत जनजातीय धर्म के अनुयायी हैं, परंपरा कुछ लोगों ने क्रिशिचयन, वैणध, हैप्रा का धर्म अपनाए हैं।

नागालैंड में पाई जाने वाली नागा जनजाति अंतर्राष्ट्रीय विवाद के अनुयायी हैं। इनमें कोन्याक तथा अंगामी नागा प्रमुख हैं। अधिकांश नागा समुदाय आपसी लड़ाईयों में उलझे रहते हैं। परंपरा इनके जनजातीय संगठन बने हुए है। सामान्यतः आदिराजीनी का अर्थ समूह पर सीमित सत्ता से लिया जाता है। आदिराजीनी मनुष्य के व्यवहार का व्यवस्थापन है। यह नागालैंड की जनजातियों के अलग-अलग खंडों में लगभग सभी प्रकार के राजनीतिक संगठन पाए हैं। नागा खेल अथवा टेकू के द्वारा संचालित होते हैं। खेल या टेकू वे समूह है। जो बहिष्कारियों को दूर करते हैं, अर्थात् एक बड़ा बंश या कुल जिसका एक पूर्वज होता है। यह किसी बुझूं के नियंत्रण में रहकर कार्य करते हैं।

4.3.10 सारांश
प्रस्तुत इकाइयों में हमने भारत की जनजातियों के संबंधित जानकारी प्राप्त की है। हमने मध्य भारत की जनजातियों भील एवं गोड़ की सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थान का जाना तथा उत्तरी क्षेत्र की संथाल एवं ठाकुर जनजाति की संस्थान को समझने का प्रयास किया है। इसी क्रम में उत्तर-पूर्व की खासी, गारो, जयंतिका एवं नागा जनजाति का जानने का प्रयास किया गया है।

4.3.11 बोध प्रश्न
लघु उत्तरीय प्रश्न
1. मध्य भारत क्षेत्र की प्रमुख जनजातियों के नाम लिखिए।
2. भील जनजाति के उप जनजातियों के नाम बताइए।
3. गोड़ जनजाति पर एक संख्या टिप्पणी लिखिए।
4. ओल- चिकी लिपि पर टिप्पणी कीजिए।
5. उत्तर- पूर्व क्षेत्र की किसी एक जनजाति पर विस्तार से वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
1. संथाल जनजाति में माझी की भूमिका का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. ठाकुर जनजाति की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
3. मातृवंशीय एवं मातृसामक समुदाय के रूप में खासी जनजाति का वर्णन कीजिए।
4. गारो जनजाति में ‘महारी’ नामक संगठन की भूमिका स्पष्ट कीजिए।
5. जयंतिका जनजाति का वर्णन कीजिए।
6. नागा जनजाति के संदर्भ में ‘जेिलयांगवग’ का वर्णन कीजिए।
4.3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

2. दुबे, एस.सी. (1960). मानव और संस्कृति. विश्वविद्यालय, नई दिल्ली: आंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय, नई दिल्ली: राजकीय प्रकाशन.
3. एलिसन, वी.रेंजर. (1944). द शेड्यूल इन्डिया: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
7. राजने, एन.एच. (1903). संस्कृति ऑफ इंडिया रिपोर्ट: सरकारी ऑफ इंडिया प्रेस.
इकाई 4 जनजातीय समस्याएं एवं योजनाएं

इकाई की रूपरेखा
4.4.0 उदेश्य
4.4.1 प्रस्तावना
4.4.2 जनजातीय समस्याएं
4.4.3 क्रयप्राप्तता
4.4.4 भूमि हस्तांतरण
4.4.5 अस्थाई कृषि
4.4.6 निर्धनता
4.4.7 मदीरापान
4.4.8 आवास एवं स्वच्छता
4.4.9 शिक्षा से संबंधित समस्या
4.4.10 औपचारिक शिक्षा में रूचि की कमी
4.4.11 संचार
4.4.12 भूखमरी एवं कुपोषण
4.4.13 बिरोजगारी एवं अधिकार
4.4.14 मानव तकनीकी
4.4.15 स्वास्थ्य एवं स्वच्छता
4.4.16 स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जनजातीय विकास
4.4.17 विकास नीतियां
4.4.18 सारांश
4.4.19 बोध प्रश्न
4.4.20 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

- भारत की जनजातियों के संदर्भ में जनजातीय समस्याओं को जान सकेंगे।
- निर्धारण एवं ऋणप्राप्तता जैसी समस्याओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- जनजातीय समुदाय के बीच शिक्षा से संबंधित समस्या के कारणों का समुचित परीक्षण कर सकेंगे।
- परिवर्तन के परिणाम स्वरूप अस्तित्व में आई कुछ नई समस्याओं से भी परिचित हो सकेंगे।
- जनजातीय समस्याओं के समाधान हेतु जनजातीय विकास से संबंधित योजनाओं का भी समुचित परीक्षण कर सकेंगे।

4.4.1 प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र के समाजीय विकास हेतु यह आवश्यक है कि उस राष्ट्र के सभी वर्ग, समुदाय आदि समस्या पर दृष्टि योगदान दे सकें। भारत के संदर्भ में जब हम विकास की बात करते हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि देश के सभी वर्गों एवं समुदायों के परीक्षण में विकास को समेकित रूप से समझने का प्रयास करें।

विभिन्न काल खण्डों में किए गए विकास कार्यों को हम कुछ काल खण्डों में विभाजित कर सकते हैं जैसे- ब्रिटिश काल में विकास कार्य, स्वतंत्रता के पश्चात विकास कार्य एवं 1990 के दशक में भौतिक प्रक्रियाओं के आने से बाद विकास कार्य भारत में जनजातीय विकास की दृष्टि से यदि हम इन प्रयासों को देख तो हम यह पाते हैं कि यह समुदाय गैर जनजातीय समुदाय से दूर दराज के क्षेत्रों में निवास करते रहे हैं।

इसलिए ब्रिटिश काल में ये समुदाय एकांकी समुदाय के रूप में देखे गए। परंतु आगे चलकर ब्रिटिश शासन द्वारा इन जनजातीय क्षेत्रों में अप्रभृत्रक रूप से देखते रहा अवस्था में यह दो संपूर्ण भिन्न संस्कृतियों के बीच टकराव की स्थिति थी जहाँ एक तरफ जनजातीय संस्कृति प्राकृतिक संसाधनों, खास तौर पर वनों के संरक्षण एवं सरकार करने वाली थी एवं उनकी समापूर्ण सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक गतिविधियां इन्हीं प्राकृतिक संसाधनों के आस-पास के हिंदु और ब्रिटिश अर्थात पहली पहल उपभोगतावादी संस्कृति थी।

प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम दोहन एवं उपयोग इस संस्कृति के लिए विकास के मार्गों में भी अर्थात यह संस्कृति भौतिक उपभोगतावाद की समावहन एवं संरक्षण थी ऐसे में प्राकृतिक संसाधनों (मुख्यतः वनों) का अधिकतम दोहन एवं उपयोग ब्रिटिश शासन का मुख्य उद्देश्य बन गया। जिसके परिणाम स्वरूप पहली बार प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित अनेक नियम कानून एवं नीतियों का निर्धारण किया गया।

इसी क्रम में भारतीय वन नीति (1872) एवं वन से संबंधित नियम एवं कानून बनाए एवं लागू किए गए। इनका भी नहीं वनों का विभिन्न श्रेणियों में विभाजन भी किया गया। जैसे आरक्षित वन, संरक्षित वन, राजस्व वन एवं सामूहिक वन। इन नियमों, नीतियों एवं वर्गीकरण के परिणाम स्वरूप अभी जो जनजातीय
समुदाय वनों को अपनी संपत्ति एवं स्वं को उनका अभिन हिस्सा समझते थे वे इनके उपयोग से वंचित हुए। संबंधित साहित्य जैसे-ब्रिटिशशासक के गोजियर, रिपोर्ट्स एवं अन्य दस्तावेजों का आधयतन करें तो हम यह पाते हैं कि अब जनजातियों द्वारा वनों के उपयोग पर उन्हें दंडित भी किया जाने लगा। यह दंड शायदः आर्थिक प्रकृति का होता था। ऐसे में एक जनजातीय व्यक्ति के लिए यह समझ पाना मुश्किल था कि अपने संसाधनों के उपयोग हेतु उसे दंडित किया जाना न्यायोचित कैसे है? कई बार इस दंड का स्वरूप एवं प्रकृति ऐसी होती थी जो संबंधित व्यक्ति या परिवार की आजीविका को नाकारात्मक रूप से प्रभावित करती थी उदाहरण के तौर पर प्रतिबंधित वनों में किसी आदिवासी की बकरी को प्रवेश पर कई बार उस बकरी की कीमत से अधिक उसे जुर्माना भरना होता था। परिणामस्वरूप जनजातीय समुदाय में ब्रिटिश शासन के प्रति व्यक्त असंतोष एवं तनाव व्यक्त हो गए और जनजातीय समुदायों का ब्रिटिश शासन के प्रति यह व्यक्त असंतोष एवं तनाव ब्रिटिश शासन के विरूद्ध होने वाले आंदोलन का हिस्सा बनने लगा, ऐसे में दूर दराज एवं अलग-अलग (Isolation) जीवन जीने वालों इन समुदायों के प्रति ब्रिटिश शासन का नजर बदला। अब मिशनरी के माध्यम से ब्रिटिश शासन में इन समुदायों के बीच अपनी पहचान बनाने तथा इन मिशनरीज ने उनके स्वास्थ्य एवं शिक्षा से संबंधित विभिन्न बिंदुओं पर उन्हें जागरूक बनाया और स्वास्थ्य एवं संबंधित उनकी समस्याओं के साधन तथा मुख्य धारा की अधिकारिक शिक्षा पद्धति में उनको शामिल किया।

इस प्रकार यद्यपि ब्रिटिश शासन द्वारा किए गए यह कार्य जनजातीय असंतोष एवं तनाव को नियंत्रित किए गए प्रयास थे परंतु इन प्रयासों से जनजातीय विकास के प्रथम सीमा का प्रादुर्भाव हुआ। इसी कारण खण्ड में जनजातियों को चिह्नित कर उन्हें सूचीबद्ध किया गया और स्वतंत्रता के पश्चात भारत के संविधान में इन्हीं समुदायों को अनुसूचित जनजाति के रूप में सूचीबद्ध किया गया। वे सभी समुदाय जो संविधान की पांचवी एवं छठवीं अनुसूची में सूचीबद्ध हैं। अनुसूचित जनजाति को श्रेणी में आते हैं एवं इनके विकास हेतु विशेष प्रयास के प्रावधान भी है। हमारे देश के विशेष आवश्यकता वाले या पिछड़े वर्ग (Wekarsection) में अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़े वर्ग, महिलाएं एवं अल्पसंख्यकों को रखा गया है अर्थातः इन समुदायों के विकास हेतु विशेष प्रयासों को हमारे विकास के मॉडल में प्राथमिकता दी जाती है। स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे देश के विकास की पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से नियोजित किया गया और इन सभी योजनाओं में जनजातीय विकास को प्राथमिकता दी गई है।

वैश्विकशास्त्र पर परिवर्तन की तमाम प्रक्रियाओं का प्रभाव भी हमारे देश के विकास के स्वरूप एवं प्रकृति पर पड़ा है। वैश्विकरण एक ऐसी ही प्रक्रिया है जिससे हमारे देश में नियोजित परिवर्तन को नई दिशा एवं विकास के अलग-अलग मॉडल अपनाने हेतु प्रेरित किया है, जिस सदेख जनजातीय विकास भी इससे अछूता नहीं है।
भारत में जनजातीय विकास हेतु समाज वैज्ञानिकों द्वारा अलग-अलग उपागम सुझाए गए हैं। जैसे वैचिट केल्विन ने अलगाववादी उपागम (Isolation approach) का सुझाव दिया एवं यह कहा कि जनजातीय संस्कृति सर्वथा भिन्न एवं विशिष्ट संस्कृति है जिसको विकास के नाम पर नष्ट नहीं किया जाना चाहिए। इसी आधार पर उन्होंने जनजातीय विकास हेतु जनजातीय उपवन का सिद्धांत (National Public Park Theory) हेतु जनजातीय उपवन का सिद्धांत दिया। जी.एस.पूर्णिए इससे अलग एकीकरण (Interogation approach) उपागम को महत्वपूर्ण मानते हैं एवं जनजातियों को गैर जनजातीय समुदायों के साथ विकास की प्रक्रिया में शामिल करने पर बल देते हैं। इसी प्रकार डी.एन. मह्मूददार चयित एकीकरण (selected interogation) के उपागम के पक्षधर हैं, आपके अनुसार जनजातीय समुदायों के नृजातीय पहचान (Ethnic Identity) को क्षतिग्रस्त नहीं होने देना चाहिए। विकास की मुख्यधारा में इनकी समयांतर संस्कृति के सभी तत्वों को शामिल नहीं किया जाना चाहिए बल्कि कुछ जनजातीय जीवन के उन्हीं पक्षों को विकास की प्रक्रिया में शामिल किया जाना चाहिए। अर्थात् जनजातीय जीवन को विकास देते हेतु आवश्यक है।

समाज वैज्ञानिकों का एक समूह ऐसा भी है जो जनजातीय विकास हेतु समाधान साधन के उपागम (Assimilation Approach) को आवश्यक मानता है इनके अनुसार जनजाति संस्कृति भी भारत के गैर जनजातीय समुदाय संस्कृति की ही भांति है और वे भी अन्य समुदायों के भांति भारतीय समाज का हिस्सा हैं। अर्थात जनजातियों के लिए, विशेषज्ञता के आधार पर, उन्हें अन्य समुदायों के साथ शामिल करना चाहिए। उपर्युक्त सभी उपागम जनजातीय जीवन में किये गए, गहन अध्ययनों का परिणाम है आर्थिक जनजातीय समस्याओं के समाधान हेतु समुचित एवं सटीक प्रयास किए जाएं। इसके लिए आवश्यक है कि एक से अधिक उपागमों को ध्यान में रखकर जनजातीय विकास सुनिश्चित किया जाए।

विकास की प्रक्रिया में आगे बढ़ रहे अनु देशों की भाँति हमारे देश में भी समस्या विकास राष्ट्रीय विकास का लक्ष्य है। अर्थात् देश के सभी समुदायों का विकास समन सूची एवं समान गति से हो इस हेतु प्रयास किए जा रहे हैं। एंथ्रोपोजीम रूप से जनजातीय समुदाय विकास की मुख्य धारा से दूर होते गए एवं इन समुदायों में कुछ विशेष प्रकार की समस्याएं भी उत्पन्न हुईं। जिनमें अशिक्षा, स्वास्थ्य की समस्या, उद्योग, चिकित्सा, बेरोजगारी इत्यादि प्रमुख समस्याएं हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात जनजातीय विकास हेतु व्यापक स्तर पर प्रयास किए गए एवं बड़ी संख्या में जनजातीय विकास योजनाएं संचालित की गईं जिनके सकारात्मक परिणाम भी प्राप्त हो रहे हैं, परंतु अभी भी जनजातीय विकास हेतु अनवरत प्रयासों की आवश्यकता है।
4.4.2 जनजातीय समस्याएँ

निर्मलिखित जनजातीय समस्याएँ इस प्रकार हैं-

4.4.2.1 ऋणप्रस्ताता (Indebtedness)

भारतीय जनजातियों की समस्याओं में संभवतः ऋणप्रस्ताता की समस्या सबसे जटिल है, जिसके कारण जनजातीय लोग साहूकारों के शोषण का शिकार होते हैं। ठेकेदारों तथा अन्य लोगों से सीधे संपर्क के कारण उत्तर-पूर्व के कुछ क्षेत्रों को छोड़कर समस्त भारतीय जनजातीय जनसंख्या ऋणों के बोझ से दबी हुई है।

इस ऋणप्रस्ताता का कारण है, निर्धनता, भूखमरी तथा दुर्बल आर्थिक व्यवस्था। नृजातीय अध्ययनों तथा प्रमाणों से यह स्पष्ट पता चलता है कि ठेकेदारों तथा अन्य लोगों के द्वारा इनके क्षेत्रों में हस्तक्षेप से पूर्व ये जनजातियों इतनी दुर्बल, निर्धन तथा विवश नहीं थीं। ये लोग आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर थे। वन सम्पत्ति पर इनका अधिकार था। दुर्भाग्यवश जब आर्थिक विकास की योजनाओं के अंतर्गत जनजातीय क्षेत्रों में विकास का झांका आया तथा इनके क्षेत्र सभी प्रकार के लोगों के लिए खोल दिए गए, तो विकास का लाभ उठाने के लिए ये जनजातियों तैयार नहीं थीं। अधिकतर जनजातियों में ऋणवंशियक होना इनके जीवन का अभिन अंग बन चुका है। सभी जनजातीय समुदायों की ऋणप्रस्ताता के कुछ मुख्य कारण हैं:

1. भूमि तथा वनों पर जनजातीय अधिकारों का हनन
2. कृषि के पुराने तरीकों के कारण कम उत्पादन
3. उपेक्षा तथा जहाजा
4. विवाह, मृत्यु, मेलों तथा उत्सवों में अपनी श्रमिकता से अधिक व्यय करने की प्रवृत्ति
5. भायवादी प्रवृत्ति व संकुलित विचारधारा
6. परंपरागत सामुदायिक पंचायत एवं जुम्माना

उपरोक्त स्थितियों के कारण जनजातीय लोगों को सदैव रूप पर आवश्यकता रहती है, जिसके कारण यह लोग आसानी से साहूकारों के शोषण का शिकार हो जाते हैं। समय-समय पर लिए गए, कृषि, जिनकी व्याप्त दौर बहुत अधिक होती हैं मिलकर ऐसी धनराशि में परिवर्तित हो जाते हैं जिसे वापस करना इनके सामार्थ्य से घर होता है, जिसके फलस्वरूप इनकी भूमि साहूकारों द्वारा ली जाती है।

4.4.2.2 भूमि हस्तांतरण (Land Alienation)

नवीनतम अँकों के अनुसार जनजातीय जनसंख्या का लगभग 88 प्रतिशत भाग कृषक है। जनजातियों का अपनी भूमि से बहुत भावनात्मक लगाव रहता है। जीवनसाधन के लिए कृषि ही एक ऐसा साधन है जिस पर ये लोग निर्भर नहीं हैं। अनुभूति व अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्ट में इन स्थितियों का वर्णन स्पष्ट रूप से किया गया है।
भूमि हस्तांतरण जैसी समस्या के मूल में पहुँचने से पूर्व सामान्य स्थितियों का विवरण देना अनुचित न होगा। संचार व्यवस्था में विस्तार होने के कारण समस्त जनजातियों के लिए खुल गया। ये बाहरी वर्ग इन क्षेत्रों में अपने-अपने उदेश्यों व स्वरूप तथा साथ प्रवेश कर गया। इनमें से भूमि अधिग्रहण करने वाले शाखाधारी लोगों ने जनजातियों को सबसे अधिक परेशान किया।

भूमि अधिग्रहण के कारण - धन की कमी भूमि हस्तांतरण के मूल कारणों में से एक है। जब से ये जनजातियों सम्भव समाज तथा इसकी विभिन्न संस्थाओं के संपर्क में आयी, धन की कमी के कारण उनकी भूमि का हस्तांतरण बढ़ता गया। विवाह, उत्सव, कपड़ों, मदिरा तथा अन्य आवश्यकताओं के लिए जनजातियों को सदैव धन की आवश्यकता रहती है। इस प्रकार भूमि हस्तांतरण से सहायक तथा दुकानदारों के अर्थकर्म पूर्व पूर्व भूमिका निभाते हैं। साहूकार इन्हें किसी भी समय, किसी भी उद्देश्य के लिए, बिना सस्ताने बोर्ड जमानत के अर्थ देने को तैयार रहते हैं। उपरोक्त तत्वों को ध्यान रखते हुए ये लोग बढ़ी हुई व्यावसायिक दृष्टि पर भी सहायकों से ही अर्थ लेना अधिक सुरक्षित समझते हैं।

4.4.2.3 अस्थायी कृषि (Shifting Cultivation)

भारतीय जनजातियों में अस्थायी कृषि का प्रचलन बहुत पुराना है। अस्थायी कृषि का अर्थ है कि कुछ समय तक एक भूमि पर कृषि करना तथा फिर उसे खाली छोड़ देना। इसके अंतर्गत जंगली हल्दियों की सफाई, पिट हुए पेड़ों तथा पत्तों को जलाना तथा फिर राख से ढ़की भूमि पर बीज को बोने जैसे कार्य होते हैं। इनके बाद सब कुछ प्रकृति पर निर्भर होता है। यह कार्य अधिकतर ग्रीष्म ऋतु से पूर्व प्रारंभ होता है। अस्थायी कृषि उपरोक्त उद्योग के जनजातियों के रूप में बहुत प्रचलित रही है। इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश व उड़ीसा की बैगा जनजाति भी यह कृषि करती रही है।

4.4.2.4 निर्धंतता

निस्तेजकालीन व्यापक गरीबी भारत के आर्थिक इतिहास में शुरू से ही चली आ रही है। अपनी आर्थिक समस्यांतों का हल करने और सर्वोत्तम विकास करने के हमारे प्रयास हमारी पंचवर्षीय योजनाओं के साथ शुरु हुआ। उन्होंने कई मामलों में देश का काराक्षेत्र भी किया, जैसे टोस और गोशालाविकरण, हरित कृति जिससे देश में आवश्यकता से अधिक खाद्य पदार्थ होने लगा, औसत जीवनाधिकार में वृद्धि हुई मध्य समुदाय में तेजी से वृद्धि हुई। जनजातियों का अर्थक में अन्य नशीली वस्तुओं की लत भी एक गम्भीर स्वास्थ्य समस्या है। अरुणाचल प्रदेश की सिंहासन जनजाति इसका जवळंत उदाहरण है। लगभग 150 वर्ष पूर्व इन लोगों की संख्या ४० हजार थी जो अब लगभग १ हजार रह गयी है। जनजातियों को स्वास्थ्य शिक्षा देना आवश्यक है। अधिकतर जनजातियों अशिक्षित हैं, पंरते चलचित्रों तथा वीडियो केसरों की सहायता से इन्हें स्वास्थ्य तथा सफाई के मूल सिद्धांतों से अवगत कराना चाहिए।
4.4.2.5 मदिरापान (Alcoholism)

जनजातीय संस्कृति में मदिरा (शराब) का विशेष एवं महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में प्रत्येक जनजातीय समुदाय के द्वारा उनके आस-पास के प्राकृतिक संसाधनों एवं वन उत्पादों विशेष प्रकार का स्थानीय पेय (स्वभाव सुपुर्णत) बनाया जाता है। जो व्यापक प्रचार पर उपयोग किया जाता है। वह जनम, विवाह एवं मृत्यु जैसे महत्वपूर्ण संस्कारों में अनिवार्य हिस्सा एवं किसी भी प्रकार की धार्मिक गतिविधि का भी अभिन्न हिस्सा है पंचतुं जब स्थानीय पेय का स्थान देशी शराब (National wine) एवं अग्रेंजी शराब ने ले लिया है। यह मदिरापान, जनजातीय समुदाय की बड़ी समस्या के रूप में सामने आया है। आज ज्यादातर जनजातियों में अन्यायाधिक शराब का सेवन शरीरीय खतरे एवं क्रांति का कारण तो है ही साथ ही यह वैशालिक, परिवारिक एवं सामाजिक विघटन का भी प्रमुख कारण है।

4.4.2.6 आवास एवं स्वच्छता (Housing and Hygiene)

किसी भी समुदाय के आवास एवं स्वच्छता उसके विकास की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। इसके साथ-साथ वातावरण की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। विभिन्न आर्थिक व्यवस्थाओं तथा अलग-अलग जलवायु के साथ-साथ आवास की बनावट भी एक समस्या है। अधिकतर जनजातीय लोगों को प्रकृति ने काफी सुखद उपादन कर दियी है। ये लोग अनुकूल स्थितियों में रहते हैं। जनजातियों में आवासों की उपयोगिता के साथ-साथ उनके क्षमतार्थ पक्ष पर भी ध्यान दिया जाता है। बहुत-सी जनजातियाँ अच्छे मकानों में रहने को एक गरी का विषय मानती हैं। दूसरी ओर कुछ छोटी जनजातियाँ हैं जो आवासों के महत्व पर ध्यान नहीं देती। ये लोग छोटी-मोटी झोपड़ियों में रहते हैं जो बदवै गन्धवर्य से पिरी रहती है। जनजातियों की आवासीय समस्या को सुलझाने में वन विभाग भी वार्तक है। अफसरशाही तथा संक्षेपण दृष्टिकोणों के कारण वन सम्पदा के प्रयोग पर जो रोक लगा दी गई है, उसके कारण सम्पूर्ण वन नीति जनजातीय कल्याण कार्यक्रम में एक बड़ी बाधा के रूप में सामने आई है। आवस्थित वस्तुओं का संकलन करने के लिए किसी वन अधिकारी की स्वीकृति पाना इन जनजातियों के लिए बहुत कठिन हो गया है।

4.4.2.7 शिक्षा (Education) से संबंधित समस्या

अन्य सामाजिक व आर्थिक पक्षों की भीति शिक्षा के क्षेत्र में भी जनजातीय लोग अलग-अलग स्तरों पर हैं। जनजातीय समूहों पर औपचारिक शिक्षा का प्रभाव बहुत कम पड़ा है। सरकार द्वारा अधिक अनुमोदन या अधिक स्कूल खोलने तथा शिक्षा पर अधिक व्यय करने से भी जनजातीय लोगों की शिक्षा पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ा है। इस प्रकार की शैक्षिक नीतियों के निर्धारण में सामाजिक पक्ष बहुत महत्वपूर्ण होता है। जनजातियों के लिए केवल औपचारिक शिक्षा की अधिक आवश्यकता नहीं है। इनके लिए ऐसी शिक्षा नीति लाभदायक
होगी जिसके अंतर्गत उन्हें शिक्षित करने के साथ-साथ उनके अंधविश्वासों तथा पूर्वग्रस्तों को भी दूर किया जाना।

जनजातियों द्वारा शिक्षा की ओर कम ध्यान देने के आधिकारिक कारण भी है। अधिकतर जनजातीय परिवार इतने निर्धार हैं कि वे लोग अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज सकते हैं। एल्वन (1963) के अनुसार “एक जनजातीय परिवार के लिए अपने बच्चों को स्कूल भेजना आवश्यक रूप से आधिकारिक स्थिति पर निर्भर करता है। इससे उनके जीवनसाधन के संपर्क तथा पारंपरिक श्रम विभाजन की योजना गड़बड़ा जाती है। बहुत से माँ-बाप ऐसी स्थिति में नहीं होते कि अपने बच्चों को स्कूल भेज सकें।”

4.4.2.8 औपचारिक शिक्षा में रूचि की कमी

एल.आर.एन. श्रीवस्तव (1968) ने इस समस्या पर व्यावहारिक विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि “आधुनिक समय से दूर अलग तथा दूरवर्ती क्षेत्रों में रहने वाला जनजातीय बच्चा देश के भूगोल व इतिहास, औद्योगिक प्रगति, तकनीकी विकास, महत्वपूर्ण व्यक्तियों के प्रति कम रूचि रखता है। उसे तो अपने पहुँच समुदायों, जनता जीवन, सामाजिक संगठन, रीति-रिवाज, विधि-विधा तथा पंपराओं के विषय में जानकारी देने वालों की आवश्यकता है। उसके पत्र देने वाले संस्थाओं की आवश्यकता है। इस ग्रामीणवाद से उसके गांव, राज्य, देश तथा विदेशों से संबंधित जानकारी उसके विकास में सहायक होगी।” एस.एन. रथ (1981) ने यह सुझाव दिया कि “पारंपरिक रूप से प्रशिक्षित एक जनजातीय बच्चा अपने वातावरण से पूर्ण रूप से अवगत होता है। वह अपने पर को बनाना, खेती करना, कपड़ा बुनना आदि ऐसे सभी कामों से परिचित होता है। अतः एक ऐसे पाठ्यक्रम तथा प्रणाली की संरचना होनी चाहिए जो जनजातीय परंपराओं, रीति-रिवाजों, स्थानीय आवश्यकताओं तथा राष्ट्रीय शिक्षा योजना में एक संतुलन स्थापित कर सकें। ऐसे पाठ्यक्रम में शिल्पकलाओं को महत्व देने के साथ-साथ श्रम के समान की भावना, सहकारिता तथा सामाजिक अनुशासन जैसे आवश्यक पक्षों पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

ऐसी योजनाएं बननी चाहिए जिनकी सहायता से माता-पिता तथा स्कूल व शिक्षकों के बीच संबंध स्थापित हो सकें। अगले-अगले शिक्षा के साथ-साथ स्कूलों में प्रारंभिक तकनीकी ज्ञान भी दिया जाना चाहिए। इसके लिए इन स्कूलों को सामाजिक परिवर्तन का एक प्रभावी केंद्र होना चाहिए। इस प्रकार की आदर्श योजना की सफलता समृद्धि रूप से प्रशिक्षित और समर्पित शिक्षकों पर ही निर्भर करती है। शिक्षक-जनजातियों की शिक्षा के धीमे विकास का एक महत्वपूर्ण कारण है उपयुक्त शिक्षकों की कमी। अधिकतर गैर-जनजातीय शिक्षक, जो जनजातीय बच्चों को पढ़ाते हैं, अधिकतर जनजातीय समुदायों से ही शिक्षकों का चयन करना चाहिए या शिक्षकों का एक पृथक समूह बनाना चाहिए जो जनजातीय क्षेत्रों में जाकर उनकी शैक्षिक आवश्यकताओं की पूरी कर सकें।
4.4.2.9 संचार (Communication)

संचार से जनजातियाओं दूरवति तथा अलग-अलग क्षेत्रों में रहती आयती हैं। संचार माध्यमों की कमी इसका मुख्य कारण है। जनजातिय शिक्षकों के विकास तथा वहां की आर्थिक स्थितियों में सुधार करने के लिए संचार व्यवस्था का होना अत्यन्त आवश्यक है।

जनजातिय क्षेत्रों में संचार व्यवस्था की समस्या को प्रत्येक समुदाय के स्तर पर अलग तरीके से समझने की आवश्यकता है। यह आवश्यक नहीं है कि एक समुदाय की जो समस्या है वह दूसरे की नहीं। अर्थात इस बात को उसकी आवश्यकतानुसार संचार के साथ प्राप्त हो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए। संचार व्यवस्थाओं के विस्तार की कुछ हानियाँ भी हैं। इन व्यवस्थाओं की सहायता से बहुत से बाहरी तत्वों का इन क्षेत्रों में आकर सीधे-सीधे जनजाति का लोगों को सोपित करने का अवसर मिल जाता है।

4.4.2.10 भूखमरी एवं शोषण (Starvation & Exploitation)

भूखमरी तथा शोषण विश्वभर की जनजातियों के मूल समस्या है। भारत में यह समस्या गंभीर रूप से व्याप्त है। आधुनिक तथ्य यह है कि हमारी कुछ जनजातियां ऐसे क्षेत्रों में रहती हैं जो अस्थायी पिछड़े इलाके होते हैं वे जहां निवास करते हैं वहां वन तथा खरिजों के प्राकृतिक संसाधन से भरे पड़े हैं। परंतु स्वतंत्रता के बाद शासन के हस्तक्षेप एवं बन्य संस्करण हेतु चलाई जाने वाली योजनाओं के कारण जनजाति की जीवन में अनेक विकल्प उपलब्ध हुए। प्राकृतिक संसाधन के कारण जनजाति की उपयोग करने में असमर्थ होने लगे जिससे इनके बीच भूखमरी एवं शोषण की समस्या मुख्य रूप से पाई जाने लगी।

4.4.2.11 बेजोगारी और अविकास (Unemployment & Underdevelopment)

जनजातीय समुदाय पिछड़े एवं अविकसित क्षेत्रों में निवास करते हैं तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बनों पर आश्रित होते हैं। अनशित होने के कारण इन्हें उचित रोजगार प्राप्त नहीं होता इस कारण यह अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ होते हैं। यह अपनी इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ होते हैं और अपने आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ होते हैं। जिससे इनकी आर्थिक स्थिति अत्याधिक निम्न होती है। जिससे यह अपनी विकास नहीं कर पाते और इसलिए विकास की मुख्य धारा में बहुत अधिक पिछड़े हुए हैं।
4.4.2.12 मानव तस्करी (Human Trafficking)

मानव तस्करी आयुर्विज्ञान में गंभीर समस्या है। शारीरिक शोषण और देह व्यापार से लेकर बढ़ता मजबूती तक के लिए मानव तस्करी की जाती है। ड्रग्स और हथियारों के बाद दुनिया की तीसरी गंभीर समस्या मानव तस्करी है। 80 प्रतिशत मानव तस्करी यौन शोषण के लिए की जाती है। मानव तस्करी में अधिकांश बच्चे बहादुर गरीब इलाकों के होते हैं। ज्यादातर लड़कियाँ भारत के पूर्वी इलाकों के अन्दरूनी गांव या जंगलों से होती हैं। अत्याचारियं गरीबी, शिक्षा की कमी और सरकारी नीतियों का ठीक से लागू न होना ही बच्चों को मानव तस्करी का शिकार बनने की सबसे बड़ी वजह बनता है।

4.4.2.13 प्रवास (Migration)

विश्वभर में लगभग सभी समुदायों को, विशेष रूप से आदिव समुदायों को, अपनी जमीन व मूल निवास स्थान से गहरा भावनात्मक संबंध रहा है। इसलिए हम देखते हैं कि जनजातीय प्रवास सामान्य परिस्थितियों में नहीं होता। जनजातीय संरचनाओं में प्रवास की अवधारणा बहुत पुरानी नहीं है। संचार साधनों के विकसित होने के बाद प्रवास की समापनाएं बढ़ी। जनजातीय प्रवास को दो तत्त्वों में समझा जा सकता है। पहला, उन कारकों के माध्यम से जो किसी जनजातीय समूह को बाहर की ओर धकेलते हैं और दूसरा, उन कारकों के माध्यम से जो किसी जनजातीय समूह को अपनी ओर खींचते हैं या उन्हें आकर्षित करके अपना मूलस्थान छोड़ने के लिए उकसाते हैं। बहुत से समाज विज्ञानियों का मत है कि इस प्रकार का प्रवास एक प्राकृतिक व तर्कसंगत घटना है जिसमें, श्रम के कम क्षेत्रों से बहुतायत व अधिकता वाले क्षेत्रों की ओर प्रवास आवश्यक है। इस प्रकार जनजातीय प्रवास स्थायी भी हो सकता है तथा अस्थायी भी।

4.4.3 स्वास्थ्य एवं स्वच्छता (Health&Hygiene)

जनजातीय समुदाय के व्यक्ति अशिक्षित होने के कारण अपने स्वास्थ्य एवं स्वच्छता पर बिलकुल भी ध्यान नहीं देते हैं। अच्छी स्वच्छता, व्यक्तिगत स्वच्छता ने केवल स्वास्थ्य स्व-छोड़ो को बनाए रखने में मदद करती है। बल्कि संक्रमण और बीमारी के प्रसार को रोकने में महत्वपूर्ण है। शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारक किसी व्यक्ति की क्षमता या अच्छी स्वच्छता के लिए आवश्यक स्व-देखभाल कार्यों को करने की इच्छा को प्रभावित कर सकते हैं। जनजातीय समुदाय के व्यक्ति स्वच्छता से अत्यधिक दूरी बनाकर रखते हैं। उन्हें स्वस्थ्य एवं स्वच्छता के प्रति कोई भी जानकारी या जागरूकता नहीं होती है। इसके आवास के आस-पास स्वास्थ्य को हानि पहुँच आता वातावरण होता है। जिससे इसके स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इस कारण जनजाति समुदाय में स्वास्थ्य एवं स्वच्छता एक गंभीर समस्या है।
4.4 भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जनजातीय विकास

भाषात्मक व्यवस्था

राजनीतिक व्यवस्था

संविधान संशोधन सभा ने अपने उद्देश्यों को व्यक्त करते हुए कहा कि कमजोर व पिछड़े वर्गों को विकास के विशेष अवसर प्रदान किए जाएं ताकि ये वर्ग देश की मुख्य धारा में अपने आपको समावेश कर सकें तथा इनकी जीवन पद्धति कम से कम औसत ग्रामीण स्तर तक पहुँच जाए। भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जनजातीय विकास हेतु देश में किए गए प्रयासों को अध्ययन की सुरक्षा की आवश्यकता का मानक दर्ज कर देने के लिए तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:

- राजनीतिक व्यवस्था
- संविधानिक व्यवस्था
- विकासात्मक गतिविधियाँ

A. राजनीतिक व्यवस्था

राजनीतिक व्यवस्था संविधानिक प्राधिकृत आदेशाओं समाजों को अन्य समाजों की अपेक्षा विशेष सुरक्षा प्रदान करते हैं। ये निम्नलिखित हैं:

- अनुंच 15 में अनुसूचित जनजातियों के साथ इसी भी प्रकार के विशेष व्यवस्थापन को बढ़ावा दिया जाता है। इसी के खण्ड 4 के अंतर्गत अनुसूचित जनजातियों को विकास के लिए विशेष व्यवस्था का प्राधिकृत किया गया है।
- अनुंच 16 में दी गई अवसर की समानता के बावजूद इसी के खण्ड 4 के द्वारा राज्य पिछड़े वर्गों की व्यवस्था के लिए नीति नीति अभाव का भेदभाव किया गया है।
- अनुंच 23 के द्वारा बेगूसराय राज्य विभाग के प्रतिवर्षित किया गया है। इस राज्य विभाग के लिए नौकरीय मामलों का समानता की उपलब्धि की जा सकती है।
- अनुंच 29 आदेश संसद के आदेश विभाग के अनुसार भाषा, विश्वास, संकल्प, संस्कृति का समानता की सुरक्षा का आधिकारिक प्रदान किया है।
- अनुंच 46 आदेशाओं के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों की सुरक्षा हेतु राज्य से विशेष व्यवस्था का आधार किया गया है।
- अनुंच 164 विषय, उद्योग, चौतीस राज्य, मध्य प्रदेश राज्यों में आदेशाओं के हितों तथा कल्याण के लिए एक जनजातीय कल्याण मंडल की नियुक्ति का प्रारंभ करता है।
- अनुंच 275 को आधार बनाकर केंद्र सरकार राज्यों के जनजातीय कल्याण एवं विकास कार्यों के नियुक्ति पर राज्य ध्यान देता है।
• अनुछेद 330, 332 तथा 334 के द्वारा संसद एवं राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए स्थान आरंभित किए गए हैं।

• अनुछेद 335 के द्वारा अनुसूचित जनजातियों के लिए शासकीय सेवा में 7.5 प्रतिशत स्थान आरंभित किए गए। इसके साथ-साथ आयु सीमा में छूट, अर्थवान्य मानदंड में छूट, पदोन्नति में छूट तथा अन्य तकनीकी स्तरों पर छूट के प्राधिकार किए गए हैं।

• अनुछेद 338 में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के क्षेत्र में हेतु राष्ट्रपति द्वारा आयुक्त की नियुक्ति का प्राधिकार है। जिसका दायित्व संविधान द्वारा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों का प्रदत्त मुक्ति करना, जनजातियों तथा राज्य सरकारों से संपर्क बनाए, रखना, उनके कार्यक्रमों की जांच करना तथा योजनाओं के लिए मार्गदर्शन देना आदि है। यह आयुक्त प्रतिवर्ष राष्ट्रपति को अपना प्रतिवेदन भी भेजता है जिसमें अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन तथा अनुसूचित जनजातियों के क्षेत्र के संबंध में उपलब्धियों एवं कठिनाइयों को वर्णित किया जाता है।

• अनुछेद 339 संघ सरकार को अधिसूचित क्षेत्रों में निवास करने वाले आदिवासियों के प्रशासन का अधिकार प्रदान करता है।

• अनुछेद 340 जनजातियों को सरकारी शिक्षण संस्थाओं में नामांकन तथा अध्ययन के लिए आरोपण का उपबंध करता है।

• अनुछेद 342 के माध्यम से राष्ट्रपति जनजातियों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा प्रदान करता है।

1. पृथक प्रशासनिक व्यवस्था

जनजातियों के समुदायों के संघ समाज से कटा हुआ तथा सदियों से पिछड़ा है। साथ ही इस समुदाय की अपनी पृथक संकृति, परंपरा एवं भिन्न पहचान रही है। इसी कारण भारतीय संविधान में जनजातियों के लिए शेष समाज से भिन्न प्रशासनिक व्यवस्था का प्राधिकार संविधान की पाँचवी एवं छठी अनुसूची में किया गया है।

2. अनुसूचित क्षेत्र

संविधान के अनुच्छेद 244 तथा 244(1) में अनुसूचित क्षेत्रों तथा जनजातियों के प्रशासन का प्राधिकार है। संविधान की पाँचवी अनुसूचि के अनुसार भारत का राष्ट्रपति किसी भी राज्य का कोई क्षेत्र "अनुसूचित क्षेत्र" घोषित कर सकता है। 1977 से अब तक दो राष्ट्रपतियों ने अनुसूचित क्षेत्र घोषित किए हैं। ये क्षेत्र निम्न नौ राज्यों में हैं- आंध्र प्रदेश, झारखंड, गुजरात, हिमालय प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान और छत्तीसगढ़। इन अनुसूचित क्षेत्रों के गठन के पीछे मुख्यतः दो उद्देश्य रहे हैं- पहला लघु
प्रक्रिया तथा बिना बाधा के आदिवासियों की सहायता करना तथा दूसरा, अनुसूचित क्षेत्रों को विकास के पथ पर लाना एवं जनजातियों के हितों की रक्षा करना।

गौरतलब है कि चोटिल अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्य के राज्यपाल को विशेष और व्यापक अधिकार प्राप्त होते हैं। राज्यपाल ही यह तय करता है कि संसद या विधान मण्डलों द्वारा पारित कानून इन क्षेत्रों में लागू होगे या नहीं। राज्यपाल इन क्षेत्रों में शासन बनाए रखने एवं प्रशासन के बली-भाँति संचालन के लिए निम्नम भी बना सकते हैं। भूमि स्थापण करना रोकना, भूमि आवंटन को नियंत्रित करना, साहित्यों के गतिविधियों को रोकना आदि ऐसे विषय हैं, जिनपर राज्यपाल कार्यवाही कर सकते हैं। पाँचवी अनुसूचि के क्षेत्र 4 में अनुसूचित क्षेत्र वाले प्रत्येक राज्य में आदिवासी सलाहकार समिति के गठन का प्राधिक है। राज्यपाल के निर्देश पर अन्य राज्यों में भी, जहाँ अनुसूचित क्षेत्र नहीं हैं, आदिवासी सलाहकार समिति के गठन का प्राधिक है। तमिलनाडु तथा पश्चिम बंगाल ऐसे ही दो राज्य हैं, जहाँ अनुसूचित क्षेत्र नहीं होने के बावजूद वहाँ आदिवासी सलाहकार समितियाँ गठित हैं। आदिवासी सलाहकार समिति में अधिक से अधिक 20 सदस्य हो सकते हैं। इस समिति का यह दायित्व है कि वह आदिवासी कल्याण तथा प्रशासन के संबंध में राज्यपाल को सलाह दे। पाँचवी अनुसूचि के खंड 4 में यह प्राधिक है कि राज्यपाल आदिवासी सलाहकार समिति की गतिविधियों से संबंधित प्रतिवेदन राज्यपाल के पास भेजता है।

3. आदिवासी क्षेत्र

आदिवासी क्षेत्र एक अर्थ में तो अनुसूचित क्षेत्र है, किंतु संवैधानिक भाषा में आदिवासी क्षेत्र ने हैं जो संविधान की छठी अनुसूचि में घोषित किए गए हैं। ये क्षेत्र हैं- असम, मेघालय, मिजोरम तथा जिमुक्त। इन राज्यों में आदिवासी क्षेत्रों के प्रशासन हेतु स्वायत्त जिला एवं क्षेत्रीय परिषदें का गठन किया जाता है। प्रत्येक स्वायत्त जिले के प्रशासन के लिए एक-एक जिला परिषद की स्थापना की जाती है। जिला परिषद के सदस्यों की संख्या अधिक से अधिक 30 होती है, जिनमें से चार दिवाली राज्यपाल मनोनीत करता है। राज्यपाल चाहे तो वह सभी चुनाव क्षेत्रों को आदिवासियों के लिए आर्थिक कर-आदिवासी लोगों को चुनावी प्रतिनिधियों पद से चुना सकता है।

4. विकासात्मक गतिविधियाँ

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में आर्थिक एवं सामाजिक विकास में गति लाने के लिए प्रशासन की ओर से पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से वृद्धि द्वारा समय पर प्रशासन कल्याणकारी योजनाएँ लागू की गई। इन पंचवर्षीय योजनाओं में आदिवासी समुदायों के कल्याणार्थ समुचित धनराशि की व्यवस्था की गई। 1951 से 2007 तक देश में 10 पंचवर्षीय योजनाएँ पूर्ण हो चुकी हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में स्पष्ट रूप से यह सिद्धांत प्रतिपादित किया गया कि सामान्य विकास कार्यक्रमों को तैयार करने के समय पिछड़े वर्गों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। साथ ही अनुसूचित
जनजातियों के लिए अति रुपरेख के तथा गहन विकास हेतु विशेष उपाध्यो का प्रयोग किया जाना चाहिए। दूसरी 
पंचवर्षीय योजना में मुख्यतः: अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक और आर्थिक समस्तों को समझते हुए 
नीतियों बनाई गई। वास्तव में यह आयोजन देश के प्रथम प्रथम क्षेत्र पंजवार्षिक लाल नेशन द्वारा प्रतिप ारित 
पंचवर्षीय के सिद्धांतों की दर्शनिक प्रभावित पर आधारित थी। इस योजना के अंतर्गत देश में सर्वप्रथम 43 
बहुउद्देशीय आदिवासी विकास खण्ड स्थापित किए गए।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्त में विशिष्ट बहुउद्देशीय आदिवासी विकास खण्डों तथा 
आदिवासी विकास के अन्य कार्यक्रमों का मूल्यांकन राष्ट्रीय संवर्ध तथा वेरीयर् एल्विन एवं ढेबर आयोग 
द्वारा किया गया। एल्विन समिति ने अपने अध्ययन में इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार कि 10 वर्षों में 
इतने ज्ञान के बहुउद्देशीय कार्यक्रमों चलाए गए कि स्वतंत्र अधिकारी रूप में हो गए तथा यह निश्चित नहीं कर पाए, 
कि कब क्या कहे कौन सा कार्यक्रम पहले चलाए। साथ ही “योजनाबद्ध बजट पद्धति” के कारण एक योजना 
का धन दूसरी योजना पर चेतावनी नहीं कर पाए, इस कारण भी धन का अधिक अपमान हुआ। एल्विन कमेटी के 
साथ ही ढेबर आयोग (1960-1961) ने आदिवासियों में व्यास रूप में विभिन्न समाज, निरस्तताएं, आदिवासियों की 
सुरक्षा और विकास हेतु विविध समस्तों द्वारा तीसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ में एल्विन तथा ढेबर आयोग 
के साथ ही चलाए गए जनजातीय अधिकारण सामाजिक सेवा के साथ-साथ आधिकारिक विकास को भी गति प्रदान करेगा।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत लघु एवं सीमित कृषि के लिए कृषि मंत्रालय भारत सरकार 
द्वारा जनजातीय विकास अभिकरण नामक तीन पंचवर्षीय योजना 1974 में आयोजित की गई, जिनमें दो तथा तीसरी 
पंचवर्षीय विकास की सुरक्षा के साथ-साथ आधिकारिक विकास को भी गति प्रदान करेगा। लेकिन वास्तविकता में यह वे 
कृषि योजना बनकर रह गई और अंतर्यंत्रिक विकास में कोई 
विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई।

आदिवासी उपयोजना (1974) चार पंचवर्षीय तथा तीन वार्षिक योजनाओं, अर्थात् 23 वर्षों के 
नियोजन काल के बाद जनजातीय समूहों की समग्र स्थिति का मूल्यांकन करने, इसमें क्रियान्वित 
आदिवासी विकासात्मक कार्यों तथा नीतियों की समीक्षा करने, एवं विवशोधन की रणनीतियों पर प्रकाश डालने 
के उद्देश्य से योजना आयोजित का धन चलाया जाना, यह योजना भारत सरकार द्वारा स्वचालित रूप से 
योजना के प्रारंभ में एल्विन तथा ढेबर आयोग द्वारा योजना के प्रारंभ में 
कोई समिति का गठन किया गया। इसके बाद तीनों भारत सरकार द्वारा नीतियों का गठन किया गया। इसके बाद तीनों 
नीतियों का गठन किया गया। इसके बाद तीनों 
नीतियों का गठन किया गया।

आदिवासी उपयोजना के अंतर्गत किसी विशेष क्षेत्र में रहने वाली आदिवासियों के विकास के साथ- 
साथ क्षेत्र विकास पर भी विशेष ध्यान दिया गया। चूंकि सभी आदिवासी समाज की समस्तों की जड़ में 
रूपांग्रस्तता, शोषण एवं अशिक्षा ही है, ऐतिहासिक रूप से योजना में इन समस्तों के निर्माण को प्राप्तिकर की गई।

5. उपयोजना काल में आविष्कारी विकास

पाँचवी पंचवर्षीय योजना का प्रारूप तैयार करते समय सम्पूर्ण आविष्कारी विकास के प्रश्नों को मुख्यतः तीन दृष्टिकोण से देखा गया। प्रथम, आविष्कारी केंद्रीकरण वाले क्षेत्र, द्वितीय, बिखरी हुई आविष्कारी जातियां और तृतीय, आदिव जनजातीय समूह।

इस अधिनियम का क्रियान्वयन देश के 9 राज्यों- आंध्र प्रदेश, झारखंड, गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा तथा महाराष्ट्र में हो चुका है। इसके अंतरिक्ष का हाल ही में वन अधिनियम 2006 क्रियान्वित किया गया है, जिसके द्वारा अनुसूचित जनजातियों को परंपरागत वन भूमि पर पुनः अधिकार दिया गया है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय संदर्भ में इन 60 वर्षों में आविष्कारी विकास के लिए जो महत्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक कदम उठाए गए, उनमें 1956 में आविष्कारी विकास प्रक्रिया के पाँच मार्गदर्शी सिद्धांत- पंचशील को अपनाना, 1958 में बहुउद्देशीय जनजातीय विकास खण्ड, 1961 में आविष्कारी विकास खण्ड, 1969 में जनजातीय विकास अभिकरण, 1974 में आविष्कारी उपयोजना, 1987 में ट्रायफेड का गठन, 1993 में 73वीं संविधान संशोधन, 1996 में पंचायत अधिनियम 1999 में पृथक आविष्कारी कार्य मंत्रालय का गठन 2001 राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग की स्थापना, 2004 में पृथक अनुसूचित जनजाति आयोग की स्थापना तथा वन अधिनियम 2006 प्रस्तुत है।

4.4.5 विकास नीतियों एवं कार्यक्रम

शासन के स्तर पर संविधान में उल्लिखित विविध प्रावधानों की पूर्ति हेतु विभिन्न समितियों/आयोगों/अधिनियम दलों का गठन किया गया- प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) में आप्रवाहित रूप से यह वात कही गई कि सामान्य विकास कार्यक्रमों की रचना पिछड़े वर्गों के घनीभूत विकास की पृष्ठभूमि में तैयार किया जाने चाहिए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) में यह वादा किया गया कि कमजोर वर्गों को आर्थिक विकास का लाभ अधिक से अधिक मिले जिससे समाज की विषमता को कम किया जा सके। तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66) में इस बात की बकालत की गई कि अवसर की समानता स्थापित की जाए तथा आर्थिक शक्तियों का इस तरह से बिताया हो, जिससे आय एवं पूंजी की असमानता को कम किया जा सके। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969-74) ने यह उद्देश्य निर्धारित किया कि ऐसे तैरत उपाय किए जाए, जिससे लोगों का जीवन स्तर ऊपर उठ सके तथा ऐसे उपाय किए जाए जिससे समानता एवं सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित किया जा सके।
पाँचवी पंचवर्षीय योजना (1974-78) आदिम जाति विकास की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण रही। इसमें आदिवासी उप-योजना का सूचनात्मक हुआ, जो आदिम जातियों का विकास के लाभ सीधे पहुँचाने की दृष्टि से बनाई गई।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) ने वित्त के अधिकतम स्थानांतरण की बात कही, जिससे कम से कम 50 प्रतिशत आदिवासी परिवारों को सहायता प्रदान कर गरीबी रेखा से ऊपर लाया जा सका।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में आदिवासी विकास तत्त्व आवंटित किये जाने वाले वित्त में नियामक वृद्धि की गई। इसमें अर्थ-संरचनात्मक विकास एवं क्षेत्र विस्तार पर जोर दिया गया।

ानवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में आदिवासी विकास एवं सामाज्य जन विकास के स्तर के मध्य की दूरी के बीच सेतु बनाने का प्रयास किया गया, सताब्दी की समाप्ति तक ये पिछड़े वर्ग समाज की मुख्य धारा के स्तर को प्राप्त कर सकें।

नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में इस बात पर बल दिया गया कि आदिवासी लोगों का विकास साधारणीय रूप से होना चाहिए, जिसमें उन्हें अपने अधिकारों के प्रयोग हेतु उचित बातचीत मिले एवं समाज के अन्य लोगों की तरह वे अपने आत्म सम्मान एवं प्रतिद्वंद्व का उपयोग कर सकें।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) में यह कहा गया कि आदिवासी समाज न केवल गरीब, साधन हीन एवं अशिक्षित है, बल्कि सामाज्य समाज के मुकाबले उनकी अक्षमता इस बात में भी उजागर होती है कि यह अपनी बात को पूर्ण क्षमता से रखने एवं एकीकरण की प्रक्रिया से सामना बनाने में भी असमर्थ पाते हैं।

आदिवासी क्षेत्रों में भू-अलगाव, कर्ज आदिवासियों के वन अधिकार, वन ग्रामों का विकास, वन्यजीव अनुसंधान स्थलों तक विस्तार, अधिनियम 1996 के परिपालन में वृद्धि विधि एवं कानूनों का निर्माण, वनरक्षक के निर्माण, अपत्य संरक्षण एवं आदिवासियों का संरक्षण एवं विकास, आदिवासी उपयोजना का भावनी एवं उद्देश्यपूर्ण क्रियान्वयन ऐसे मुद्दे हैं।

देश में बहुत के लिए “विकास” एक दु:स्वप्न सा हो गया है क्योंकि वह ऐसे तरीके से हो रहा है कि वनस्पतियत “लक्ष्य-समुदाय” अथवा जिनके लिए वनस्पति विकास कार्यक्रम किया जाता है, वही प्रगति और विकास का शिकार हो जाता है। यह एक अभावित तथ्य है कि इतिहास में संदेह मानवीय आबादी की पुन: व्यवस्था विकास की साधी रही है, हालांकि उसकी प्रक्रिया को न्याय संगत, मानवीय और जहां तक सम्भव हो स्वयंसेवी होना चाहिए।

विकास के कार्य में भूमि और पानी के इस्तेमाल के प्रकार में परिवर्तन करने की जरूरत पड़ती है और इन परिवर्तनों के कारण अक्सर बस्तियों को विस्थापित करना भी जरूरी हो जाता है। लेकिन जैसा कि माइकल करनिया का कथन है आबादी की इच्छा के बिना उसे उसके स्थान से विस्थापित करने का काम नहीं करना चाहिए या जहां तक हो सके उसे टालना चाहिए यदि परस्परत्व ऐसी हो कि विस्थापित करने के
अलावा कोई दूसरा विकल्प सामने न हो तो विश्लेषित करने के कार्य को इस तरीके से करना चाहिए जिससे विश्लेषित होने वालों की जीविका के साधन का पूरा संरक्षण प्राप्त हो सके।

आजादी के बाद पंचवषय योजनाओं में कार्यान्वयन से प्रति वर्ष लाखो व्यक्ति विश्लेषित हुए हैं। विशेष रूप से प्रशासनीय भूमि अधिग्रहण के परिणामस्वरूप इन योजनाओं से भिन्न परियोजनाओं, भूमि के इस्तेमाल में परिवर्तनों, शहरों के विकास में विकार के कारण जो भूमि अधिग्रहण हुआ है वह इसमें समाप्त नहीं है। इन सबके अलावा परिवेश संबंधी मिराक और जनसंख्या वृद्धि के कारण मनुष्य के जीवनान्वयन में जो विश्रांगितियां आई हैं, वह अलग है। विस्थापन और बस्तियां के विनाश का सबसे बड़ा कारण बल, विचुत, और सिंचाई योजनाय है। अन्य कारण हैं- खाद्य, उष्मा और आणविक शक्ति के बढ़े-बढ़े कारखाने, औद्योगिक बस्तियां, सैनिक संस्थाओं की संस्थापना, अश्व-शाखा परिक्षण के मैदान, नए विकास का दौर, विश्वासयोग्य परिवार, वन परिवार और रसोई, खुले वातावरण के बारे में शिक्षा एवं विकास में तकनीकी हंसंघ जिससे बढ़ रही पामने पर मछुआरों, दस्तकारों और भोजक, बुनकर को अपने स्थान बदलने पड़े हैं। हस्तकारों व कारीगरों के समुदायों पर भी इस बदलाव का बुरा प्रभाव पड़ा है।

1. जीवन का अधिकार

इस मानवीय अधिकारों में सबसे पवित्र और अहम है जीने का अधिकार। परंतु जीने के अधिकार का मतलब जीवनी के पास की ही नहीं है वरन मानवीय स्वास्थ्य के साथ जिन्दगी बस्त करने का है और प्रतिघित जिन्दगी के लिए जरूरी है इस्तान की जिजि आजादी और जीविका के उपयुक्त साधन। इन दोनों ही तत्वों का व्यवहार रूप आधिकार और सामाजिक स्थिति के अनुसार बिल्कुल अलग-अलग हो जाता है। आधुनिक क्षेत्र में इनका जाना माना औपचारिक रूप है जिन्हें जीविका अधिकारों की संज्ञा दी गई है। परंतु परंपरागत व्यवस्था के दूसरे सिरे पर आदिवासी समाज के लिए आज भी वही हालत में ये औपचारिक व्यवस्थाएं बेहतर है। उनकी स्थिति में उनकी अपनी समझ और परंपरा के मुताबिक स्वशासी व्यवस्था इन अधिकारों को व्यवहार रूप में देने के लिए अनिवार्य है।

2. सामाजिक प्रतिष्ठा और आत्म-गौरव

आदिवी के इज़राए और प्रतिष्ठा बनाती है उसके काम से, उसके काम की मान्यता से, उपादन के साधनों पर अधिकार से और अपनी व्यवस्था खुद चलाने के अधिकार से। इन सभी मामलों में अनुसूचित जातियों की हालत पहले से ही बहुत खराब थी। मेहनत उनके हिस्से में आई थी और संसाधन दूसरों के परंतु आजादी के बाद की स्थिति में व्यवस्था और ताकतवर लोगों के गठनों के साथ वे लोग और भी ज्यादा मजबूत हो गए हैं। एक तो उनके पास बचे-खुचे उत्पादन के साधन उनके हाथ से निकलते जा रहे हैं। दूसरे आज गांवों में लगभग आराजकता की हालत है।
3. उत्पादन के साधनों का अधिकार

अधिकतर आदिवासी और अनुपूर्वित जातियों के सदस्य किसी न किसी रूप में वनों एवं कृषि पर निर्भर हैं। परंतु जमीन पर अधिकार के मामले में हालत अभी बहुत दूर तक चिंताजनक है। इस मामले में सबसे ज्यादा गड़बड़ी आदिवासी इलाकों में हुई है, हो रही है। पहले तो कई इलाकों में अभी तक कोई कागजात ही नहीं है, इसलिए गांव में किसी जमीन कहाँ पर है, यह कागज पर नहीं है। दूसरे कानून के ऐसे बहुत से दांव पेंच हैं जो लोगों की समझ के बाहर है। आज के कानून में जिस परिस्थिति का नाम दर्ज नहीं है वह सरकारी मान ली जाती है। इसलिए सरकार जो चाहे कर सकती है। उधर कागज पर नाम चढ़वाने से ही जमीन पर मिलिक्यात हो जाती है। इस बात का बाहर लोगों ने बुरी तरह से फायदा उठाया। आज, कागज ही लोगों के खिलाफ नहीं है, पूरी व्यवस्था ही उनके खिलाफ है। जमीन की जोत और मिलिक्यात की जानकारी तो गांव में ही मिल सकती है, परंतु जमीन के ज्ञान दांव का फैस्ला अदालत में होता है। वहाँ उस नासमझ को इंसाफ मिलने की कोई उम्मीद नहीं रहती। वह कुछ कर भी तो नहीं सकता इसलिए लाचार है।

4. बंधुआ मजदूरी

जिंदगी के अधिकार की सबसे बड़ी अवमानना तो बंधुआ मजदूर के मामले में ही है। सरकारी ऑफिसों और व्यक्ति योजनाओं के बावजूद कई इलाकों में स्थिति बड़ी सौंदर्यी है। तमिलनाडू में कॉफी बागान मालिकों के लिए सोने की खेती है, परंतु उन्हें खुन पसीने से सींचने वाला आदिवासी उनमें "कैद" है। डाटेनगंज और चंपारन में बड़े-बड़े फड़ों में पांच कठा जमीन से बांध दिए जाते हैं मजदूरों के हाथ-पैर।

5. संसाधनों पर अधिकार

खेती की जमीन के अलावा पर्यावरण व्यवस्था में प्रमुख संसाधन वन, चरागाह (पड़ती भूमि) और पानी है। जिन पर आम लोग अपनी जिंदगी के लिए निर्भर हैं। सभी तरह के संसाधनों पर गलत हकदारी अंदेशों के जमाने में ही शुरू हुई थी। उसी जमाने में समाज और व्यक्ति का उन संसाधनों से मां-बेटे का रिश्ता खत्म कर दिया गया और राज्य का उन पर एकाधिकार हो गया।

6. लघु वनोपज

लोगों की भागीदारी के संबंध में लघु वनोपज का महत्वपूर्ण स्थान है। अगर हम भारतीय वन अधिनियम की औपचारिक व्यवस्था के अनुसार भी देखें तो लघु वनोपज पर सरकारी अधिकार गैर कानूनी है, उस पर रॉयटी लगाना अनैतिक है। वनोपज के मामले में पिछले साल मध्य प्रदेश और बिहार में भी आदिवासीयों को "मजदूर की जगह मालिक" का दर्जा देने की घोषणा से उनके प्रांत में योग आईतिहासिक अन्याय को समाप्त करने का पहला महत्वपूर्ण कदम उठाया गया था।
7. वन्य प्राणी

वन्य प्राणियों के प्रबंधन के मामले में भी ये तथ्य की आवश्यकता है और वन्य प्राणियों का सदा से सहअस्तित्व रहा है। धनुष और बाण से वन्य प्राणियों का विनाश नहीं हो सकता है, उनके संहार का असली अपराधी बाहर आ जाती है। इस बात को नजर आना लगता है कि तेज़ी से बिंदु विसंगत स्थिति पैदा हो गई है।

8. स्थायी समाधान की अनिवार्यता

दुर्भाग्य से वनों के प्रबंध में लोगों के सहभागिता की बजाय पूरी-पूरी औपचारिकता निभाई जा रही है। नई वन नीति में सहभागिता का जिक्र नहीं है, परंतु उसके अमल के लिए बाजार और औपचारिक संबंधों को ही आधार माना गया है, इस कारण उस निर्णय का व्यवहार में कोई मतलब ही नहीं रहा है। इस हालात में सरकार और लोगों के बीच तनाव बढ़ गया है, बढ़ता जा रहा है। मध्य क्षेत्र में लगभग सब दूर सरकार और लोगों के बीच तकराव की स्थिति है, और कई इलाकों वन विभाग की अधिकार-सीमा के बाहर हो गए हैं।

9. पड़ती भूमि और बिगड़े वन

संसाधनों पर अधिकार के संबंध में पड़ती भूमि और बिगड़े वनों की ओर खास तौर से ध्यान देना जरूरी है। अभी तक ये संसाधन या तो अनुपजाऊ थे या दूर-दराज के इलाकों में थे। इसलिए अगर गरीब उनसे जुड़ा हुआ था, अपनी जिंदगी वसर कर रहा था तो किसी को कोई एंटराज नहीं था, परंतु अब उनसे भारी मुनाफे की संभावना से सभी की आख़ियाँ उन पर लग गई है। ये संसाधन गरीबों के लिए जिंदगी गुजाने का सहारा है।

10. पानी

पानी के संसाधन के रूप में उपयोग में भी पूर्ंजी का निवेश और केन्द्रीकरण से लोगों की जिंदगी के अधिकार की अनदेखी हो रही है। साधारण आदमी, जो अब तक अपनी मेहनत और अपनी तकनीक का उपयोग करते, पानी का उपयोग कर लेता था, वह उसकी पहुंच के बाहर हो गया है। पानी पर पूंजी और तकनीक के सहारे एकाधिकार करके तकराव लोग उसका निजी फायदे के लिए मनमाना उपयोग कर रहे हैं।

4.4.6 सारांश

प्रत्युत्तर इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आपने जनजातीय समुदाय की प्रमुख समस्याओं की समझ और जनजातीय विकास हेतु चलाई जा रही योजनाओं से भी परिचित हुए।
4.4.7 बोध प्रश्न
लघु उत्तरीय प्रश्न
1. जनजातीय समुदायों की कुछ प्रमुख समस्याओं के नाम लिखिए?
2. भारत के मध्य क्षेत्र में निवासीय जनजातियों के बीच ऋणात्मकता की समस्या का विश्लेषण कीजिए।
3. समकालीन जनजातीय परिदृश्य में आत्मन की समस्या का विश्लेषण कीजिए।
4. जनजातीय विकास से संबंधित योजनाओं के नाम लिखिए।
5. व्यावसायिक अधिनियम (2007) का वर्णन कीजिए।

दीन उत्तरीय प्रश्न
1. जनजातीय समुदाय के संदभ में भारत में मानव तस्करी का विश्लेषण कीजिए।
2. भारत में अनुसूचित त्वरक पर विश्लेषण कीजिए।
3. जनजातीय विकास के प्रक्रमण उपागम विश्लेषण कीजिए।
4. जनजातीय विकास के अलगाववादी उपागम का वर्णन कीजिए।

1.4.8 संदभ ग्रंथ शूष्की
2. दुबे, एस.सी. (1960). मानव और संस्कृति. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
3. एल्लन, बॉयर. (1944). द एपोजिनियस. बॉम्बे: ऑनस्कोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. घूरेन, जी.एस. (1963). द रोडूळ ट्राइस्ट. बॉम्बे: पॉपुलर प्रकाशन।
5. मनोजदार, डी.एन. एवं मदन, टी.एन. (1956). एन इंटररॉक्सन डू सोशल एनप्रोपोलाजी. बॉम्बे: एशियन पब्लिशिंग हाउस।
6. मनोजदार, डी.एन. (1944). रसेस एड ट्राइबल ऑफ इंडिया. दिल्ली: एशियन पब्लिशिंग हाउस।
7. रिजल्स, एच.एच. (1903). सेंसेस ऑफ इंडिया रिपोर्ट. शिमला: गवर्नमेंट ऑफ इंडिया प्रेस।
9. सिह, के.एस. (1994). द शेक्सपियर ट्राइबल. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. श्रीनिवास, एम.एन. (1952). रिलीजन एण्ड सोसाइटी एमेंज द कुर्ज ऑफ साउथ इंडिया। वॉम्बे: एशियन पब्लिशिंग हाउस।
11. श्रीनिवास, एम.एन. (1966). सोशियल चेंज इन मॉडर्न इंडिया। बर्लिन: यूनिवर्सिटी ऑफ केलिफोर्निया प्रेस।


नोट- इस कृति का कोई भी अंश विश्वविद्यालय से लिखित अनुमति लिए बिना पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

पाठ्यपुस्तक को यथासंभव दृष्टिहीन रूप से प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है। संयोजक यदि इसमें कोई कमी या त्रुटि रह गई तो इसके लिए संपादक, संयोजक प्रकाशक एवं मुद्रक का कोई दायित्व नहीं होगा। अवगत कराए जाने पर सुधार करने का प्रयास किया जाएगा।